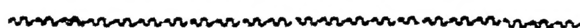
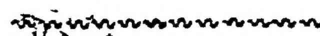
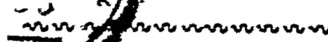
ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन, एम० ए०



प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मंत्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस



द्वितीय संस्करण
१९५६ ई०
मूल्य तीन रुपया



मुद्रक
विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि०,
मानमन्दिर, बनारस

• सुमनोकी सुगधसे लोग पौधेके महत्त्वका अनुमान लगाते है, किन्तु मालीके परिश्रम व स्नेह-को पौधा ही जानता है •

• मै अपने इन काग़ज़के फूलोको 'सरिता-सपादक' श्री विश्वनाथ्को भेट करता हूँ, जिन्होने इनके पौधेको सदा अपने स्नेह-का पोषण दिया है •

—आनन्दप्रकाश जैन

विषय-सूची

लेखककी ओरसे

अनेक मित्र तथा पाठक ममय-समय पर मुझसे यह प्रश्न पूछते रहे हैं कि मैंने कहानियाँ लिखना कैसे सीखा और मेरा कहानियाँ लिखनेका ढग क्या है? मौखिक रूपसे उन सबको एक सुगठित उत्तर देना मेरे लिए सभव नही हो सका, कारण यह है कि वे पूछते हैं 'ढग', न कि कहानी-कलाके तत्त्व। वे अपनी जगह सही हैं। कहानी-कलाके बारेमे तो जितना एक हिंदीके प्रोफेसर महोदय बता सकते हैं, मैं नही बता सकता। वास्तवमे कहानी-कलाका अध्ययन मैंने विधिपूर्वक किया भी नही है।

ढग बतानेके लिए बात आरभसे पकडनी पडेगी। बचपनमे विगत श्री देवकीनदन खत्रीकी चद्रकान्ता, चद्रकान्ता सतति, भूतनाथ आदिका शास्त्रोकी तरह घोट-घोटकर अध्ययन किया, मिस्टर ब्लेकके जासूसी उपन्यास पढे और उर्दूमे नदीम सहबाई साहब और तीरथराम फिरोज़-पुरी साहबकी लेखनीके चमत्कार भी पर्याप्त सख्यामे चखनेको मिले। मैं—जो यह नही मानता कि प्रतिभा जन्मजात होती है—समझता हूँ कि कल्पनाकी सीमाके विस्तृत होनेका श्रेय बहुत कुछ उन पुस्तकोको जाता है। इनके साथ-माथ जब 'माया'मे प्रकाशित बगाली लेखकोके हृदय-स्पर्शी चरित्र मामने आते थे, तो मनमे एक स्पष्ट और तीव्र कामना प्राय हो उठा करती थी—क्या 'माया'मे 'आनन्दप्रकाश जैन'के नामके साथ भी कोई रचना कभी आ सकेगी? लेकिन ये अगूर बहुत दूरके मालूम होते थे। मेरा ख्याल है कि आजकी स्थितिका कुछ श्रेय इस तीव्र कामनाको भी जाता है।

परिवारमे सबसे छोटा होनेके नाते समझिए या बचपनमे माँ तथा बहनका देहान्त हो जानेके बाद पिताजीकी ओरसे निरपेक्ष स्वतन्त्रताका भाव, खुदपमदी और ज़िदकी आदतोके रूपमे सदा मन चाहा काम करनेका

स्वभाव मेरे भीतर पनपा मालूम होता है। बड़े भाईके स्नेहने इन दोनोंकी कमीको आन्तरिक रूपसे तो कभी अनुभव नहीं होने दिया, लेकिन बाहरी आदतोंको, संभवतः बराबरीका दरजा समझनेके कारण, ढीली करनेमें वह सफल नहीं हो सके।

सन् ४१ के आसपासके समयमें कुछ कविता और अधिक कहानियाँ लिखनेका शौक़ चर्राया शरत् साहित्य और यशपालजीकी प्रगतिशील लेखनीके चमत्कारको निरखने-परखनेसे। शरत्को पढ़ता था, तो शरत् जैसा लिखनेको जी चाहता था और यशपालको पढ़ता था, तो वही लिये बैठा रह जाता था। इसी उधेड़बुनमें उस समय जो लिखा वह न शरत् जैसा बन पाया और न यशपाल जैसा। इसी बीच सन् बयालीसके आन्दोलन का सूत्रपात हुआ और शरत्के 'सव्यसाची' तथा यशपालके 'दादा कामरेड' का अव्यवस्थित अनुकरण करते हुए, मात्र एक बारह बोरका देशी पिस्तौल अपने ट्रंकमें रखनेके 'अपराध'में, नकद दो सालके लिए नप गया और ठाटके साथ मुज़फ्फ़रनगर, मेरठ तथा बरेलीकी ज़िला जेलों तथा लखनऊकी कैम्प जेलका दौरा किया। 'ठाट' मैंने हँसीमें नहीं कहा क्योंकि वास्तवमें यह काल मेरे लिए यूनिवर्सिटी-काल सिद्ध हुआ। राजनीतिकी विविध विचारधाराओंका अध्ययन करनेका जितना 'अवकाश' वहाँ मिला उतना शायद विश्वविद्यालयोंमें नहीं मिलता होगा—कम-से-कम यह तो सही है ही कि वह वातावरण वहाँ नहीं मिलता।

धर्मशास्त्रोंका असर मेरे दिमाग़पर बुरी तरह छाया हुआ था। यहाँ तक कि जेल जानेसे पहले यह मेरा संकल्प था कि बिना घंटे भर शास्त्रों का स्वाध्याय किये अन्न मुँहमें नहीं डालूँगा। लिहाज़ा टोडरमलजीका 'मोक्ष-मार्ग प्रकाश' लगभग ज़बानी रट गया था। यहाँ जेलमें राजनीतिके अध्ययनने उस सारे प्रभावको तितर-बितर कर दिया। मानव-समाज तथा व्यक्तिके जीवनमें समाजकी अर्थ-व्यवस्था और राजनीति कितना भारी असर डालती हैं, धर्मकी उत्पत्ति तथा विकास आदिमें इन मूल आधारोंका कितना मौलिक महत्व है, यह सब कुछ जानबूझकर, फिर

आँख मूँदकर हर वात पर विश्वास कर लेनेको तवीयत नही चाही। हर वातको वुद्धिके द्वारा परखनेकी एक सीख, कहना चाहिए आधार, वहाँ मिला।

वाहर आकर दसवीका इम्तहान दिया और वावजूद सारे साल, 'आउट आफ कोर्स' अध्ययन करते रहनेके भी, परीक्षकोने गलतीसे दूसरी श्रेणीमे पास कर दिया। समझा कि यह सव सामान्य ज्ञानकी करामात है और आगे जीवनभर यही काम देगा, इसलिए उसीको सार्थक करनेवाली पुस्तको-का पल्ला और कसकर थाम लिया। निश्चय ही इन पुस्तकोमे समाजवाद और साम्यवादके मूल सिद्धान्तोका गूढ विवेचन था और मै अपनी समस्त वुद्धिसे ससारके गोरखधधोकी वारीकियोको समझनेका यत्न कर रहा था।

कवि अथवा कहानीकार वननेका विचारतक उस समय दिमागमे नही था। अन्य सारा घरवार लूट ले जानेमे भारतीय पुलिसने उन 'महान्' कृतियो को भी नही छोडा, जो शरत्की याद दिलाया करती थी—शरत्के शिष्य उन्हें चाहे होठोपर विकृत मुसकानके साथ ही पढ़ते, यह दूसरी वात है। लेकिन यह वात तो स्वयसिद्ध थी ही कि पुलिसवालोंके हृदयपर उन रच-नाओका कोई लाभकारी प्रभाव नही पडा होगा, इसलिए उस समयके भरपूर सरकारी माल-गोदामके अवारके नीचे वे इस तरह दव गई कि फिर उनका उद्धार नही हुआ।

सन् ४७ तक ऊपर आकाश और नीचे धरती, साथमे दो-चार पुस्तके तथा ढेर सारी पुस्तकें पढनेकी चाह, यही अपना ठिकाना रहा। जहाँ-तहाँ थोडे-थोडे दिन रहकर जमनेकी कोशिश की, लेकिन 'आवारा' लोगो की सूचीमें अपना नाम टँक चुका था। पिताजी चाँदी-सोनेके सट्टेमें सव कुछ गँवाकर परिवारजनोकी ओरसे पहले ही उदासीन वृत्ति अपना चुके थे और भाई साहव व्यावसायिक चित्रकारीसे ज्यो-त्यो जीवनकी गाडीको खींचनेका प्रयत्न कर रहे थे।

सन् '४७ मे शादी हो गई, या कहना चाहिए कि संबंधित परिवार-जनोपर जबरदस्ती जोर डालकर कराई गई, क्योंकि पहली बात तो यह है कि एक लडकी 'पसंद' आ गई थी और उससे भी पहली बात दिमाग़में जमा हुआ यह विश्वास कि जब तक शादी नही होगी, ठिकानेदार नही बना जा सकेगा और आवारगीकी तोहमत सिरपरसे नहीं हटेगी। बहूके लिए सुरक्षित दादीके गहनोपर नजर थी, क्योंकि ठिकाना उन्हींसे बन सकता था। ससुराल 'गलतीसे' ऐसी ढूँढ निकाली थी कि वहाँसे दहेजके नामपर कुछ लेनेकी बात तो अलग रही, लेनेका विचारतक करना परले सिरेकी हिमाकत थी।

अब साइनबोर्ड लिखकर जीविका चलानेका प्रयत्न किया। उसमें कुछ कमाया भी, और कमानेसे ज्यादा खाया। आखिर डेढ साल बाद यह स्पष्ट हो गया कि हाथसे जो साइनबोर्ड लिखे जाते है, उनसे आकर्षित होकर सबंधित दूकानदारोंके पास ग्राहकोका खिचकर आना लगभग असभव है। उसी कालमें, शायद मजबूरीसे, दबी हुई प्रवृत्तियाँ उभरी, और एक कहानी लिखी 'पिटते कुत्ते'।

हाथसे निकली हुई यह—कहना चाहिए पहली—कहानी 'सरिता'को भेज दी गई। विश्वनाथजीने लेखन-शैलीकी थोडी-सी प्रशंसा की, और कहानीको इस आधार पर लौटा दिया कि इसका अत निराशावादी था—साथ ही निर्देश भी था कि यदि अत बदला जा सके, तो कहानी दोबारा उनके पास भेजी जा सकती है। लेकिन अधिकाश नये-नये सूरमाओकी तरह यह बात मुझे नही रुची और कहानी 'माया'के सपादक महोदयके पास' ४७ के दिसबर मासकी कहानी प्रतियोगितामें भेज दी गई। कोई सूचना नही आई और यह बात लगभग दिमागसे निकल गई। लेकिन दिसबर अक देखना नही भूला।

ओह! बचपनसे सजोई तीव्र कामना फलीभूत हो गई थी। 'माया' में 'आनदप्रकाश जैन'की कहानी छप गई थी! लेकिन लेकिन उसपर

लेखकका नाम नही था ।। मुझे आश्चर्य है कि उस समय मैं सीधा डाक्टरके पास क्यो नहीं गया, क्योकि ब्लड प्रेशर सभवत सबसे ऊँचे दरजेपर था। एक करारी चिट्ठी 'माया'के सपादक महोदयको लिखी। कुछ दिनों बाद बडा शान्तिपूर्ण उत्तर आया "पिटते कुत्ते'के लेखक आप ही हैं इसमें हमें सदेह है। इसी कारण आपका नाम उस कहानीपर न छपा। आप फिर लिखे कि क्या वह कहानी सचमुच आपही की है? आपका पत्र आनेपर हम आपको समुचित उत्तर देंगे।"

हिंदीके लेखकोंके साथ ये बाते अवश्यभावी रूपमे बीतती हैं यह बात कुछ-कुछ सुन रखी थी, लेकिन उस कामनाको क्या कहिए, जो दिलमे छिपी पडी थी। बहुत कुछ तर्क-वितर्कोंके साथ सपादक मायाको लिखा कि उन्हे चोरीकी कहानीको साहित्यके ठेकेदारकी तरह नही छापनी चाहिए थी, लौटा देनी चाहिए थी, या छापनेसे पहले यह बात पूछनी चाहिए थी। लेकिन उनका उत्तर निष्काम भावके साथ चुप्पीमें मिला।

प्रकाशकोकी ओरसे सभव इस व्यवहारसे क्षुब्ध होकर स्वय एक पत्रिका 'कल्पना' मेरठमे निकाली। जो दिमागमें आया लिखा। शैली अधिकतर व्यग्यात्मक थी। अधिकाश बडे लेखकोके पास कुछ रचनाएँ भेजनेका अनुरोध भेजा। लेकिन कुछ दूर चलकर ही मालूम हुआ कि रचनाओंकी कुछ कीमत नकद दामोमे होती है और बिना इनके अच्छे लेखकोकी रचनाओ का मिलना कठिन है। 'कल्पना' की योजना बनाते समय न यह व्यय ही जोडा गया था और न उसके प्रचारका व्यय ही जोडा गया था। फलत छ महीने बाद वह ठप हो गई।

अब लिखनेकी ओरसे, साहित्य-सेवाकी ओरसे, और प्रकाशकोकी ओरसे मैं बिलकुल निराश था। लिखनेका ख्याल तक भी छोड देनेका विचार था। लेकिन 'कल्पना'के कुछ प्रशसक मित्रोने कलमकी तारीफ कर करके लिखने तथा लेख भेजनेको प्रोत्साहित किया। इन मित्रोमें श्री काशीराम 'विप्र'—जो अब एक सफल चिकित्सक बन गये हैं—का नाम उल्लेखनीय है।

पहली कहानी 'गाग' लिखी और उस बार फिर 'सरिता' को भेज दी गई। एक मासतक प्रतीक्षा करनेके बाद लिखा कि क्या रहा, तो उत्तर आया 'विचार हो रहा है।' सोचा कि उसके लिए रद्दीकी टोकरी बन रही होगी। लेकिन कुछ ही दिनों बाद एक वाउचर मिला। उस वाउचर पर पचास रुपयोंके पारिश्रमिककी राशि अंकित थी और टिकट लगाकर मेरे हस्ताक्षर कर देनेकी अपेक्षा की गई थी।

जीविकाके लिए एक सहायक आधार और लिखनेके लिए एक सक्रिय प्रोत्साहन मिलनेपर लिखनेका क्रम चल निकला। पढनेके जमानेमें इतिहासमें कमजोर रहते हुए भी वही एक सबसे हल्का विषय मालूम होता था। लेकिन बादमे राजनीति अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोणने इतिहासकी गतिको समझानेमें भारी मदद दी। अब इस धारामें दूसरी कहानी 'महावतगर्गा' जब सरितामें बहुत पसद की गई, तो यह धारा भी साथमे लग गई। इसके बादकी इस धारा-सबधी कुछ कहानियाँ इस पुस्तकमें आपके सामने हैं ही। प्रस्तुत सग्रहकी अनेक कहानियाँ अपने मूल रूपमें 'सरिता'मे ही छपी थी। मैं 'सरिता'के सचालकोंका कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे अनुमति प्रदान की कि मैं इन्हे भारतीय ज्ञानपीठको प्रकाशनार्थ उपलब्ध कर दूँ।

हो सकता है कि मेरे अब तकके जीवनके इस विहगावलोकनमें आपको कोई रस न आया हो। लेकिन 'ढग' इसके बिना बताया नही जा सकता। आज भी हिंदीमे लिखना प्रारभ करनेवाले लेखकके लिए परिस्थितियाँ अनुकूल नही हैं। अधिकाश बडे-बडे पत्र प्रारभिक लेखकोंको घास नही डालते, और यदि कभी-कभी डालते भी है तो बहुत एहसान और नखरेके साथ, और दाना तो उस घासमें प्राय होता ही नही। यह बात नही कि उनका ही सारा कसूर है। कई बातें इसमें बाधक है हिंदीमें पाठकोंकी सख्या तो बहुत है, लेकिन खरीदकर पढनेवालोंकी सख्या बहुत कम है। माँगकर पढनेकी आदत यहाँ बहुत अधिक प्रचलित है। दूसरी बात है हिंदीके अधिकाश लेखकोंमें जीवनके प्रति प्रगतिशील और वैज्ञानिक दृष्टिकोणका अभाव। आज भी अनेक चोटीके लेखक 'नील गगन'में उडनेवाले साहित्य-

का सृजन करते है, जिनका मनुष्यकी मूल समस्याओ और पाठकके तात्कालिक मनोरजनसे कोई विशेष सबध नही होता । हो सकता है कि इसी कारण साहित्यकी अपेक्षा सिनेमाके टिकट अधिक खरीदे जाते हो । एक छोटे-से लेखककी हैसियतसे, साहित्यके न खरीदे जानेमे, मै हिंदीके सामयिक साहित्यमें स्वस्थ किंतु तीव्र मनोरजनके साथ-साथ मानव जीवनको प्रगतिकी दिशा दिखानेवाले वैज्ञानिक दृष्टिकोणका अभाव समझता हूँ । आध्यात्मिकता—इस जीवनसे परे किसी कल्पित जीवनमें सुख पाने और देने—का प्रलोभन ही उनका पीछा नही छोड पाता ।

इन सब कथनावलीके साथ, बहुत थोडेमें ही अपने लिखनेका ढग मै आसानीके साथ बता सकता हूँ । मै बहुत इतमीनानसे, पात्रो तथा वातावरणकी स्वाभाविकताका विचार रखते हुए, एक विचारोत्तेजक कथानककी खिचडी अपने दिमागमें पकाता हूँ । इस कथानकके मूल पात्रोके सिर मै उन सिद्धातो और विज्ञानसम्मत दृष्टिकोणोका प्रतिपादन करनेका काम मढता हूँ, जो न केवल कहानीमें ही उन पात्रोंके चरित्रको उठा देते है, बल्कि पाठकोको जीवनके बारेमें तर्कसम्मत विचार भी देनेका काम करते है । अब चीज यही रह जाती है कि ये सिद्धान्त, विज्ञानसम्मत दृष्टिकोण और तर्कसम्मत विचार मै कहाँसे लाता हूँ ? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिए ही मैने अपने जीवन-क्रमका एक हल्का-सा आभास आपको दिया है । अपनी आँखें खुली रखिए, जीवनमे चारो ओर, काममे व्यस्त रहते हुए भी, आपको यथार्थ जीवनके ऐसे चरित्र मिलेंगे, जिनका जीवन विरोधाभासोंसे भरा हुआ है । जब ऐतिहासिक पात्र आजके सामाजिक जीवनके इन विरोधाभासोका निरूपण अपने समयकी परिस्थितियोमें सफलताके साथ कर जाते है, तो न केवल पाठकोंको वह अधिक आकर्षक प्रतीत होता है, बल्कि वे जीवनकी गहराईमें कुछ अधिक उतरकर सोचनेके लिए मजबूर हो जाते है ।

मै पाठकोको इस उलझनमें नही डालना चाहता कि प्लाट अकस्मात् मेरे दिमागमे ईश्वरीय प्रकाशकी तरह फूट पडे । ऐसा अनेक बार हुआ है कि केवल शीर्षकोके आधारपर भी प्लाट बन गये है और खूब इतिहास

उलटने-पुलटनेपर भी बने हैं, लेकिन इन सबके पीछे एक निश्चित व बौद्धिक दृष्टिकोण था, जिसके सहारे मैं स्वयं सुखसे जी रहा हूँ और दूसरोंको सुखसे जीते देखना चाहता हूँ। कहानीका काम केवल मनोरंजन करना नहीं है, कुछ असाधारण तथ्योंका निवेदन करना है, कुछ देना है। कहानी उसके पात्र, उसका कथानक, उसकी रोचकता, ये सब माध्यम हैं।

फिर भी यह बात निर्विवाद है कि कहानीका प्रधान गुण मनोरंजन ही है। यदि किसी कहानीमें केवल मनोरंजन ही मनोरंजन है, और कुछ भी नहीं है, तो भी वह कहानी है। मनोरंजन भी पाठकका होना चाहिए स्वयं लेखकका नहीं। अतः बहुत सतर्कतासे लेखकको यह समझनेकी आवश्यकता है कि उसका संभावित पाठक-वर्ग किस प्रकार अधिकसे अधिक मनोरंजन प्राप्त करेगा। मनोरंजन नवीनतासे होता है। पुरानी बातोंको सर्वथा नये रूपमें रखनेसे भी नवीनता उत्पन्न होती है और संभवतः असाधारणतासे भी—यदि उस असाधारणताको स्वाभाविक रूप देनेकी क्षमता लेखकमें है। कहानीमें स्थापित घटनाचक्र तथा पात्रोंकी मानसिक क्रिया-प्रतिक्रियामें जितनी भी वास्तविकता लाई जा सके उतनी ही स्वाभाविकताकी रक्षा होगी। मेरे विचारमें, स्वयं लेखकके वर्णनकी अपेक्षा यह वास्तविकता संबंधित पात्रोंके वार्तालापों और उनके मानसिक घात-प्रतिघातके फलस्वरूप उनके द्वारा कहानीकी सीमाके भीतर किये गये हलन-चलन और कार्योंसे अधिक आती है। इन्हींके माध्यमसे पाठक कथानकके सबसे अधिक निकट रहकर पूर्ण मनोरंजन प्राप्त कर सकता है।

मेरी चुनी हुई कहानियोंका यह पहला संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ, काशीसे प्रकाशित हो रहा है। इसका मुझे गर्व है। ज्ञानपीठके संचालकोंके प्रति मैं आभारी हूँ।

८५ भाटवाड़ा,
मेरठ शहर

—आनन्दप्रकाश जैन

अतीत के कंपन

•

पत्थरकी आँखें

जिन अफगानोने सदियोंसे किसी वाहरी ताकतके सामने सिर नही झुकाया था, उन्हें भी पैरो तले रौदती हुई सिकदरकी सेनाएँ सन् ३२७ ईसवी पूर्वके वसतमें खैवरके दर्रेसे भारतमें भूचालकी तरह आ गई। तक्षशिलाके वूढे शासककी इच्छाके विपरीत उसके वेटे आभीने नजराना लेकर अपने दूत सिकदरकी सेवामे भेज दिये। सिंधुके तटपर अनेक स्वतत्र कवीलोने उसके सामने घुटने टेक दिये। अश्वाक लोगोने पहले-पहल विदेशी आक्रमणकी आगको झेला। एक वड़ा भारी हत्याकाण्ड मचा। लगभग चालीस हज़ार अश्वाक वीर वदी वनाकर सिकदरकी सेनाओका साजसामान ढोनेपर लगा दिये गये। उनकी सहायताके लिए आये हुए सहस्रो पजावी भट एक घेरेमें घेरकर भालोकी नोकोपर उछाल दिये गये। रास्तेमें किसीको स्वतत्र वायुकी साँस लेते हुए छोड देना सिकदरके अदम्य स्वभावके विरुद्ध था।

ऐसी स्थितिमें उस पहाडी सिलसिलेके पूर्वतम भागमें स्थित असकान जातिका सरदार मृत्युको चुनौती देनेके लिए छाती तानकर खडा हो गया। जीतनेका सवाल नही था। खुली आँखो हार जानेका प्रश्न था या आँखें वद करके। वीर असकानी सरदारने दूसरा मार्ग चुना।

यूनानी भाषामे मस्सगके स्थानपर खेला हुआ विनाशका यह नाटक भी वहुत सक्षिप्त रहा। थोड़े ही समयमे असकानोने अपनी स्वतन्त्रताका मूल्य चुका दिया।

जिस समय यूनानी सैनिक असकानोकी झोपडियोमें आग लगा रहे थे, लूटपाट कर रहे थे और उनकी स्त्रियोका सतीत्व नष्ट कर रहे थे, उस समय सिकंदरके शिविरमें आनेवाले मोरचोका लेखा-जोखा वन रहा

था। परडीकस, मैल्यूकन, फिलिप जैसे सेनापति, और प्रसिद्ध यूनानी नक्शानवीस नियारकस वहाँ मौजूद थे। नक्शेके सब छात्रोंने हाथ बाँधे सीधे खड़े थे। सिकदरके हाथोंमें मोरपंखी कलम थी। कलमकी नोंक झेलमके एक स्थानपर लगी हुई थी। यूनानी विजेता अपना सारा ध्यान नक्शेपर केंद्रित करके खड़ा था। झेलमका वह स्थान इतना अधिक महत्त्व-पूर्ण था कि जब सिकदरने अपना हाथ वहाँसे हटाया, तो कलम जहाँ-की-तहाँ गड़ी रह गई।

सिकदरके मुँहसे निकला . "पोरस और उसके बाद ?"

नियारकसने सिर झुकाया। "उत्तरी भारतके आरंभमें पोरसकी शक्ति अभी तक अजेय समझी जाती रही है . " ।

सिकदर क्रुद्ध हो गया। "नियारकस, तुम्हारा ध्यान हमारी तरफ नहीं है। हम पूछते हैं उसके बाद ?"

नियारकसने सिर झुकाया। छातीतक हाथ ले जाकर उसने कहा, "ग़लतीकी माफ़ी चाहता हूँ। उसके बाद चनाब नदी आती है, जिसका पार करना कहीं आसान है। वह पार कर लेनेपर गोलाई लोगोंके सैंतीस गाँव हैं। इन लोगोंने कभी पोरसकी सत्ता नहीं मानी। ये क़रीब पाँच हज़ार हैं। "।

"वे आत्मसमर्पण कर देंगे। उसके बाद ?" सिकदरने पूछा।

"उसके बाद कुछ जगली जातियाँ बसती है। फिर रावी नदी आ जाती है और उसे पार कर लेनेपर दूसरा पोरस सामने पड़ता है। लेकिन इसकी ताक़त पहले पोरसके समान नहीं है .. "

"उसके बाद ?" सिकदरने नक्शेपर अटकी हुई मोरपखीको देखते हुए पूछा।

"उसके बाद क्षत्रियोंका गढ सागल आता है, जो अधिष्ठात्रोंकी मामली-सी ताक़तके बाद पहली शक्ति है। ये लोग क्षत्रिय हैं। इनकी

संख्या पोरससे तो कम है, लेकिन पिछले इतिहासके अनुसार इनके सिरो-की कीमत वहुत सस्ती है। एक छोटी-सी भावना पर पूरी-की-पूरी जाति प्राणोका मोह छोड़ देती है !"

"ठहरो" सिकदरने हाथसे इशारा किया और नियारकसके वोल जहाँके-तहाँ रुक गये। "तो पहले पोरस " उसने उँगलियोंके हलकेसे झटकेसे नक्शेपर गडी हुई मोरपखीको खीच लिया। " "और पोरससे पहले झेलम " फिर वह कुछ देर विचार करनेके वाद सीधा हो गया। 'सैल्यूकस,] झेलमपर तीन पुल वनेंगे। एक ठीक पोरसकी सेनाओंके सामने। परडीकस, तुम वरावर पुल वनाते रहोगे और हर वक्त रवाना होनेकी तैयारीमें रहोगे। दूसरा पुल उससे पाँच मीलके फासलेपर वनता रहेगा। फिलिप, तुम वहाँ रहोगे। और तीसरा पुल हम वनाएँगे। नियारकस, यह पहले पुलकी जगहसे वीस मील दूर तुमने एक घने पेडो वाला टापू झेलमके वीचमे वताया है। ठीक है, जव तक हम वह टापू पार करके तीन-चौथाई झेलम पार नही कर जाते, दुश्मन हमें नही देख सकता, और ."

तभी शिविरके वाहर किसी प्रकारका तीव्र वाद-विवाद सव लोगोंके कानोमे पडा। कुपित स्वरमें सिकदरने परडीकसको इशारा किया। "देखो, कौन है। ये लोग तभी शोर मचाते है, जव हम इतिहास वनाते है।"

परडीकस दो क्षण वाद ही शिविरमे वापस लौट आया। उसके साथ यूनानी लेखक और मूर्त्तिकार एरिस्टोवुलस था। उसने आते ही सिरसे ऊपर हाथ उठाकर सैनिक अभिवादन किया।

"हम देखते है तुम अक्ल खो वैठे हो, एरिस्टोवुलस !"

एरिस्टोवुलसने सिर ऊपर उठाया। "निकाटोरपर देवताओंकी छाया रहे। सैनिक एक देशी स्त्रीको पकड लाये है। वह असकानी जातिका एक नमूना है। मैं उसकी मूर्त्ति वनाना चाहता हूँ, लेकिन वे "

"हम तुम्हारी उस भावनाका सम्मान करते हैं, एरिस्टोवुलस। तुम मूर्ति बना सकते हो। परडीकस, सैनिकोंसे कह दो कि उस स्त्रीको एरिस्टो-वुलसको सौंप दें।"

× × ×

वसतके दिन धीरे-धीरे बीतते रहे और यूनानी कलाकार एरिस्टोवुलस पत्थरकी प्रतिमा गढ़नेमें तल्लीन रहा। यूरोपियन सेनाओंके डेरे उखड़ते रहे और लगते रहे। आस-पासके शासकोंको नत करती हुई विश्वविजेता सिकदरकी उद्दाम सेनाएँ झेलमके निकट आती गईं। इन व्यापारोंकी चिन्ता न करता हुआ एरिस्टोवुलस अपनी मूर्ति बनाता रहा।

तब एक दिन सिकदरके शिविरमें प्रश्न उठा, एथेन्ससे तीन हजार मील दूर, प्राचीन भारतके अतरमें, यूनानियोंके निकाटोरने अपने बाहुबलने जो उथल-पुथल मचा दी है उसका इतिहास कौन लिखेगा?

सैल्यूकसने कहा, "नियारकस इस इतिहासको लिख रहा है।"

सिकदरने कहा, "नियारकस जिस तरह नक्शोंकी शुष्क रेखाएँ खींचता है, उसी तरह वह घटनाओंकी नक्शानवीसी करता है। उसके लिखे इतिहासको पढ़कर यूनानी अपने निकाटोरकी महानताको सही-सही नहीं समझेंगे। हम चाहते हैं आनेवाली घटनाओंका वर्णन एरिस्टोवुलस लिखे।"

तदनुसार एरिस्टोवुलसको सिकदरके सामने पेश किया गया। उसे देखते ही सिकंदरको याद आया कि वह कोई मूर्ति बना रहा था। उसे दूसरी आज्ञा देनेसे पहले सिकदरने कहा, "एरिस्टोवुलस, बहुत दिनोंसे हम तुम्हारी कलाकृतियोंको नहीं देख सके। हम देखना चाहते हैं कि इस बीच तुमने क्या-क्या बनाया है?"

एरिस्टोवुलसने हिचकिचाते हुए उत्तर दिया, "इस बीच मैंने केवल एक मूर्ति बनाई है, श्रीमान्।"

"सिर्फ एक!" सिकदरको आश्चर्य हुआ। "तुमने आजतक किसी

कृतिमें इतने दिन नही लगाये। तब वह मूर्त्ति अपूर्व होगी। हम उसे देखेगे।"

एरिस्टोबुलसकी कलाकृतियोको देखनेके लिए सिकदरके शिविरमे ही यूनानके प्रमुख-प्रमुख सामतोका एक दरबार लगा। जब सिकदरने इशारेसे सामने रखे हुए काठके सदूकका पल्ला खोलनेके लिए एरिस्टोबुलसको आज्ञा दी, तो वह बोला, "दासकी प्रार्थना है कि यह मूर्त्ति स्वयं निकाटोरके हाथो अनावृत्त हो।"

"हम इस प्रार्थनाको स्वीकार करते है", कहते हुए सिकदर स्वय उठा और सदूकके पास जाकर उसने अपने हाथोसे सदूकका पल्ला खोल दिया। किन्तु जब उसने मूर्त्तिको देखा तो अभी तक पल्लेको थामे हुए उसके हाथ जहाँ-के-तहाँ जड हो गये। वह निर्निमेष दृष्टिसे एरिस्टोबुलसके कमालको देख रहा था।

जब सिकदर पीछे हटा तो सभी यूनानी सामतोने देखा कि उनके कलाकारने इस बार जो मूर्त्ति बनाई थी वह यूनानी कलाके इतिहासमें बेजोड थी। उसने पत्थर क्या तराशा था मानो उसका दिल निकाल लिया था। उसने पाषाणमें सगीतका आकार बनाया था। प्रस्तरके अगप्रत्यगमे उसने पर्वतके सौन्दर्यकी अपूर्व स्थापना की थी।

वह किसी अल्हड पहाडी नवयौवनका साकार रूप था। उसके मुखपर जो भोलापन और शाति दिखाई दे रही थी वह सिकदरके युद्धोन्मुख अतरके साथ विरोध उत्पन्न कर रही थी। ऐसा लग रहा था मानो वह प्रस्तर-प्रतिमा अब बोली, अब बोली! लेकिन वह बिना बोले ही जीवनको मुसकानका दान दे रही थी। वह ऐसा सौन्दर्य था जिसे सब देख रहे थे और वातावरणमें परिवर्तन अनुभव कर रहे थे, किन्तु स्वय वह अपने को देखनेकी क्षमता नही रखता था। उसकी आँखें नही थी।

अपनी समस्त प्रसन्नताओको केंद्रित करके सिकदरने कहा, "एरिस्टो-बुलस, हम देख रहे है कि देवताओने सौन्दर्यके देवता अपोलोको इसलिए

संसारमें भेजा है कि दुनिया उसे देखे । लेकिन अफसोस ! उन्होंने उसे नेत्र-हीन करके भेजा है । अगर वह आँखें लेकर आता तो सिकंदरको देखता, उसकी विजय-यात्राओंको देखता और उसके यूनानको देखता ।"

एरिस्टोबुलसने गद्‌गद होकर अदबसे सिर झुकाया । "वह जरूर हमारे निकाटोरको देखेगा, उसकी विजयोंको और यूनानको देखेगा । वह आँखें लेकर आया है । लेकिन वह उन आँखोंमें जो गहराई लेकर आया है यह तुच्छ कलाकार उन्हें पत्थरमें अंकित नहीं कर सका ।"

यह बात सुनकर सिकंदर उछल पड़ा । "जुपिटरकी क़सम, एरिस्टो-बुलस, तुमने हमें खुशीकी खबर सुनाई है । हम तुम्हें यूनानका बहतरीन तोहफा इनाममें देंगे । हमारे सामने उस प्रतिमाको प्रस्तुत किया जाय जिसकी आँखें मौजूद हैं ।"

एरिस्टोबुलस सिर झुकाकर अदबके साथ शिविरके बाहर चला गया । सिकंदरके साथ-साथ उसके सेनापति और सामंत साक्षात् उत्सुकताकी प्रति-मूर्त्ति बन गये । जिस निर्जीव, नेत्रहीन पत्थरमें किसी सजीव प्रतिमाका आकार है, जब इसीका इतना प्रभाव है, तो स्वयं वह नेत्रयुक्त सजीव आकार कैसा होगा !

यह लंबी प्रतीक्षा कुछ ही देर रही । एरिस्टोबुलस आया और उसके साथ दो परिचारिकाओंका सहारा लिये हुए, मुखावरणसे आच्छादित उस प्रस्तर-प्रतिमाका मूल आकार दृष्टिगोचर हुआ । सामंतोंके कलेजे धड़कने लगे । सेनापति अपनी मर्यादाको सँजोकर तनकर खड़े हो गये । एरिस्टो-बुलसने सिकंदरकी ओर आज्ञाके लिए देखा । सिकंदरने संकेत किया और एरिस्टोबुलसने आवरण हटा दिया ।

श्वेत वस्त्रोंसे अलंकृत वह उस प्रस्तर-प्रतिमाका सजीव रूप था । उसकी आँखोंमें जादू था । जब उसकी विस्मयपूर्ण दृष्टि सिकंदरकी उत्सुकता पूर्ण दृष्टिसे मिली तो सिकंदरकी मुट्ठियाँ भिंच गईं । एक-एक शब्दको

तौलकर बोलनेवाले यूनानी विजेताके मुँहसे बअख्तियार निकला' 'अपोलो ज़िन्दाबाद !"

इसके साथ ही सभी उपस्थित सामतोंने अपोलोके चिरजीवी होनेकी कामना प्रकट की ।

सिकदरने आजतक कमनीय वस्तुओंको केवल देख लेनेसे ही सतुष्ट होना नही सीखा था । बचपनमे जो वस्तु उसे अच्छी लगती थी वह उसे छूना चाहता था और प्राप्त कर लेना चाहता था । उसके सामने इस समय जो नजीव दुर्लभ प्रतिमा खडी थी उसे अपने हाथोंसे स्पर्श करके उसकी वास्तविकताको जान लेनेके लिए वह उठा । उसके पास पहुँचकर उसने एक क्षण ठिठककर उसे जी भरकर देखा और सहसा ही उसका एक हाथ आगे बढ गया । पहाडी नवयौवनाका एक हाथ अपने हाथोंमें लेकर वह उसकी कोमलताका अनुभव करने लगा, जैसे कोई पारखी किसी अनमोल हीरेको परख रहा हो ।

नियारकस उसी समय अपने स्थानसे एक कदम आगे बढा । "निका-टोर एलग्जेंडर जिंदाबाद ! भारतीय रसमके अनुसार अब यह युवती सम्राट्‌की अर्द्धांगिनी है ।"

सिकदर चौंक पडा । युवतीका हाथ उसके हाथसे छूट गया और उसने घूमकर नियारकसकी ओर देखा । "नियारकस, तुम अपनी सीमासे आगे बढ गये हो !"

"नही, निकाटोर," नियारकसने कहा । "इस रसमको हिन्दुस्तानमें पाणिग्रहणका नाम दिया जाता है । जब कोई युवक मुग्ध भावसे किसी युवतीका हाथ अपने हाथोंमें थाम लेता है तो वह उसकी हो जाती है । यह भारतीय युवती अब तक अपने मनमें निकाटोरको अपना पति समझ चुकी होगी ।"

"हम सिवा यूनानके किसी देशके कायदे-कानूनोंसे नही बँधे है", सिक-दरने कहा । फिर उसने एक क्षण उस युवतीकी ओर निहारा । "फिर भी,

नियार्कस, हम तुम्हारी खोजकी कद्र करते हैं। यह लड़की यूनानकी सम्राज्ञी बनेगी।"

साथ ही "निकाटोर ज़िंदाबाद! यूनान ज़िंदाबाद!" के नारोंसे सिकंदरका शिविर गूँज उठा। सिकंदरने देखा उनकी भाषाको न समझ सकनेवाली वह लड़की, जो शायद यूनानकी सम्राज्ञी बनने जा रही थी, धीमे-धीमे मुसकरा रही थी मानो बिना जाने ही उसने इस निर्णयपर अपनी स्वीकृतिकी छाप लगा दी हो।

किन्तु एरिस्टोबुलस सहसा ही निर्णीत हो गये इस निर्णयसे बड़े असमंजसमें दिखाई पड़ा। उसकी मुद्रा देखकर सिकंदरने पूछा, "एरिस्टोबुलस, तुम कुछ कहना चाहते हो?"

एरिस्टोबुलसने कहा, "इस स्त्रीके साथ एक बूढ़ी स्त्री भी सैनिकोंके साथ लगी थी। वह युद्धमें काम आये हुए असकानी सरदारोंकी माँ है। उसीसे यह भी मालूम हुआ है कि जिस स्त्रीको निकाटोर यूनानकी सम्राज्ञी बनानेके लिए तैयार हो गये हैं वह इसी असकानी सरदारकी विधवा पत्नी है। उस्ताद अरस्तूका कहना है कि शत्रुकी मुसकराहटसे भी हमें सावधान रहना चाहिए। यह स्त्री किसी भी दिन यूनानके लिए घातक सिद्ध हो सकती है।"

एरिस्टोबुलसने जिस रहस्यका उद्घाटन किया था उसे सुन-समझकर सारी उपस्थित सभामें सन्नाटा छा गया। तनिक विचारके बाद ही सिकंदरने कहा, "तुम ठीक कहते हो, एरिस्टोबुलस! हम तुम्हारी बातोंपर ग़ौर करेंगे।"

इसके बाद वह संक्षिप्त सभा विसर्जित हो गई। शिविरमें रह गये केवल सिकंदर और वह सदा मुसकराहटका दान देनेवाली असकानी युवती। अब न जाने क्या सोचकर वह आप ही आप हँस पड़ी।

सिकंदरने विस्मयसे उस हँसीको देखा, उसके बाद फिर छा जानेवाली पूर्ववत् मुसकराहट देखा, उसकी मर्मभेदी दृष्टिको देखा, और वह सौन्दर्यके देवताके सामने नतमस्तक हो गया।

धीरे-धीरे संध्या निकट आ रही थी और आसमानमें बादलोंका जमघट जुटना आरंभ हो गया था। सिकंदरके शिविरमें एक पुरुषके दिलकी धड़कनें निरंतर तीव्रतर होती जा रही थीं। थोड़ी ही देरमें अंधकारने आलोकको ढाँक लिया, बादलोंने क्रुद्ध होकर बार-बार दाँत चमकाये और फिर विवश होकर रो पड़े।

सुबह हो गई और शिविरसे रुक-रुककर मर्मभेदी हास्यकी ध्वनि आने लगी। भीतरसे घड़ियालकी आवाज सुनकर दो संतरी शिविरके भीतर गये और तुरन्त ही बाहर आकर एक ओरको दौड़ पड़े।

कुछ देर बाद एरिस्टोबुलस और प्रसिद्ध यूनानी हकीम एमिरकस निकाटोरके शिविरमें दाखिल हुए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने एक अद्भुत दृश्य देखा। वह असकानी युवती बाल बिखराये सिकंदरके सिंहासन पर विराजमान थी और उनका निकाटोर जीवनमें शायद पहली बार असहायकी भाँति अपने अनुचरोंको देख रहा था।

एरिस्टोबुलसको देखते ही सिकंदर कुपित होकर बोल उठा, "तुम्हारा सिर कलम किया जाना चाहिए, एरिस्टोबुलस !"

आसमानसे गिरते हुए यूनानी कलाकारने सिर झुका दिया। "निकाटोरकी खुशियोंपर यह सिर कुरबान है।"

सिकंदरने मुट्ठियाँ भींची और खोल दीं। "तुम नहीं जानते, एरिस्टोबुलस, तुमने कितना बड़ा अपराध किया है ! तुमने हमें सब कुछ बताया, पर यह नहीं बताया कि यह स्त्री पागल हो चुकी थी।"

एरिस्टोबुलस और यूनानी हकीम दोनोंके मुँह आश्चर्यके अतिरेकसे फटे रह गये। तभी सिकंदरके सिंहासनपर बैठी सौन्दर्यकी वह प्रतिमा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

एरिस्टोबुलस काँप उठा। "जान-बूझकर इतना बड़ा अपराध वही कर सकता है, मेरे देवता, जिसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई हो और जो अपने

आपेमें न हो। इस स्त्रीसे दुभाषियोंके द्वारा जब कोई भी सवाल पूछा गया यह चुप रही और मुसकराती रही। हमें अपने सवालोंके जवाब उस बूढी स्त्रीसे मिले। यह स्वप्नमे भी गुमान न था कि पागलपन भी इसकी वजह हो सकती है।"

सिकदरने एक हाथकी हथेलीपर दूसरे हाथकी बँधी मुट्ठी दे मारी। बूढा एमिरकस आगे बढा और उसने असकानी वधूकी आँखोंमें घूर-घूरकर कुछ देखा। फिर उसने धीरेसे उनका हाथ उठाया और तन्मय होकर उसकी नब्जको पहचाननेमे लग गया।

कुछ देर बाद निश्चित होकर हकीमने कहा, "देवता निकाटोरकी रक्षा करे। ऐसा मालूम होता है कि विगत युद्धकी विभीषिकाओंको देखकर ही यह स्त्री आधी पागल हो गई है। इसने अपने गर्भमें निकाटोरकी रूह बंद कर ली है। अब इसका पागलपन दोमें से किसी एक ही घटनासे दूर हो सकता है—या तो इसके जीवनमें किसी भारी खुशीका प्रवेश हो या भारी प्रसन्नताकी कोई घटना इसके मानस-ततुओंको झटकेके साथ खोल दे। हमें पहले निकाटोरकी रूहके रोशनीमें आनेका इंतजार करना चाहिए।" इसके बाद बूढा हकीम अदब और कायदेके साथ पीछे हटकर एरिस्टोबुलस के बराबरमें आ गया।

असकानी नवयौवना अब तक गभीर हो चुकी थी और तीनो यूनानी मानो कीलित होकर ससारकी सम्राज्ञीके सम्मुख खडे थे।

× × ×

बदलती हुई गतिशील ऋतुओंके साथ-साथ सिकदरकी सेनाएँ झेलमके निकटतर आती चली गईं। बरसात बीती, जाडे आये, यूनानियोंने हिन्दुस्तानका शीत अपने सिरोपरसे गुजार दिया। फिर ३२६ ई० पूर्वका वसत भी आया और सिकदरकी सेनाओंको अबाध गति मिली। बरसातके आरभमें यूनानी विजेता झेलमके किनारेपर पहुँच गया। इन्ही दिनो असकानी विधवाके गर्भसे छोटे निकाटोरने जन्म लिया।

हकीम एमिरकसको पूरी आशा थी कि नारीके जीवनमें होनेवाले इस अपूर्व परिवर्तनसे उसकी मानसिक विक्षिप्तता भी दूर हो जायगी। वह तो दूर नही हुई, किन्तु वृद्धा असकानी माँ एक विदेशी विजेताके रक्त से उत्पन्न अपने पोतेका मुँह देखकर इस ससारसे चल वसी।

पूर्व योजनाके अनुसार झेलमपर तीन पुलोका निर्माण हुआ। फिर एक वरसाती रातको, जव दूसरे किनारेपर तैयार खड़ी और वीर पोरसकी सेनाओकी आँखे दूरतक फैले हुए मूसलावार पानीके आवरणको भेदनेमे असमर्थ थी और केवल झेलमके पानीका उच्छृ खल स्वर कानोमें पड रहा था, तीसरे पुल परसे टापूकी आड लेकर सिकदर स्वय झेलममे कूद पडा। सुवह तक वर्षा वंद हो गई और आकाश स्वच्छ हो गया। सहस्रो यूनानियोकी भेट चढा कर झेलमके किनारेपर वन गये वरसाती दलदलको सिकदरने पार किया। सहायताके लिए राजा अभिसारको आया जानकर पोरसके दोनो वेटे उसका स्वागत करने के लिए आगे वढे। किन्तु उनका सामना हुआ मध्य एशियाके उन विकट धनुर्धरोंसे, जो दौडते हुए घोडोपर से अपनी छोटी-छोटी कमानोके द्वारा अचक निशाना लगाते थे। भारतीय योद्धाओंने भी अपने कधोमे उन वडी-वडी कमानोको उतारा, जिनकी लवाई आदमीके सिरसे ऊँची पहुँचती थी और जिन्हे धरतीपर टिकाकर, मारक वाणोकी वौछार करके उन्होने पोरसको उत्तर भारतकी अजेय शक्ति वना दिया था। लेकिन भाग्य सिकदरके पक्षमें था। भारतीय योद्धाओके विशालाकार धनुष दलदलमें धँसते चले जाते थे और उनके वाण थोडी-थोडी दूरपर जाकर गिर पडते थे।

तव पहले पुलको अधूरा छोडकर परडीकसने नावोका वेड़ा झेलममे डाल दिया और एक नावमे आनेवाले इतिहासके वडे-वडे प्रमुख व्यक्तियोको एकत्रित करके वह झेलम पार करने लगा। उसके वरावरमे छोटे निकाटोरके लिए एक यूनानी परिचारिका वैठी थी और पास ही अर्द्धविक्षिप्त कल्याणी वार-वार चौंककर युद्धघोषको सुन लेती थी।

परडीकस हाथीकी ओट करके दूरवीक्षण कर रहा था। नावोंपरसे तीर फेंकनेवाली मशीनोंकी बौछारके बीच देखता हुआ वह ज्यों-ज्यों बहावके साथ युद्धस्थलके निकट आता था, त्यों-त्यों उसके मुंहसे निकलनेवाला युद्धका वर्णन सजीव और उत्साहवर्द्धक होता चलता था :

"हाथियोंकी दीवारें खड़ी करके पोरस उनके पीछे-पीछे हमारी सेनाओंकी ओर बढ़ रहा है उनके पीछे पैदल सेनाओंके छोटे-छोटे जत्थे हैं। दोनों तरफ भारतीय हलके-फुलके रथोंकी कतारें हैं, जिनके आस-पास और पीछे घुड़सवारोंके दल हैं इस समूहके बीचमें एक बड़े विशाल-काय हाथीके ऊपर शायद पोरस बैठा है। लेकिन उसके हौदेपरसे केवल उसका दायाँ कंधा दिखाई पड़ रहा है .हमारे तीरदाजोंने हाथियोंकी दीवारोंपर तीर बरसाने शुरू कर दिये हैं और वे ऊपरको सूंड़ें उठा उठाकर चिंघाड़ रहे हैं लो, अब वे झपटकर आगे बढ़ रहे हैं और पीले आदमी उनके पैरोंके नीचे आ-आकर पिस रहे हैं।

कल्याणीकी स्मृति उसके साथ आँख-मिचौनी खेलने लगी। भारतीय हाथी यूनानियोंको पीस रहे हैं। उसके अर्द्धचेतन मस्तिष्ककी ओरसे एक लहर चली और उसके लाल-लाल होंठोंपर एक ऐसी मुसकराहट आई, जो उसके मुखपर सदा छाई रहनेवाली मुसकराहटसे भिन्न थी—प्रसन्नताकी मुसकराहट और हर्षका एक हलका-सा झटका।

परडीकस बोल रहा था, "वह चमके हमारे निकाटोर यूनानी घुड़सवार अपनी पंक्तियाँ तोड़कर दो दिशाओंसे हाथियोंपर झपटे हैं असंख्य भालोंने हाथियोंके मस्तकोंको छेद दिया है . अब हाथी ज़ोर-ज़ोरसे चिंघाड़ रहे हैं वाह, अब तो वे दीवारें लौट पड़ी हैं और उन्होंने अपनी सेनाओंको पैरों तले रौंदना शुरू कर दिया है बाईं ओरसे हिन्दुस्तानी व्यूह बनाकर हमारी सेनाको घेर लेना चाहते हैं उधरसे हमारे निकाटोर घुड़सवारोंको लेकर चले और हिन्दुस्तानी अब तितर-बितर हो रहे हैं "

कल्याणीके मस्तिष्कको कोई जैसे एक साथ हजारो हथौडोसे पीट रहा था। कोई पत्थर जैसे उभर-उभरकर उसके मस्तिष्ककी ऊपरी सतह पर आना चाह रहा था और वार-वार दव जाता था। परडीकस वरावर युद्धका वर्णन करता जा रहा था। नगाडोकी ध्वनि नजदीक आती जा रही थी और पासकी नावोंसे यूनानी सैनिकोके विजय-घोप सुनाई पड रहे थे।

कुछ ही देर वाद परडोकसने वर्णन किया कि भारतीय सेनाके पैर उखड़ गये और अव युद्ध युद्ध न रहकर सामूहिक हत्याकाण्ड मात्र रह गया है।

"वह पोरस अपने हाथी पर वापस भागा जा रहा है और महाराज आमफिस (आँभी) उसका पीछा कर रहे है पोरसका हाथी घूमकर खडा हो गया है और स्वय पोरस निढाल होकर हौदेमे ढुलका जा रहा है लो, अचानक अव वह चेतन हो गया है और उसने एक भाला निशाना ताककर महाराज आमफिम पर फेका है महाराज आमफिस वार बचाकर अव हमारी सेनाओकी ओर लौट चले है अव हमारे घुडसवार पोरसकी ओर दौड रहे है। उन्होने पोरसके हाथीको वैठ जानेके लिए मजवूर कर दिया है। अव वेहोश पोरसको हौदेसे उतारा जा रहा है वाह रे पोरस ! अव "

अव कल्याणीके मस्तिष्कमे पत्थरने हिलना-डुलना वन्द कर दिया। दिमागमें जैसे रोशनी भर गई और नई-पुरानी कितनी ही स्मृतियाँ उसके मस्तिष्कमे लौट-लौटकर आ गई असकानोके युद्धमें उसके पतिकी निर्मम हत्या गाँवकी महिलाओको पकड-पकडकर ले जाया जा रहा है और दूरसे नारी कठोकी चीत्कारे आ रही है और कुछ याद नही आता ! कोई यूनानी उसे अपने अकमें समेटे ले रहा है लोग उसे निकाटोर कहते है . उससे उसे एक सतान मिली है क्या यह सव सच है ?

कल्याणीने एक नजर यूनानी परिचारिकाके हाथोमें खेलते हुए लडकेको देखा और क्षणमात्रमें उसके निकट सव कुछ साफ हो गया। उसने उसे परिचारिकाके हाथोंसे छीन लिया, एक वार चूमा, और नावमें कालीनपर

बैठा दिया। फिर उसने झेलमके पानीमें अपनी परछाईं देखी, एक बार हाथ जोड़कर आकाशकी ओर देखा और उसके मुंहसे निकला, "माँ, शरण दो।"

परिचारिका चिल्लाई और परडीकसने घूमकर देखा। तूफान नावको ऊपर-नीचे उठा रहा था और पानीकी उत्ताल तरंगोंमें गोल-गोल लहरोंका वलय किसीको अपने अंकमें समाकर धीरे-धीरे सिमटता-सा लगता था कि दूसरी जबरदस्त लहरें आईं और उन्होंने उन गोल घेरोंकी सारी कोशिशों को बेकार कर दिया।

परडीकस जोरसे चिल्लाया और उसका इशारा पाते ही सैकड़ों गोताखोर झेलममें कूद पड़े। बेड़ा रोक दिया गया। धड़कते हुए दिलोंसे अधिकारी लोग निकाटोरके क्रोधसे भरे बोल समयसे पहले ही सुनने लगे। उन्होंने यूनानकी भावी सम्राज्ञीको खो दिया।

इस बार झेलमने यूनानियोंकी कोई सहायता नहीं की। अपनी बेटीको अपने अंकमें छिपाकर वह उद्दाम गतिसे दौड़ती, इतराती और बल खाती हुई चली गई। फिर भी जिस धरती पर वह बह रही थी उसके साथ उसने विश्वासघात नहीं किया।

कुछ ही समय बाद उसने सुप्त कल्याणीको किनारेपर फेंक दिया। सूर्यने उसके ऊपर चमकना आरम्भ कर दिया और दूर होते हुए युद्धसे अनजान किसी ग्रामीण बैलगाड़ीवालेने उसे देखा। वह उसे उठाकर उस गाँवमें ले आया, जिसे आजकल सियालकोटका नाम दिया जाता है। अब वह पंजाब का एक बड़ा नगर है।

× × ×

कल्याणी कुछ दिनोंमें स्वस्थ हो गई। किन्तु उसकी स्मृति सिकंदरके द्वारा संचालित दो निर्मम युद्धोंको देख चुकी थी। अब निश्चल बैठना उसके लिए असंभव था। उसने अपना पति खोया था, जातिकी जाति नष्ट होते देखी थी और विदेशी-द्वारा उसका नारीसुलभ आत्मसम्मान विदीर्ण किया जा चुका था।

एक दिन उसी ग्रामीणको साथ लेकर वह दूसरे पौरव सरदारसे भेंट करनेके लिए रावीके पास पहुँची। पौरवके अनुचरोंने सदाकी राजनीतिके अनुसार एक सुन्दर स्त्रीको सरदारसे मिलनेके लिए उत्सुक देखकर उसे पौरवके विश्रामगृहमें पहुँचा दिया।

अकस्मात् अपार सौन्दर्यको अपने सामने देखकर पौरव सरदार ठगा सा देखता रह गया। उसके मुँहसे निकला

"कौन हो तुम ? कहाँसे आई हो ? क्या चाहती हो ?"

"मैं एक स्त्री हूँ,' उसने उत्तर दिया। "मैं रावी पारसे आई हूँ। मैं तुम लोगोंको चेताने आई हूँ। सिकदर आ रहा है और उसके पास अपार शक्ति है ! अभी समय है। उठो, दस-पाँच जितने भी मिल सको, मिलकर एक हो जाओ। बहते-बहते नदियों तकका पानी सूख जाता है। उसकी ताकत घटती जा रही है ! उसका मुकाबला करो, जीत तुम्हारी होगी।"

"ओह !" मुग्ध होता हुआ पौरव सरदार बोला, "सिकन्दर आ रहा है। यह सिकन्दर कौन है ? तुम जो कुछ कह रही हो वह पागलपनमें कह रही हो या होशमें ?"

"एक विदेशी शक्ति तीन हज़ार मीलकी यात्रा करके यूनानसे आई है। पौरव महान् उससे लड़कर नष्ट हो चुका है "

"तुम्हारे मुँहसे क्या निकल रहा है ?" पौरवने उत्तर दिया, "पौरव तो हम हैं और किसीने नष्ट नही किया हे। तुम शायद झेलमवाले उस घमडी सरदारके बारेमें कह रही हो। अच्छा हुआ, उसका मान भग करनेवाला कोई तो मिला। हम तो और भी मजेमें हैं। हमारा पैरोंका काँटा निकल गया है।"

- कल्याणी चिल्ला उठी "तुम कायर ही नही, मूर्ख भी हो।"

पौरव सरदारका चेहरा आत्महीनताको अनुभव करके तमतमा गया। कुछ देर वह एकटक उस रूपके सागरको निहारता रहा। फिर वह बोला, "तो तुम गालियाँ देने आई हो ! यह भी सुन्दर है, तुम भी सुन्दर हो

और विशेषकर तुम्हारी ये आँखें ! वाह, ईश्वरकी क्या लीला है ! हम चाहते हैं अपनी इन खंजन-सी आँखोंसे तुम हमें देखती रहो, और . और हम तुम्हें देखते रहें.” साथही वह मुँह बाकर मुसकरा उठा मानों उसने कोई अपूर्व बात कह दी हो ।

असकानी सरदारके साथ रहकर जिसने सैकड़ों जंगली जानवरोंका शिकार खेल डाला था वह इस अपमानसे तिलमिला गई । उसने आगे बढना आरम्भ किया और पीछे सरदारकी हँसी बढ़ती चली गई । फिर शीघ्र ही वह हँसी लोप हो गई । उसकी समझमें ही उसकी कटार निकलकर उसीके कलेजेमें धँस चुकी थी । न अब कोई हँसी निकल सकती थी, न बोल निकाल सकता था, और न कोई चिल्लाहट ।

बाहर पहरेपर खडे होठों ही होठोंमें मुसकराते हुए चार सन्तरियोंको दो घडी भीतर न जाने का सरदारका आदेश देते हुए कल्याणी निढाल कदमोंसे लडखडाती हुई अपनी बैलगाडीपर आ बैठी । “बाबा, बैलोंको आर लगाओ । हमें जल्दी ही यहाँसे निकल जाना है ।”

लेकिन कुछ ही देरमें पीछेसे पुरु लोगोंका शोर सुनाई दिया । बूढे चालकने असहायकी भाँति कल्याणीकी ओर देखा । कल्याणीने कहा, “अब मृत्यु निकट है, बाबा । भगवान्‌का नाम लो ।”

पर बूढा सुलझ चुका था । उसने तुरन्त हाथ पकड़कर कल्याणीको गाडी परसे उतार दिया और झाडियोंकी आडमें करके कहा, “जा सको तो पैदल साकल पहुँच जाना । वहाँका राजा सज्जन है । वह तुम्हारी सुनेगा । जाओ ।”

हील-हुज्जत करनेका समय नहीं था । झाडियोंमें लहूलुहान होती हुई कल्याणी पूर्वकी ओर भाग चली । उधर बूढेने अपनी बैलगाड़ी पूरी तेजीसे आगेकी ओर दौडा दी । लगभग आधी घडी बाद कल्याणी एक अस्फुट चीखकी आवाज़ सुनकर ठिठक गई । शायद बूढा यमलोक सिधार चुका था ।

दो दिनोकी भूखी-प्यासी कल्याणी सागलके गढके नीचे पहुँची। वडी ऊँचाई पर सागलका किला आकाशको चूम रहा था। ऊपर जानेके लिए पथरीली पगडडी थी। क्या कल्याणी उसपर चढकर होश रहते ऊपर पहुँच सकती है? शायद वह नही पहुँच सकती थी। किन्तु एक आग थी जो उसे लुढकाती-पुढकाती, ठोकरे खिलाती सागलके द्वारपर ले गई।

जव कल्याणीको चेतना आई तो क्षत्रियोका राजवैद्य उसकी परिचर्या कर रहा था। उसने आँखें खोलीं और देखा कि उसे चेतन होते देखकर उसके ऊपर झुके अनेक चेहरे खिल उठे। सागलके राजाने सीधे होकर सेवकोंसे कहा, "देवीके लिए भोजनका प्रवन्ध किया जाय।" और वह स्वय कक्ष छोडकर वाहर निकल गया।

दोपहरके समय अकेला सागल का राजा कल्याणीके कक्षमे आया। एक नीचे आसन पर वैठकर उसने पलग पर पडी, जगह-जगहसे क्षतविक्षत कल्याणीको निरखा-परखा। फिर वह वोला, "क्या देवी इस स्थितिमे हैं कि अपना परिचय दे सकें?"

"समय न गँवाओ, सागलके अधिपति," कल्याणीने कहा। "विदेशो से एक दुर्दम्य शक्ति उत्तरी पहाडोको भेदकर भारतमे आई है। अव तक लगभग सवा लाख भारतीय उसकी लपलपाती जीभकी भेंट हो चुके हैं। उसने झेलम पार करके महान् पौरवको भूमिपर सुला दिया है। उसने वाँके अश्मकानोका निशान दुनियासे उठा दिया है। अभी थोडा-सा समय है। जागो और दूसरोको जगाकर एक हो जाओ। मै सैकडो कोसका मार्ग लाँघकर केवल यही सदेश देने के लिए आई हूँ। वताओ, सागलमे कितनी शक्ति है?"

सागलका राजा अचानक इतना वडा आह्वान सुनकर चौक पड़ा। उसके मुँहसे केवल इतना निकला, "तीस हजार योद्धा।"

"वहुत कम है," कल्याणीने कराहते हुए कहा। "वहुत कम है।"

"तुम कौन हो?" सागलके राजाने फिर पूछा।

"मैं एक अनकानी हूँ," कल्याणीने मुंह फेरकर उत्तर दिया। उसकी आंखोंमें आँसुओंकी दो छोटी बूँदें चमक आई।

"अकसानियोंमें क्या इतना सौन्दर्य होता है ?" आश्चर्यके साथ सागलका अधिपति बोला।

मुंह फिराकर कल्याणीने तीव्र दृष्टिसे सागलके राजाको देखा। चुभते हुए शब्दोंमें वह बोली, "क्या तुम लोगोंको सब कुछ सुन्दर ही सुन्दर दिखाई देता है ? क्या जीवनमें कुछ भी असुन्दर नहीं ? क्या उस असुन्दरका सामना करनेका सारा साहस तुममें लोप हो गया है? नहीं, अब मुझमें कुछ सुन्दर नहीं रह गया है। बताओ, सागलनरेश, तुम सिकंदरसे लड़ोगे ?"

"दो बातोंका उत्तर एक साथ देना है," सागल-नरेशने कहा। "देवीके नेत्रोंमें साक्षात् कामदेवका वास है, अतः देवी सुन्दर हैं। सिकन्दर नाम की कोई विदेशी शक्ति आ रही है, वह असुन्दर है। हममें असुन्दरका सामना करनेका साहस है। हम उससे लड़ेंगे यदि... यदि देवीकी कृपा बनी रही तो।"

इस कृपाका क्या अर्थ था, वह सागलनरेशके नेत्रोंमें देखकर कल्याणीके सामने स्पष्ट हो गया। वह कराही और उसका सिर चकरा गया। दशा खराब जानकर सागलनरेश कक्षके बाहर राजवैद्यको बुलवानेके लिए दौड़े। किन्तु बाहर पहुँचते-न-पहुँचते उन्हें एक तीव्र हृदयविदारक चीत्कार कल्याणीके कक्षसे सुनाई पड़ी। वह उलटे पैरों कक्षमें लौटकर आये।

द्वारसे ही सागलनरेशने देखा कि पलग पर थोड़ी देर पहले निश्चल पड़ी कल्याणी उलटी हो गई थी और मुंहपर हाथ रखे बार-बार चीख रही थी। आगे बढ़कर उन्होंने उसे जोर लगाकर सीधा किया। देखा, कल्याणीने अपने हाथोंसे अपना मुंह जकड़ रखा है और उसकी उँगलियोंके बीचसे रक्तकी धाराएँ उबल-उबलकर ऊपर आ रही हैं। सागल-नरेशका

साहसी हृदय भी धडकने लगा। उसने फिर बलप्रयोग करके कल्याणीके हाथोको उसके मुंहसे हटाया। हाथ हट गये, उसने फिर एक मर्मभेदी चीत्कार किया और उसका सिर पीछेकी ओर लुढक गया। साथ ही सागल-नरेशके हाथोने कुछ क्षणोके लिए अपनी चेतना खो दी।

एरिस्टोबुलसकी कलाने जिनके सामने हार मान ली थी, सिकन्दर जिनके समक्ष बच्चा बन गया था, पौरव द्वितीय जिन्हे देखकर मूर्खो की तरह बातें करने लगा था और जिनपर सागल-नरेशने अपनी स्वतन्त्रताकी बाजी लगा दी थी, कल्याणीने उन नेत्रोको अपने ही हाथोको सोनेकी चूडियो से फाडकर नष्ट कर दिया था!

कल्याणीका उपचार हुआ, किन्तु उसके नेत्रोके आवरण फट चुके थे। तब सागलनरेशने अपने तीस हज़ार जवानोको एकत्र किया। उनके सामने कल्याणीको खडा किया और ललकारकर बोले, "इस देवीने समस्त भारत-भूमिके लिए ससारमें सबसे सुन्दर अपने नेत्रोका दान दिया है। यदि हम मनुष्य है तो अपने प्राणोकी बाजी लगा देनी चाहिए। देवी कल्याणीकी जय!"

देवी कल्याणीकी जयसे ही सिकदरकी बाढकी तरह बढती हुई सेनाओका स्वागत हुआ। पोरससे लडकर उसकी सेनाओके कदम लडखडाने लगे थे, तो सागलसे लडकर वे उखड गये। विजयश्री सिकदर-के हाथो रही क्योकि उसका स्वागत करनेके लिए एक भी सागल जीवित नही रह गया था। एक शमाके तीस हज़ार परवाने कट-कटकर ढेर हो गये थे।

विजयसे उन्मत्त सिकन्दर सागलके गढमे घुसा। राजमहलके द्वार पर पहुँचकर उसे राजसी वेशभूषामें सुसज्जित एक दुर्बल, अधी युवती मिली। वह मुसकरा रही थी। सिकदर, परडीकस, सैल्यूकस, फिलिप—सब एक साथ उसके सामने पहुँचे। रास्ता रुका जानकर सिकदरने पूछा "कौन हो तुम?"

कल्याणी उसका प्रश्न नही समझी, किंतु उसकी आवाज और भाषाका प्रकार वह समझ गई। उसके मुखपर फिर वही मनोहारिणी मुसकराहट आई और वह एक स्तभसे लगकर सहारा लेती हुई बोल उठी, "निकाटोर, अब आगे नही बढ सकोगे।"

जब तक सिकदर और उसके साथ आये सेनापति उसे पहचानें वह उस भूमि पर प्राण निछावर कर चुकी थी, जो समूची उसने कभी नही देखी थी। यूनानी सेनाएँ जब सागलकी गलियाँ छान रही थी, तो वहाँ कल्याणीके गीत गाये जा रहे थे और जब तीस हजार शवोंके ऊपर उसकी चिता रखकर जलाई गई, तो सागलके गढ़का एक-एक कण देवी कल्याणी के जयनादसे मुखरित हो उठा। सिकन्दरका दिल छलनी हो चुका था।

यूनानी सेनाओंने सागलसे सबक लेकर आगे बढ़नेसे इनकार कर दिया। देवताओंको झूठ-मूठकी भेंट चढाकर उनकी मरजी जानी गई और सिकन्दर वापस लौट पड़ा।

अपनी अपूर्ण प्रतिमाके सामने सिर पटक-पटककर यूनानी कलाकार एरिस्टोवुलस न जाने कब तक रोता रहा !

•

परिणाम

महात्मा ईसासे चौथी शताब्दीके लगभग तीसरे पहरमे मगधके गौरवशाली सम्राट् महानन्दका वैभव धराशायी हो गया। जिसके विशाल सैन्य-बलको देखकर ससार-प्रसिद्ध सिकदर-जैसे विजेताके पाँव भी लौट गये थे, उस महानन्दकी अतुल शक्ति आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यके मस्तिष्ककी ग्रथियोंमे उलझकर खड-खड हो गयी थी। बुद्धि-पराक्रममे अपने समयके श्रेष्ठ धुरधरोको पछाड देनेवाले चाणक्यके दो विशाल हाथोने एक नवीन साम्राज्यकी स्थापना करनेके लिए मगधकी राजधानी पाटलिपुत्रके तोरण-द्वार खोल दिये।

ये दो विशाल हाथ थे चन्द्रगुप्त मौर्य और उत्तर पर्वतीय भागका एक महाबली राजा पर्वतक। चाणक्यने उन दोनो हाथोमे मगधके विजित राजदडको दो टुकडे करके आधा-आधा बाँट देनेका वचन दिया था, किन्तु एक म्यानमे दो तलवारे चाणक्यकी नीतिमे नही थी। सत्ता प्राप्त होते ही आचार्य विष्णुगुप्तके मस्तिष्ककी दुधारी तलवार अपना काम करने लगी।

पर्वतराज अकेले नही थे जिन्हे मुट्ठीमे दबाकर भीच दिया जाता। उनके साथ उनके पुत्र मलयकेतु, तीन तीन कुशल मत्री और सैकडो गुप्तचरोका एक विशाल दल था, जिनकी पीठपर उत्तरीय पर्वतोके देवकाय मानवोकी एक सुगठित सेना थी। चन्द्रगुप्तकी सैन्य-शक्ति पर्वतराजकी अपेक्षा बहुत निर्बल थी, और वही आचार्य विष्णुगुप्तका प्रिय पात्र था।

पचास वर्षके निर्बाध राज्यकालमे महानन्दने वैभव और विलासका जो ठाट-बाट पाटलिपुत्रके राजमहलमें जोडा था, देशी और विदेशी सुन्दरियोका जो जमघट उसने एकत्र कर लिया था, पर्वतोका निवासी सीधा-

सादा राजा ठीक तरह समझ नहीं पा रहा था कि इस सब सामग्रीका उपयोग किस सयमके साथ करे।

तब एक दिन महानन्दके अन्त पुर-रक्षक महाप्रतिहार अमितवीरने आचार्य विष्णुगुप्तकी राजसी झोपडीके सम्मुख पहुँचकर द्वारपालोंसे आचार्यसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। चाणक्यकी स्वीकारोक्तिके बाद उसे भीतर पहुँचा दिया गया। महाप्रतिहारने साष्टांग दण्डवत् कर निवेदन किया—

"आचार्यवर, मैं बडी भयंकर परिस्थितिमें फँस गया हूँ।"

आचार्य अपने सामने रखी पोथीमें मोरपखीसे श्लोक लिखते रहे। सेवकने आगे बढकर विनयपूर्वक कहा

"अन्त पुरमें एक मोहिनी है, जो विगत सम्राट्की सौन्दर्यकी खोजमें अन्तिम और श्रेष्ठ थी। भगवन्, महामना पर्वतराज और नरश्रेष्ठ चन्द्रगुप्त महाराज दोनोंकी आज्ञाएँ एक ही समय मेरे पास आई है कि मैं मोहिनीको उनकी सेवामें भेज दू। एक ही समय दोनो स्वामियोंकी एक ही आज्ञाका यह सेवक किस प्रकार पालन कर सकता है, आचार्यवर ..?

आचार्यने मोरपखी हाथसे रख दी। उनके गम्भीर मुख पर एक हल्की-सी मुसकराहट आई और वह बोले, "इतनी साधारण-सी बात और इतनी बडी विपत्तिकी कल्पना! ससार जानता है कि जब दो बराबरकी शक्तियोंमें किसी वस्तु पर विवाद होता है, तो उसे तीसरे व्यक्तिको सौंप देना चाहिए।"

बिना पलकें झपकाये महाप्रतिहार आचार्यके मुँहकी ओर देखता रहा। "तीसरा व्यक्ति!" उसके मुँहसे निकला।

"हाँ", आचार्य बोले। "उस कन्याको हमारे पास भेज दो और दोनो सम्राटोंके पास सूचना भिजवा दो कि उनकी इच्छित वस्तु हमारे पाससे मिल सकती है।"

महाप्रतिहारने छुटकारेकी लम्बी साँस छोडी और सिर झुका कर आचार्यके कक्षसे निकल गया।

कुछ समय बाद चाणक्यके कक्षके द्वारपालोंने तथाकथित मोहिनीको कक्षके भीतर कर दिया। आचार्य पुस्तक-रचनामें तल्लीन थे। बहुत देर तक उनकी मोरपखी चलती रही। फिर सहसा ही रुक गयी। उन्होंने दृष्टि ऊपर उठाई और उनकी भौंहें फैल गयी।

आचार्य विष्णुगुप्तके सामने सौन्दर्यकी सर्वोत्तम कल्पनाका साकार रूप प्रस्तुत था। मोरके पखोंकी कोमलताको मात करनेवाली लम्बी-लम्बी पलकोंके पारसे दो नील वर्ण गोल और सजीव मणियाँ उनके ऊपर टिकी हुई थी। आचार्यकी दृष्टि एक क्षणके लिए मणियोंसे टकराकर कलाकी उस अनिद्य प्रतिमाके बाहरी आकार-प्रकार पर पडी। महानन्दके वैभवके चिह्नस्वरूप मूल्यवान् रत्नजटित परिधानोंसे वह प्रतिमा अलकृत थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उर्वशी और मेनका इस लोककी देवी है।

एक क्षण विचारकर आचार्यने फिर अपनी मोरपखी उठाई और सामने खुली पुस्तक पर एक श्लोक लिखा। फिर मोरपखीको रखकर उनकी दृष्टि ऊपर पडी। इस बार इस दृष्टिमें दर्शनका अपूर्व भाव था।

मोहिनी आचार्यको अपनी ओर सबोधित देखकर विनयपूर्वक प्रणाम कर रही थी। चाणक्यका दायाँ हाथ ऊपर उठा और उन्होंने मन ही मन कोई श्लोक पढकर आशीर्वाद दिया। फिर बोले

"हम समझते थे कि हमने महानन्दका विनाश किया, किन्तु हमारी भूल थी। महानन्दका विनाश करनेवाली और भी वस्तुएँ इस ससारमे वर्तमान थी।"

रूपकी प्रशसाका यह अनोखा ढग देखकर सुन्दरी चौंकी। उसकी पलकें तीन-चार बार जल्दी-जल्दी झपकी और उसने कहा, "सृजन-शक्तिका मर्यादाहीन उपभोग सदा ही विनाशका कारण हुआ है, देव! इसमें उस शक्तिका दोष कुछ भी नही है।"

आचार्यकी मुद्रासे प्रकट हुआ कि इस उत्तरको सुनकर वह प्रसन्न हुए। उन्होने कहा, "तुमने ठीक कहा देवी! किन्तु सृजन-शक्ति जब आवश्यकतासे अधिक मोहक होती है, तो उसका प्रयोग करनेके स्थानपर उपभोग करनेमें लीन हो जानेमे मनुष्यका कोई भी दोष नही। कालकी गतिकी प्रगतिको रूप देनेके लिए किसी भी शक्तिका प्रयोग उस शक्तिके लिए सबसे बडा गौरव होता है।"

"नि सदेह, आचार्यवर", मोहिनीने कहा। आचार्यका कथन अकाट्य था।

अब आचार्य गम्भीर हो गये। "महानन्दकी एक शेष शक्ति हमारे कालकी गतिको भी मोह रही है। हम प्रगतिके लिए उस शक्तिका प्रयोग करना चाहते हैं। क्या देवी इसे अपने लिए गौरवकी बात समझेगी?"

सुन्दरी चौंकी, "दासी आचार्यका मतलब नही समझी।"

"मतलब बहुत सीधा-सच्चा है," आचार्यने कहा। "देवीकी सृजन-शक्ति हमारे और मगधके कालकी प्रगतिमें सहायक दो भुजदण्डोको अनावश्यक रूपमे अपनी ओर आकर्षित कर रही है। हम देवीको उसी स्थिति में रखकर केवल शक्तिका मुख विनाशकी ओरसे निर्माणकी ओर मोड देना चाहते हैं।"

सुन्दरी सहमी-सी खडी रही। वह अब तक भी विकट चाणक्यका अर्थ नही समझ पायी थी। इसी आशयसे उसके मुखपर मूक प्रश्न झाँक उठा। फिर मुखर होकर उसने कहा, "महाराजाधिराज पर्वतराज और चन्द्रगुप्त मौर्य "

"देवीने ठीक समझा," आचार्य बोले। "ये ही मगधराज्यके वे भुजदण्ड है, जिनपर मगधका भविष्य टिका हुआ है। किंतु अखण्ड मगधका राजदण्ड एक है और उसे एक ही हाथ सभाल सकता है। कालकी प्रगतिमें सघर्ष न हो, इसलिए हमे आँख मीचकर दोनो भुजदडोमेंसे एकको काट देना होगा। देवीकी शक्तिका प्रयोग इस कार्यमें होना नि सदेह देवीके लिए गौरवकी बात होगी।"

भयसे आतंकित मोहिनी लडखडा गयी। उसके सामने कौटिल्यका सच्चा स्वरुप खडा था। आज तक उसने केवल ऐसे पुरुषोके दर्शन किये थे, जो उसे उपभोग करना चाहते थे। आज वह एक ऐसे पुरुषके दर्शन कर रही थी, जो उसका प्रयोग करना चाहता था। उसके त्रस्त नेत्र इस विचित्र परिस्थितिसे टकराकर विस्फारित हो गये। कुछ देर मौन रहनेसे ही उस शान्तिका कुछ अश लौटकर आ पाया, जो थोडी देर पहले मौजूद थी। फिर वह शीश झुकाकर क्षुब्ध स्वरमे बोली, "हत्याके रूपमे सृजन-शक्तिका प्रयोग उसके लिए गौरव नही, एक ऐसा कलक है, जो किसी भी काल और देशमे क्षमा नही किया जा सकता, देव !"

"देवी भूलती हैं", आचार्यने अविचलित स्वरमें कहा। "गौरव और कलककी दो विपरीत राहोके सगमपर ठहरकर प्रत्येक मनुष्य यही सोचता रह जाता है कि वह किधर जाय ? किन्तु देवी, इन दो राहोको जमकर आज तक कोई भी नही पहचान पाया। देवीको उसका कारण मालूम है ?"

"नही," सुन्दर नारी-मूर्त्ति तनिक हिलकर बोली।

"तो सुनो, देवी," आचार्य बोले। "गौरव और कलककी दो राहें सदा अपना क्षेत्र बदलती रहती हैं। यही कारण है कि कही एक स्थान पर टिककर कोई उन्हें आजतक नही पहचान पाया।"

मोहिनी नतमस्तक हो गयी। "आचार्य आज्ञा दे। किस भुजदण्ड पर कालका कोप है ?"

"पर्वतराज पर," आचार्यने शान्त वाणीमे उत्तर दिया।

"पर्वतराज !" मोहिनी जैसे चौंक पडी।

"हाँ !" इस विस्मयमे विस्मित होकर आचार्य मोहिनीका मुख ताकते हुए बोले।

"ओह !" मोहिनी मखमलसे ढके हुए फर्शपर सिर रखकर पसर गयी। "नही, नही, देव ! ऐसी आज्ञा न दीजिए।"

"क्यों ?" आचार्य एक क्षण अवाक् रह कर बोले, "हम देवीका आशय नहीं समझे..."

मोहिनी रोकर बोल उठी, "आज तक किसी पुरुषको देखकर यह अधम नारी विचलित नहीं हुई। पर्वतराज पहले पुरुष थे, जिन्हें ..जिन्हें मन-ही-मन वह अपना मन सौंप चुकी है।"

आचार्य खड़े-खड़े हाथ मलने लगे। कुछ समय तक कक्षमें एक अरुचि-कर-सा मौन छाया रहा। सहसा भूमिपर पसरी पड़ी नारीमूर्ति वेगके साथ उठकर सीधी खड़ी हो गयी। लाल आभासे आलोकित मुखपर किसी दृढ़ निश्चयकी छाप प्रतीत हो रही थी। आचार्यके नेत्रोंमें नेत्र गड़ाकर उसने कहा, "आचार्यवर, प्रगति चाहे इतिहासमें कुछ भी लिखे, गौरव और कलंकका दोराहा चाहे जितनी तीव्रतासे परिवर्तित होता रहे, किन्तु नारी-का प्रेम अडिग है और प्रेम किस प्रकार कलंकित होता है यह वह सदासे जानती आयी है और सदा जानती रहेगी . मैं मैं .."

चाणक्य एक फीकी हँसी हँसे। इस हँसीमें उन मान्यताओंकी उपेक्षा थी, जिन्होंने वोखेसे शाश्वत होनेकी घोषणा कर रखी थी। वह बोले, "सदा एक-सा रहा है, सदा एक-सा है, सदा एक रहेगा, इन उक्तियोंका उच्चारण करनेवाले संसारके सबसे बड़े धूर्त और पाखंडी हैं। हम आज जो श्लोक लिख जायेंगे, आनेवाला समय उनमेंसे अनेकोंको असत्य और पुरातन कहकर हमें पीछे छोड़ देगा। आज जो हम लिख रहे हैं वह सत्यके आधारपर है।" और सहसा ही उस अतीव आकर्षक रमणीके मुखपर जमे हुए आचार्यके नेत्र फैल गये। उनमें आश्चर्य था, क्रोध था और साथ ही साथ एक भयानक उपहास भी था। उनका स्वर तीव्र हो गया और उन्होंने भौंहें टेढ़ी करते हुए कहा, "और अब हमारे सामने एक नवीन रहस्यका भेद प्रकट हुआ है। पाखंडी महानन्दके महलोंमें रूपके बलपर निवास करने वाली नारी.. तुझे और केवल..." उनकी आँखोंकी ज्योतिमें घृणाके चिह्न उभर आये, "तुझे जीवित पुरुषसे प्रेम करनेका अधिकार नहीं है।"

"ओह !" रमणीका सिर घूम गया। उसके नेत्रोकी पुतलियाँ फिरने लगी और अचेतन होते हुए उसके मस्तिष्कमें आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यके अन्तिम शब्द गूँज उठे "तेरे हाथो पर्वतराजका अन्त, यही चाणक्यकी अन्तिम व्यवस्था है !"

सौन्दर्यकी वह कलामूर्त्ति अपने उस रहस्यको अपने भीतर ही घोटे भूमिपर अचेतन होकर गिर पडी, उसने आचार्यप्रवर चाणक्यके क्रोधको भडका दिया था। आचार्यने दण्ड-घोष किया और प्रहरियोके आ जानेपर रमणीको उसके कक्षमे भेज देनेका आदेश दिया। निर्देश था कि हर घडी उसके द्वार पर आचार्यके विशेष अगरक्षकोका पहरा रहे और उसके जागरण पर उसे पर्वतराजके पास सोलहो शृगारसे विभूषित करके भेजा जाये।

× × ×

आचार्यके मस्तकपर उभरी हुई धमनी अभी दब भी नही पायी थी कि प्रहरीने उद्घोष किया "मगध छत्रपति, महाराजाधिराज, सम्राट्—चन्द्रगुप्त मौर्य उपस्थित होना चाहते हैं, आचार्यवर !"

"अनुमति है", आचार्यने कहा।

चन्द्रगुप्तने कक्षमें प्रवेश करते ही देखा कि चौकीके सामने आचार्य विष्णुगुप्त छातीपर हाथ बाँधे खडे हैं। दोनोकी अवस्था एक ही थी। अन्तर था तो यह कि आचार्यके नेत्रोसे क्रोधकी सर्वभक्षी किरणे विदा ले रही थी और उनके प्रबल शिष्यके नेत्रोमे उनका प्रवेश हो रहा था।

कामना और वासनासे दग्ध हृदयकी ओरसे सिर हटाकर चन्द्रगुप्तने कहा, "आचार्यवर, आपने !"

अबतक आचार्यने गुरुके प्रति शिष्यके अभिवादनकी प्रतीक्षा की थी। जब वह नही मिला, तो बात आरम्भ करनेसे पूर्व ही उन्होने अपना कर्त्तव्य निभाया। आशीषका हाथ ऊँचा उठाते हुए वह बोले, "महाराजाधिराज, सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यकी जय !"

चन्द्रगुप्त अप्रतिभ हो गया। अपनी भूलके पश्चात्तापमे वह एक क्षण तक अवाक् खड़ा रहा, किन्तु हृदयमे धधकती हुई ज्वाला फिर भडकी।

वह बोला, "नहीं, कहिए कि आचार्यप्रवर, ब्राह्मणकुलशिरोमणि, महर्षि विष्णुगुप्त चाणक्यकी जय। चन्द्रगुप्तका नाम न लीजिए। खिलौनोंको इतना बढ़ावा नहीं दिया जाता, आचार्यवर!"

"ओह!" चाणक्यने भौंह ऊँचे उठायी। "आचार्यका शिष्य विद्रोही बनकर आया है, और वह विद्रोह भी केवल एक साधारण नारीके लिए!"

चन्द्रगुप्तके माथेपर बल पड़ गये, "नहीं, एक सम्राट्की साधारण-सी आज्ञाका उल्लंघन किये जानेके लिए।"

चाणक्य उपेक्षासे हँसे। "साधारण आज्ञाएँ सम्राट् नहीं, सम्राटोंके अनुचर देते हैं। हम मगधके सम्राट्की हर इच्छाको जानते हैं। हम जानते हैं कि मगधके अथाह और विस्तीर्ण समुद्रमें शासन करनेवाले जलयानपर अभी हमारे खिलौनेका एक ही पैर रखा गया है। जब यानमें उनके दोनों पैर आ जायेंगे, तब हम उसे अपनी समस्त शक्तिसे किनारेपर खड़े होकर बीच समुद्रमें धकेल देंगे और उसे उसके भाग्यपर छोड़ देंगे। उससे पहले सम्राट्के लिए अपने मनमें विद्रोहको स्थान देना उचित नहीं है। आचार्य विष्णुगुप्तने एक दिन कुमार चन्द्रगुप्तके सामने जो प्रतिज्ञा की थी उसके पूर्ण होनेसे पहले . "

लेकिन चन्द्रगुप्तके पास अपने बोल थे। वह बीचमें ही बोल उठा, "उसके पूर्ण होनेसे पहले सम्राट्को एक पलके लिए भी यह नहीं समझने दिया जायेगा कि मगध उसका है, यही न? जब चन्द्रगुप्तके हाथ मगधकी विद्रोही शक्तियोंको जड़से उखाड़ फेंकेंगे, तब उसे दूधमें पड़ी हुई मक्खीकी तरह चुटकीसे उठाकर फेंक दिया जायेगा।"

"कुमार!" आचार्यके मस्तिष्ककी धमनी फिर उभर आयी। यह अविश्वासकी सीमा थी। उन्होंने कहा, "सम्राट् होनेका यह अर्थ नहीं है कि मर्यादा न रहे। चन्द्रगुप्तने मगधका साम्राज्य जय कर लिया है। प्यासेके सम्मुख दूधका स्वच्छ पात्र आ गया है। हमें डर है कि तीखे डंकवाली यह वीर मक्खी उतावलीमें दूधमें न गिर पड़े। स्मरण रखना, यदि ऐसा

हो गया, तो उसे दूधसे बाहर निकालकर फेंक देनेवाली चुटकी आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यकी नही होगी, पर्वतराजकी होगी। सम्राट् चन्द्रगुप्त, राजनीतिक सूझ-बूझसे हीन राजा देर-सवेर निश्चय ही विनाशको प्राप्त होता है। गुरुके प्रति शिष्यके अविश्वासकी यह चरम सीमा है।"

चन्द्रगुप्त चाणक्यके एक ही प्रहारसे तडप गया। कामनाओकी आग इतनी जल्दी नही बुझा करती। वह चाहता था कि मगध विजय कर लेनेके बाद उसके लिए एक निर्बाध क्षेत्र हो। उसने कहा, "आचार्यने ही शिष्यको राजनीतिमें अविश्वासकी यह सीख दी है। क्या आज वही शिक्षा गलत होने जा रही है?" साथ ही उसका एक हाथ अपनी कमरसे लटकी तलवारकी मूठ पर अनजानमें ही फिरने लगा।

चन्द्रगुप्तके हाथकी स्थिति चाणक्यके तीव्र नेत्रोंसे छिपी नही रही। उनके मस्तिष्ककी धमनी और भी तीव्र गतिसे धमकने लगी। नेत्र आश्चर्यसे विस्फारित हो गये। यही वह व्यक्ति था, जिसके लिए उन्होने मगधका साम्राज्य जय किया था। यह तीव्र स्वरमें बोले, "हमें प्रसन्नता है कि राजनीतिका मूलमत्र मगधराजकी समझमे आ गया है। अविश्वास ही वह मूलमत्र है, जिसके आधारपर राजनीतिका पोषण होता है। हमने आजतक सम्राट्से यह प्रार्थना नही की कि हमपर अविश्वास न किया जाय। इस ससारमें प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी है। न जाने हम भी सम्राट्के उत्कर्षमे अपना कोई स्वार्थ साध रहे हो। चन्द्रगुप्त, ध्यान रखना कोई शासक चाहे कितना ही राजनीतिमें निपुण हो, किन्तु समस्त विश्वासो और अविश्वासोके बीचसे निकलकर जो परिणाम सामने आता है, उसके अनुरूप ही राजनीतिमे विश्वासके पात्र निश्चित करने होते हैं। अपने स्वार्थकी दिशामें स्वार्थ रखनेवाले व्यक्तिपर जो भी व्यक्ति विश्वास नही करता, उसे अपने नाशपर अवश्य विश्वास करना पडता है। अब आगे बढो, यदि इस खड्गमे धार हो, तो इसका उपयोग करो।"

चन्द्रगुप्तका मस्तक जिस मुद्रामें नीचे द्वारसे होकर आया था, फिर उसी स्थितिमें जड हो गया। सहसा वह पृथ्वीपर गिरकर आचार्यके हाथो-

को चूमता हुआ बोला, "क्षमा, आचार्यवर, क्षमा कीजिए ! मैं वासनासे अन्धा हो गया था ।"

चन्द्रगुप्तके शीश पर आशीषका हाथ रखते हुए आचार्यने कहा, "कल सुबह तक सम्राट्के शेष सशयका भी निवारण हो जायगा । चन्द्रगुप्त, जब तक सूर्य और चन्द्रमा आकाशमें जगमगाते रहेंगे, तेरी कीर्त्ति-पताका फहराती रहेगी ।"

अपनी आँखोंकी नमी पोछता हुआ यह शिष्य सम्राट् गुरुके कक्षसे चुपचाप बाहर आ गया ।

× × ×

उसी रातको उर्वशीकी कल्पनाका रूप देकर राज-परिचारिकाओंने मोहिनीको मानव पर्वतराजके महलमें भेज दिया ।

धड़कता हुआ हृदय अपने एक हाथसे आँचलमें छिपाकर थामे हुए प्रेमकी वह अनधिकारिन् पर्वतराजके कक्षमें पहुँची । यह व्यक्ति प्रौढ़ताकी सीमाको छू रहा था, किन्तु प्रेमसे वंचिता एक नारीके लिए उसमें न जाने ऐसा क्या था, जिसकी उपेक्षा करना मोहिनी-जैसी नारीके लिए भी सम्भव न हो सका । क्या वह विलासकी आकांक्षा थी ?

"स्वागत है", पर्वतराजने उठकर कहा, "प्रतीक्षा और मिलनके संगमपर पुरुष नारीका अभिनन्दन करता है।"

आकांक्षा कितनी स्पष्ट बोल रही है ! किन्तु कितनी निर्मल वाणी है ! मोहिनी ठिठककर द्वारपर खड़ी हो गई ।

"न, न" उँगलीसे वर्जना करके पर्वतकने बचपनका हास्य उँडेलते हुए कहा, "सकोच मिलनके आनन्दका नाश कर देता है । हमने सैकड़ों अनुपम सुन्दरियोंको देखा और उन सबकी स्मृतियाँ हमारे मन पर चित्रकार की कलाकी तरह अंकित हैं । वैराग्यसे नहीं, किन्तु उन स्मृतियोंकी उपेक्षा न कर पानेके कारण हम ससारकी विलासक्रीडासे मुँह मोड़ चुके हैं । इस सोई हुई कामनाकी अग्निको आज एक ऐसी मागवीने फिर प्रज्वलित किया है, जिसके कारण हमें भय है कि कहीं वे समस्त स्मृतियाँ धुल-पुँछ न जायँ ।"

पर्वतककी वाणीमे कामना, सरलता, निर्लज्जता और मोहका समान समिश्रण था, फिर भी न जाने क्यो वह इतना मोहक था ! महानन्दकी विलास-भूमिमे पली हुई राजरमणीका हृदय न जाने क्यो विधा जा रहा था। उसने कातर नेत्रोसे पर्वतकके रूपमें कामदेवके दर्शन किये। पुरुषकी इस छविने किस बुरी तरह नारीको मोहा था।

द्वारपर खडी मोहिनीके अधर कुछ हिले, किन्तु अधरोकी उस गतिमे कोई मानवी स्वर नही था। वह कुछ कहना चाह रही थी, पर उसकी वाणी जड थी।

पर्वतक खिलखिल कर हँस पडा, "मगध आश्चर्यका भडार है और उनमे एक आश्चर्य तुम हो। क्या तुम हमसे यह कहलाना चाहती हो कि हम तुमसे प्रेम करते हैं ?" वह फिर बडे ज़ोरसे हँसा। उस हास्यमे चपलता थी। "कितनी भोली हो ! अपने राज्यको क्षणभरमें उलट-पलट करनेकी शक्ति रखनेवाला राजा जब आज्ञा देकर किसी रमणीको अपने कक्षमे बुला भेजता है, तो उसे प्रेमका नाम कोई नही देता। राजा यदि प्रेमका दम्भ करे, तो भी कोई विश्वास नही करता। मालूम होता है कि तुम हमारी आज्ञासे बाध्य होकर यहाँ आयी हो। हम मुँहसे नही कहते, किन्तु प्रेमका परिचय परिणामसे अवश्य दे सकते हैं। ऐसा परिणाम, जिसकी तुम्हें आशा भी नही हो सकती। आचार्य विष्णुगुप्तका कहना भी तो यही है कि प्रत्येक सत्य-असत्य उसके परिणामसे प्रकट हो सकता है।"

मोहिनीका मस्तिष्क भन्ना उठा। हथौडोकी तरह उसके मानसपर इन शब्दोकी चोट पडने लगी, 'हत्या नारीके लिए कलक है हत्या नारीके प्रेमपर अमिट धब्बा है, जिसको देखकर आनेवाला समय सदा नारीको अविश्वसनीय कह-कहकर उसका तिरस्कार करता रहेगा।' वह सिर पकडकर वही द्वारपर बैठने लगी।

पर्वतक चपलताके साथ आगे बढा। उसे बाहोमे सभालकर उसने आसनका आधार दिया। मोहिनीने नेत्र खोले और उसकी पलकोकी लम्बी पक्ति पर्वतकके माथेसे छू गयी। वह तडपकर खडी हो गयी।

"ओह !" पर्वतक सीधा खड़ा होकर उसी स्मित मुद्रामें आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला । "तो हमारा ही विचार ठीक था । मागधी, तुम मजबूर होकर आयी हो । अब हम अपने प्रेमको क्या कहकर समझाएँ ? हमें उस प्रेमका प्रमाण भी देना है—बड़ी कठिन समस्या है—है न ?"

मोहिनीके लिए किसी पुरुषका इस प्रकारका प्रेम-निवेदन सर्वथा नवीन था । इस नवीनतामें एक ऐसा आकर्षण था, जो नागपाशकी तरह उसे चारो ओरसे जकड़ता हुआ जा रहा था । उसने पलकें ऊपर उठाकर पर्वतकको देखा ।

"मालूम होता है कि तुम अनबोलती प्रेमिका हो," पर्वतकने कहा । "भला, विधाताने क्या संसार रचाया है ! लेकिन नहीं, लोग झूठ कहते हैं । इस संसारको विधाताने नहीं रचाया । वह इतनी बड़ी असंगति नहीं रख सकता । वास्तवमें जब लोगोंको कुछ समझमें नहीं आया, तो उन्होंने उस नासमझीका भार किसीके सिरपर थोपनेके लिए स्वयं विधाताकी रचना कर डाली । तो, हमें प्रमाण देना है लेकिन हाँ . इतनी देरसे हम जो बोल रहे हैं वह सब तुम्हें सुनाई भी दे रहा है ?"

"नरहत्या पाप है !" मोहिनीका अन्तर मूक भाषामें बोल रहा था । उसीमें उसे पर्वतकके वे शब्द सुनाई दिये और आप-ही-आप उसकी गरदनने हिलकर जैसे अपनी स्वीकारोक्ति प्रकट कर दी ।

पर्वतक बड़े जोरसे हँसा । "मैदानोंके एक साधूने हमें एक बार बताया था कि सबसे बड़ा प्रेम त्यागमें है । देखें आज उसकी परीक्षा करके । मालूम होता है कि हमारा हृदय आज उसी प्रेमके दलदलमें फँस गया है । इसलिए तुम हमारे प्रेमका प्रमाण देखो, और हम त्याग करें ।" पर्वतकने गंभीर होकर कहा, "अच्छा, यदि तुम्हें हमपर विश्वास हो, तो हमारा संग स्वीकार करो, अन्यथा हम तुम्हें मुक्त करते हैं । स्वाधीन प्रेम ही प्रेमीके लिए सबसे बड़ा आकर्षण है ।"

और वह इस मनुष्यकी हत्या करने आयी है ! क्या संसारमें समस्त

नीति-अनीति केवल कल्पनाकी वस्तुएँ ही हैं ? मोहिनी अपने आप ही इसका उत्तर न दे सकी। वह द्वारकी ओर जानेके स्थानपर इस अपूर्व प्रेमीकी ओर बढी और उसके पैरोंपर गिरनेके लिए झुकी।

तभी पर्वतकने मोहिनीके गिरते हुए शरीरको अपनी बाहुओंपर सभाल लिया। वह हँसकर अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करता हुआ बोला, "यह बहुत पुरानी बात है। स्वाधीन प्रेमिकाका स्थान पैरोंमें नही, हृदयके पास होता है।"

"नही, पर्वतराज, नही!" मोहिनीने छतकी ओर भयसे निहारते हुए कहा, "मुझे क्षमा कीजिए।"

"क्यो, हमपर विश्वास नही ?" पर्वतकने शान्त किन्तु उत्सुक वाणीसे पूछा।

"मैं कहती हूँ मुझपर ही विश्वास मत कीजिए," उमडकर आते हुए पीडक रोदनको दोनो हाथोंमे रोकनेकी चेष्टामें मुँह छिपाये हुए मोहिनीने कहा—"मुझे आचार्य विष्णुगुप्तने आपकी हत्या करनेके लिए भेजा है।"

एक क्षण तक स्थिति समझकर पर्वतक ठहाका मारकर हँस पडा। "तब, आचार्यने नारी और पुरुषको समझनेमें पहली बार भूल की। यदि भूल नही की, तो भी हम यह खतरा उठानेके लिए तैयार हैं।" और उसकी आँखोमें साहस और विश्वासका सम्मिलित पुट दिखाई पडा।

मोहिनी सुबक उठी। "नही, पर्वतराज!" अपने मनकी पीडाको पलगपर गिरकर दबानेकी चेष्टा करती हुई वह बोल उठी, "मुझे प्रेम करनेका अधिकार नही है। मैं वंचिता हूँ। विगत सम्राट् महानन्दने जिन कन्याओंको सासारिक भावनाओंसे जबरदस्ती नोचकर केवल विनाशके लिए पालन किया था, मैं उनमेंसे एक हूँ—मैं विषकन्या हूँ।"

यही वह रहस्य था, जिसे चाणक्यने लक्ष्य किया था। यही वह भेद था, जिसे अगले दिन सुबहको जानकर चन्द्रगुप्तका मस्तक चाणक्यके सामने झुक गया था। इस रहस्यको इस प्रकार प्रकट होते देखकर इतनी देरसे

मुखर पर्वतकका मुख पीला पड गया। यह वह भौतिक संसार था, जहाँ भावनाएँ अपना मूल्य खो देती हैं।

लगभग एक घडी किंकर्तव्यविमूढ पर्वतक जहाँ-का-तहाँ खडा रहा। तबतक पलग पर पडी विषकन्या रोती-रोती शायद सो गयी थी। पर्वतकने कुछ निश्चय किया और वह कक्षसे बाहर निकला। एक परिचारिकाको उसने अपने पुत्र मलयकेतुको तुरन्त बुलानेके लिए भेजा। समय बीतते न बीतते वह आ गया। पर्वतकने उसके कंधेपर हाथ रखते हुए कहा 'वत्स, कल अपने देश लौट जाना। आचार्य चाणक्यकी विकट राजनीतिका दुर्गम चक्र चल रहा है। इस महाऋषिके अस्त्र अचूक हैं। एकबार ब्रह्माका अस्त्र निरर्थक हो जाय, किन्तु चाणक्यका अस्त्र नहीं चूकेगा। राजनीतिके प्रपंचमे न पडना, नही तो सर्वनाश होगा।"

"और आप ?" मलयकेतु आश्चर्यसे कुछ भी न समझकर बोला।

"हम ?" पर्वतराज हँसे, "आचार्यने हमारे लिए एक ऐसी अनुपम भेंट भेजी है, जिसे हम सब कुछ जानते हुए भी अस्वीकार करनेमें असमर्थ हैं। यह जानते हुए भी कि वह खैर, तुम जाओ। जैसा कहा वैसा प्रबंध करो।"

मलयकेतु विस्मयकी प्रतिमूर्ति बना कक्षकी ओर जाते हुए पर्वतककी विशाल पीठ देखता रह गया।

हिंसक

ईसाके जन्ममें अभी लगभग दो सौ वर्षसे कुछ कम ही शेप थे, जब विशाल भारतमें महान् अशोककी अहिंसाने मनुष्यकी पाशविक वृत्तियोपर विजय प्राप्त करके तथागतकी परपराको अजर-अमर कर दिया था। अशोकके बाद उसके वशज आये और चले गये, और जन-जीवनकी दुर्गम राहपर शान्ति-प्रेमियोके पदचिह्नोकी एक लबी कतार अंकित होती चली गई। लोग हिंसासे इतना घबराये, इतना भागे, कि अशोक-द्वारा कलिगके नरसहार जैसे कृत्योकी चर्चा अहिंसाका उपदेश देते समय उदाहरणके तौरपर प्रयोग करके भक्तोके मनोमें केवल झुरझुरी पैदा करनेके लिए की जाती थी। अहिंसा स्वय एक अस्त्र बन गई थी।

अशोक महान्‌के वशजोने अपने प्रपितामहकी लगाई हुई बेलको बराबर सीची, बढाई, यहाँ तक कि उसने जनताके शरीरको भी जकड लिया। फिर भी लोग सुखी थे क्योकि सुख शातिकी देन है। किन्तु कब तक?

परपरागत शातिसे सचित निधिपर विदेशियोके दाँत गडने लगे। मौर्यवशके अतिम सम्राट् बृहद्रथके समयमे यूनान उन विदेशी गिद्धोमे प्रमुख था। हर रोज़ गुप्तचर यूनान, तातार और फारसकी सशयजनक हलचलोके समाचार लाते। किन्तु इस कालकी यदि कोई उपेक्षित सस्था थी, तो वह सेना थी।

साठ वर्षके वयोवृद्ध महासेनापति इन समाचारोंसे त्रस्त होकर एक दिन महाराज बृहद्रथके सामने विशेष रूपसे उपस्थित हुए।

"परम भट्टारक, नीच विदेशी नही जानते कि बुद्धके धर्मका मर्म क्या है। ज्ञानको ग्रहण करनेसे पहले अज्ञानी सदा उसे नष्ट करनेकी चिन्तामें रहता है।"

"आपने ठीक कहा, महासेनापति," सम्राट्ने स्वर्णपत्रके आवरणसे मढ़ी हस्तलिखित विनयपिटकपर हाथ रखते हुए कहा। "विदेशोंमें धर्मप्रचार करनेके लिए अभी पर्यटकोंकी संख्या और बढ़नी आवश्यक है।"

महासेनापतिने होंठ भींचे। "अज्ञानीको समझानेसे पहले उसके प्रहारों को रोकना आवश्यक है, देवाधिदेव। इस समय विदेशी प्रहारको रोकनेके लिए बल संचय करना ही होगा। इसलिए मैं अपने पद-त्यागकी अनुमति चाहता हूँ।"

बल संचयकी आवश्यकता और महासेनापतिका पद-त्याग इन दो विरोधी बातोंसे किंचित् विस्मित हो सम्राट्ने पूछा, "क्यों? सेना तो आपके अधिकारमें जितनी सुखी है उतनी न कभी थी न कभी होगी।"

वृद्ध योद्धाने अपनी घनी मूँछोंके दो बाल दांतोंसे दबाकर नोच डाले। "सेनाके सुख और प्रजाके सुखमें वैर है, देव। नये और युवा हाथोंके द्वारा सेनाका संगठन होना चाहिए। बूढ़े बैलमें बल नहीं रहता। श्रीमन्!"

जिस किसी प्रकार महासेनापतिने अपना पदत्याग स्वीकार करा लिया। इसमें सबसे बड़ी कठिनाई उस अहिंसाप्रेमी सम्राट्के लिए यही थी कि नये सेनापतिकी नियुक्तिके लिए नियमके अनुसार सशस्त्र प्रतियोगिता होनी थी और इससे हिंसाकी गंध आती थी। इतने बड़े पदकी प्रतियोगितामें भारी संख्यामें जनताकी उपस्थिति अनिवार्य थी, जो जनसाधारणके आध्यात्मिक स्वास्थ्यके लिए निश्चय ही हानिकारक थी। सबसे बड़ी बात इस प्रतियोगितामें यह थी कि विजयीके हाथों द्वन्द्व-युद्धमें यदि पराजित प्रतियोगी मारा जाय, तो उसके लिए कोई दंड-विधान नहीं था।

इस अपूर्व प्रतियोगिताका समाचार पंख लगाकर उड़ा। पचासों वर्षसे जिस कलाकी उपेक्षा होती चली आई थी, इतने बड़े पैमानेपर उसका प्रदर्शन लोगोंके लिए दुर्लभ मनोरंजनका संदेश लेकर आया। तीर्थयात्रा पर ही निकलनेवाली सवारियाँ आज सजीं। गन्धर्वशालाओंके नृत्यगान उस दिन

बद हो गये। पाटलिपुत्रके गली-कूचोंमें परदेशियोंके द्रुतगामी पदचाप और उनके मुखोंसे निकलती उत्सुकताकी मर्मर ध्वनि मात्र ही सुनाई देती थी।

शस्त्र-विद्याका एकमात्र अखाडा महासेनापतिके प्रयत्नोसे पाटलिपुत्रमे अभी स्वतत्र रूपसे चल रहा था, नही तो सारी सैनिक क्रियाएँ सेना ही मे दिये जानेका नियम था। दसियो वर्षसे नई भरती न होने के कारण इस नियमका व्यवहार भी बहुधा नही होता था। इसलिए उस अखाडेका प्रधान वसत भाट पाटलिपुत्रके अधिकृत राज्योके भीतर शस्त्र-विद्यामे अपना सानी नही रखता था। सम्राट्की ओरसे इस प्रतियोगिता-प्रधान समारोहकी अनुमति थोडी-सी ही कठिनाईसे केवल इसलिए मिल पाई थी कि वसत भाटके निर्विरोध चुने जानेकी पूरी-पूरी आशा की जाती थी।

समारोहका प्रारम्भ असाधारण रूपसे हुआ। नगरके बीचोबीच बडे उद्यानमे बहुत ऊँचा पडाल बनाया गया ताकि स्थान न मिलनेके कारण अट्टालिकाओंके वातायान और प्रागणोपर छा जानेवाले दर्शक यदि कुछ सुन न सकें, तो देख सब कुछ सके।

सम्राट्ने अकथनीय हर्ष-प्रदर्शनके बीच सम्राज्ञी सुदर्शनादेवीके साथ मण्डपमे प्रवेश किया। सम्राट्की प्रौढ आयुमे उनका यह अन्तिम विवाह तीन हज़ारसे कुछ ऊपरकी सख्यामें आता था। अन्य अनेक रानियोका सर्वोच्च पद तोडकर सुन्दरी सुदर्शनाको पटरानीका पद दिया गया था क्योंकि उसके चित्तमें तथागतकी अपार भक्ति, उसकी वाणीमें बुद्धके प्रवचनोकी कोमलता, और उसके शरीरमें अप्सराओंकी कान्ति थी। इतने गुणोको लेकर वह मौर्य वशकी अतिम सम्राज्ञी बनी थी।

मध्यभारतके मदसौर नामक शक्तिशाली प्रान्तके अधिपति विशाखदत्त भोगपतिको उसके पदकी महत्ताके अनुरूप सभासदोमें सर्वोच्च आसन प्राप्त था। उसने सबसे पहले उठकर सम्राट्के सामने सिर झुकाया, और हौलेसे सम्राज्ञीके बायें हाथकी रत्नोंसे जगमगाती दो कोमल उँगलियोको चूम लिया।

सम्राज्ञी सुदर्शनाने अपनेमें एक हल्का-सा कंपन अनुभव किया, किन्तु वह अपनी स्वाभाविक मुसकानसे शांत पलकोंको प्रान्तपतिके प्रति उसके अभिवादनकी स्वीकारोक्तिमें झपकाकर सम्राट्के बराबरवाले सिंहासनपर बैठ गई। विशाखदत्त भोगपातने असंतोषकी एक गहरी और अलक्ष्य साँस ली। उनमें इस प्रकारका असंतोष अनुभव करनेकी शक्ति थी और वह शक्ति मौर्यकालके उस चरणमें सब जगह सर्वमान्य थी।

नियमानुकूल उद्घोषकने ऊँचे स्वरसे घोषणा की "महाप्रतापी मौर्यकुलके महासेनापतिने अपने पदका स्वेच्छासे त्याग किया है। इस महत्त्वशाली पदके लिए वसंत भाटका नाम प्रस्तुत है। जिस किसीको इसमें विरोध हो, जो कोई इस गौरवपूर्ण स्थानके लिए अपनेको वसंत भाटसे अधिक योग्य और बली समझता हो वह प्रतियोगिताके लिए अखाड़ेमें आये।" और फिर उसने सम्राट् द्वारा विशेष रूपसे बताये एक वाक्यको अंतमें और जोड़ दिया· "है कोई ऐसा वीर?"

चारों ओर निस्तब्धता छा गई। घड़ीकी चौथाई तक एक साँस तक सुनाई न दी। कोई नहीं बोला। इस बीच वस्त्राभूषणोंसे सजा अपनी चौड़ी छाती फुलाये वसंत भाट एक ओरसे कूदकर सामने आया और उसने अपनी कमरसे लटका लंबा खड्ग शानसे एक ओर करके सम्राट् बृहद्रथके सामने शीश झुकाया।

उद्घोषकने दूसरी बार वही घोषणा दुहराई, पहलेसे और भी अधिक ऊँचे स्वरमें। फिर घड़ीकी एक चौथाई ऐसे ही बीत गई। और फिर तीसरी बार घोषणाका तीव्र स्वर मण्डपके नीरस वातावरणमें गूँज उठा। चुप्पी! जैसे सारा पाटलिपुत्र दिनको रात समझकर सो गया था।

सहसा एक ओरको कुछ हलचल-सी हुई, कुछ रव भी हुआ। लोगोंके बीचसे निकलकर एक भव्य और वीर आकृति अलग खड़ी हो गई। वह व्यक्ति हाँफ रहा था, जैसे बहुत दूरसे चलकर आया हो।

सम्राट्ने उसे संशयसे देखा। असंख्य मनुष्योंकी निगाहें उसपर जम गईं। यहाँ तक कि कट्टर बौद्ध धर्मकी अनुयायी सम्राज्ञी सुदर्शनाकी

दृष्टिमें प्रशंसाका भी कुछ भाव था। वसंत भाटकी आँखोंसे स्फुलिंग छूट रहे थे।

नवागतने अपना खड्ग ऊँचा करके सम्राट्‌के सम्मानमें गरदन झुकाई। उद्घोषकने पूछा, "तुम्हारा नाम?"

"पुष्यमित्र," शांत किन्तु सबल वाणीमें उत्तर मिला।

अब जैसे सारी नीरवता हवा हो गई। चारों ओरसे स्पष्ट किन्तु दबे स्वरमें इस अनोखे साहसको दम्भका नाम लिया जाने लगा। उद्घोषकने इस शोर-शराबेके बीच नवागतका परिचय आदि पूछकर सम्राट्‌की ओर देखा। सम्राट्‌ने महासेनापतिकी ओर देखा, और महासेनापति अपनी आँखोंमें प्रशंसाकी सच्ची चमक लिये युवक पुष्यमित्रमें अपना भावी उत्तराधिकारी ढूँढ रहे थे।

अभ्यर्थनाके लिए युवक पुष्यमित्र सीधा सम्राट्‌के सामने आया। सम्राट् और सम्राज्ञी दोनोंने उसकी अभ्यर्थनाको स्वीकार किया। पुष्यमित्रकी दृष्टि ऊपर उठी और सहसा ही वह सम्राज्ञी सुदर्शनाकी दृष्टिसे टकरा गई। मनने बड़े जोरसे उस रूपराशिकी गरिमा बखाननी चाही, किन्तु मनके मालिक पुष्यमित्रने संयम किया। जहाँतक हाथ नहीं पहुँच सकता वहाँ मनके अश्वकी लगाम रोक लेनी ही बुद्धिमानी है।

अखाड़ेके बीचमें दोनों प्रतियोगियोंको आमने-सामने देखकर प्रतियोगिताके परिणामके विषयमें पहले सम्राट् हीके मनमें संशयका उदय हुआ। जोड़ीदारोंके बलमें उतनी विषमता नहीं थी, जितनी प्रतीत हो रही थी। साथ-साथ ही लोगोंने इस तथ्यका अनुमान किया, और कलरव मद्धिम पड़ता गया।

खड्ग-युद्धके आरम्भके कुछ क्षण बड़े नीरस बीते। फिर दाँव-पेच और कौशलका प्रदर्शन करनेका प्रयत्न किया गया। किन्तु शीघ्र ही संघर्ष तीव्र और मर्मान्तक हो गया। वसंत भाट, पाटलिपुत्रकी वीरताका नायक था। पुष्यमित्र पाटलिपुत्रका सम्मानित अतिथि था। और नायककी आँखों-

में भय छाता जा रहा था। युवककी कलाका जोड नहीं मिल रहा था। यह स्पष्ट प्रकट हो रहा था कि कला प्राचीनताकी बपौती नहीं होती।

सहसा महासेनापतिके मुँहपर घृणाका भाव प्रकट हुआ। वसत भाटने ईर्ष्याके वशीभूत होकर ओछा दाँव मारा था। यह दाँव नियमके विरुद्ध था। किन्तु उस ओछेपनको लक्ष्य करनेवाला पारगत ही वहाँ कौन था? पुष्यमित्रने कौशलसे उस दाँवको तो बचा लिया, लेकिन उसकी आँखोमें प्रतिहिंसाकी ज्वाला कौंध गई। उसके बादके क्षण निर्णायक थे। रण-कुशलतासे भरे लगातार अनेक प्रहार करके पुष्यमित्रने विरोधीके हृदयमें अपना लबा खड्ग लगा दिया। पीछे अखाडेकी सीमा तनिक ऊँची थी, और वसत भाट लाचार हो गया था।

इसके बाद अचानक ही एक ऐसी घटना घटी, जिसने मौर्यकुलका अन्त करनेमे प्रमुख भाग लिया। तेजीसे पुष्यमित्रकी निगाहे अपार जनसमूहकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए घूम गई। जनता आँखें फाडे खडी थी। वसत भाट हार गया था यह कुछ लोगोपर प्रकट हो पाया था कुछ पर नहीं। वह अल्प क्षण इस प्रकारका था, जिसमें वसत भाटका जीवन पुष्यमित्रके खड्गकी एक जुबिशपर टँगा हुआ था। पुष्यमित्रके लिए सोचनेका समय इतना थोडा था कि यदि वह हिचकिचाहट दिखाता, तो सम्राट्के इशारेसे प्रतियोगिता उसके पक्षमें समाप्त घोषित कर दी जाती। इस अल्प क्षण को केवल इने-गिने व्यक्तियोने पहचाना, और उनमें सम्राज्ञी सुदर्शना भी एक थी।

एक क्षण, नहीं, एक क्षणका कुछ भाग ससारके बडे-बडे परिवर्तनोका उत्तरदायी होता देखा गया है। परिश्रमकी गरमी, विरोधीकी नीचताकी प्रतिक्रिया तथा प्रतियोगिताका जोश इन सबने एक साथ मिलकर युवकके मस्तिष्कमे आग लगा दी, और उस एक क्षणके कुछ भागके समाप्त होनेतक पुष्यमित्रका चमचमाता खड्ग विद्युत्की गतिसे वसत भाटकी छातीके पार हो गया। कुछ देर वह खडा रहा, फिर कटे वृक्षकी भाँति भूमिपर गिर पड़ा।

कर्णभेदी कोलाहल मचा। व्यायामसे थके भारी पग एकके बाद एक रखता हुआ पुष्यमित्र अखाड़ेके बाहर आया। आँखें ऊपर उठाकर उसने एक बार शोर मचाते हुए जनसमूहको चमकती हुई दृष्टिसे देखा। एक प्रकारकी मोहनिद्रा, जो अखाड़ेके वातावरणसे ही सबंध रखती है, टूट गई। पुष्यमित्रका मुख हर्षके उन्मादसे खिल उठा। जनताका स्वागत ग्रहण करनेके लिए वह लोगोंकी ओर बढ़ा, मानो इतने मानव समूहके ऊपर किसी नरेशकी उपस्थितिको वह भूल गया हो।

सम्राट् वृहद्रथके मनपर सांप लोट गया। कितनी भारी नृशमता है! वह पाटलिपुत्रका स्वामी है, महान् अशोकका प्रपौत्र है। उसीकी आँखोंके सामने एक अपरिचित ब्राह्मण पुत्रने आकर एक जीते-जागते इन्सानका खून कर दिया है, और वह एक उँगली भी नहीं हिला सकता! उसीके सामने उस व्यक्तिके गलेमे फूलोंकी मालाएँ डाली जा रही थी, उसे हाथोंमें उठाकर उछाला जा रहा था, और वह जैसे किसी भूली-सी बातको याद करके लोगोंके हाथोंसे निकलकर सम्राट्को अभिवादन करने आ रहा है, जैसे नरहत्या करके उसने पाटलिपुत्रके राज्यका कोई गुरु कार्य सपन्न किया है!

पुष्यमित्रने पाटलिपुत्रके स्वामीके सामने सफलताके गर्वसे शीश झुकाया। सम्राट् जड मूर्त्तिकी तरह बैठे रहे। फिर वह और निकट आया, और सीधी दृष्टि किये उसने सम्राज्ञीको प्रणाम किया।

सम्राज्ञी सुदर्शना तनिक हिल गई। उसके मनमे भी एक अपूर्व परितापके-से भाव उठ रहे थे। किन्तु वह परिताप गर्व-खलनका परिताप नही था। उसमें जहाँ युवतीकी मनोहारिणी मुद्रा और उसकी वीरताके प्रति सम्मान था वहाँ एक विचित्र प्रकारकी घृणाका पुट था, जो सहसा ही अदबदाकर होठोंपर आ गई। दबे हुए होठोंसे सम्राज्ञीने कहा-
"हिंसक!"

दबी हुई घृणा इस मिश्रित एक शब्दको सुनकर युवककी गरदन झटके

के साथ ऊपर उठी और रानीकी दृष्टिसे मिल गई। रानीके होंठोंपर अब तक एक सच्चे बुद्धानुयायीका दुःख लिए उनके स्वरमें उपस्थित था।

इसी बीच उद्‌घोषकका तीव्र स्वर वातावरणमें गूँज उठा: "वीर पुष्यमित्रने इस विशाल प्रतियोगितामें विजय प्राप्त की है। अत: नियमा-नुसार वह मगधके महासेनापति निर्वाचित किये जाते हैं।"

पुष्यमित्र, एक अनजान युवक, एक ही क्षणमें मगधका महासेनापति हो गया।

× × ×

धीरे-धीरे वृद्ध महासेनापतिका स्वप्न चरितार्थ होने लगा। पुष्यमित्र ने मगधकी सेनाओंमें अपूर्व परिवर्तन किया। व्यायामका दौरदौरा चला। अंदरूनी प्रतियोगिताओंपर बल दिया जाने लगा। यूनानी उदाहरण लेकर खड्‌ग चलानेकी नई परिपाटी चलाई गई। थोड़े ही दिनोंमें मगधकी सेनाओंके युवक खिले हुए फूलोंकी तरह लहराने लगे। उनकी बाहुओंमें मछलियाँ पड़ गईं। मगध शांत रहा, अहिंसक रहा, किन्तु मगधकी रण-वाहिनी दिन-रात व्यस्त हो गई।

फिर भी एक शब्दकी टीस यदि किसीके मनमें हो सकती है, तो वह पुष्यमित्रके मनमें थी। वीर पुरुषके लिए सौन्दर्य ही सबसे आकर्षक वस्तु है। सभी वीर सौन्दर्यको नहीं भोग पाते। किन्तु सभी वीर मन ही मन उसकी पूजा करते हैं। प्रकृतिकी यह देन मानवके प्रयोगसे ऊपरकी चीज़ है। वीरता उसके सम्मुख अपनी बड़ाई चाहती है, किन्तु पुष्यमित्रको सौन्दर्यकी प्रतिमाके मुँहसे घृणाका एक शब्द मिला था: "हिंसक।" किसी दिन उसे अवसर मिले, तो वह पाटलिपुत्रकी इस सबसे सजीली गुड़िया-को समझा दे कि स्वयं वह कितनी बड़ी हिंसक है।

यह अवसर भी शीघ्र ही मिला। मुख्य शरीर-रक्षक-सेनाके प्रात: व्यायाम-निरीक्षणसे लौटते हुए नगरकी एक गलीसे रुदनकी एक तीखी ध्वनि पुष्यमित्रके कानोंमें पड़ी। अश्वकी लगाम खिंच गई। रोनेका शब्द

पुरुषका है। कौन रोता है? क्यो रोता है? शरीर-रक्षकको इशारा हुआ। उसने गलीके एक द्वारपर जाकर दस्तक दे दी। "सम्राट्के नामपर, द्वार खोल दो।"

कुछ देर बाद एक प्रौढ व्यक्ति महासेनापतिके सामने लाया गया। पुष्यमित्रने देखा वह जवान था, उसका चेहरा भरा हुआ था, किन्तु शरीरकी हड्डियाँ निकली हुई थी। अब भी उसके गालोपर आँसुओकी दो लबी रेखाएँ शरमके साथ अपनी कहानी कह रही थी। पुष्यमित्रको दु ख हुआ।

"कौन हो तुम? यदि पाटलिपुत्रके पुरुष रोने लगे, तो फिर हँसेगा कौन? क्या तुम चाहते हो कि हम घुटनोमें सिर देकर रोएँ, और विदेशी हमारे घरोके द्वारोपर पहरा देते-देते हँसा करे?"

महासेनापतिकी इस बातको सुनकर वह आदमी हिचकियाँ ले-ले कर रोने लगा। उच्च राज्याधिकारीके सामने इस प्रकार असभ्यताका व्यवहार क्षमा करनेके योग्य नही था। वह चिल्ला उठा।

"तुम मगधकी सस्कृतिको बट्टा लगा रहे हो।"

वह आदमी सहसा रोते-रोते चुप हो गया। वह रुँधी हुई वाणीमे बोला "मगधकी सस्कृति! आज वह रह ही कहाँ गई है? आजका मगध मेरे लिए श्मशान हैं। मैं श्मशानमें बैठा रो रहा हूँ। क्या तुम कोई परलोककी आत्मा हो, जो मुझे डराने आई हो?" और वह जोरके साथ ठठाकर हँस पडा।

वह व्यक्ति पागल हो गया था।

उसी दिन मध्याह्नके समय सम्राज्ञीके महलके मुख्य द्वारपर दो दर्शनार्थी उपस्थित थे। एक मदसौरका भोगपति विशाखदत्त था और दूसरा मगधका महासेनापति पुष्यमित्र। सुन्दर बगीचेमें सम्राज्ञीकी अनुमति मिलनेकी प्रतीक्षामें भोगपति बेचैनीसे टहल रहा था।

दासी अनुमति लेकर आ गई। "महादेवी दोनो सज्जनोको एक साथ देखना चाहती है।"

तनिक अनिच्छासे भोगपतिने पुष्यमित्रको देखा। भोगपतिके मनमें अपनी अवाञ्छनीयताको अनुभव करके पुष्यमित्र प्रसन्न हुआ। किन्तु उसे आगे जाने देकर पुष्यमित्र उसके पीछे-पीछे पटरानीके कक्षकी ओर चला।

द्वारकी ओर पीठ किये रानी वातायनसे दूसरी ओरके बगीचेमें झाँक रही थी। आगतोंकी उपस्थिति जानकर वह बोली, "सोमेश्वरके राजाको बिना रक्तपातके ही बौद्ध बनाकर आपने प्रशंसनीय कार्य किया है, भोगपति जी।"

सम्राज्ञी उसके विनयपूर्वक किये गये प्रणामको नहीं देख रही है यह समझकर भोगपति यन्त्रकी तरह सीधा हो गया। "महादेवीके मुखकमलसे प्रशंसा पानेके लिए ही सेवक यहाँ उपस्थित हुआ है।" वह और कुछ कहना चाहता था, किन्तु महासेनापतिकी उपस्थिति उसे अखर रही थी। उसी भावसे उसने एक बार अपनी आँखोंकी कोरोंसे पुष्यमित्रकी ओर देखा, जो सम्राज्ञीका सम्बोधन अपनी ओर न पाकर छातीपर बाँहें बाँधे बराबरकी दीवारके मनोहर चित्रमें उलझा हुआ था। फिर भी सेनापतिकी कनखियोंको उसने देख लिया। मन-ही-मन विचार आया कि भोगपतिके अनिच्छित व्यवहार पर नैतिक प्रतिबन्ध रखनेके लिए ही शायद रानीने पुष्यमित्रकी उपस्थिति भी साथ-साथ चाही थी। वह मन-ही-मन हँसा। 'भोगपतिके वाञ्छित प्रेमालापको राह नहीं मिल रही है।'

रानीने भोगपतिकी बातका उत्तर दिया. "सार्वजनिक रूपसे सम्राट् आपके सम्मानकी व्यवस्था कर रहे हैं। वह सम्मान हमारी प्रशंसासे भी बढ़कर है।"

पुष्यमित्रने सहसा गरदन फेरकर सम्राज्ञीकी ओर देखा। उपस्थितों-की ओर अब भी रानीकी पीठ ज्यों-की-त्यों थी। भोगपतिने फिर अपने तई सम्राज्ञीको महत्ता देनेका प्रयत्न किया। "महादेवीने ही सेवकको इस सम्मानकी सूचना दी है, यह सत्य उस सम्मानसे भी बढ़कर है।" और उसने फिर पुष्यमित्रकी ओर देखकर गंभीर मुद्रा धारण कर ली।

"हमारे प्रति इस आदरके लिए हम आपको साधुवाद देते हैं।" फिर एक क्षण रुककर भोगपतिको सुननेको मिला, "अब यदि आपकी उपस्थिति का उद्देश्य पूरा हो गया हो, तो हमे आशा है कि आप दूसरे अतिथिको अवसर देनेकी कृपा करेंगे।"

भोगपतिके लिए अब कोई और चारा नही था। अपनी उपस्थितिमे पुष्यमित्रको बात करनेका अवसर देनेके लिए वह रुका रहा। लेकिन जब सर्वथा शान्ति ही छाई रही, तो वहाँ ठहरे रहना असभव हो गया। भूमिको उगलियोसे छूकर उसने जाते-जाते कहा, "सेवक प्रणाम करता है।"

"हमारे लिए आप आदरके पात्र हैं," रानीने उत्तरमें कहा। भोगपति मुँह चुभलाता हुआ वहाँसे प्रस्थान कर गया।

अब सम्राज्ञी सुदर्शनाने एकदम मुद्रा फेर ली। वातायनसे आते हुए वायुके झोकोने बालोकी दो लटोको उसके मुँहपर अठखेलियाँ करनेके लिए मुक्त कर दिया। पुष्यमित्रने सावधानीसे अपनी सबल बाहुओको मोडकर शीश नवा दिया। अभी तक रानीके साज-शृगारपर उसकी दृष्टि नही पडी थी। उसे किंचित् कोमल स्वरमें केवल उसका प्रश्न सुनाई दिया.

"बहुत व्यस्त रहते हैं, महासेनापति?"

"हाँ, महादेवी," सेनापतिने सक्षिप्त-सा उत्तर दिया। वह जिस लिए आया था, जो झगडा उठाने आया था, उसके लिए इतनी ही सक्षिप्त भूमिका की नितान्त आवश्यकता थी।

"सेनाओ का कायाकल्प हो रहा है!" सब कुछ जानते हुए भी रानीने कहा।

"फिर भी हम यूनानियोंसे पीछे हैं, महादेवी। स्वय हिंसासे हिंसाकी तैयारीमें अधिक समय लगता है।" पुष्यमित्रने फिर छातीपर हाथ बाँध लिये। किन्तु ज्यो-ही किसी और तरफ जानबूझकर देखते रहनेसे उकता कर उसकी दृष्टि अलक्ष्य रूपसे उसका उत्तर सुनकर मुसकराती हुई रानीकी दृष्टिसे मिली, उसकी बाहुओका बधन टूट कर पीठ पीछे पहुँच गया।

सौंदर्यकी मृदुभाषिणी प्रतिमा कह रही थी, "तो महासेनापति अपनी सम्राज्ञीसे विवाद करने आये हैं स्वागत है !"

उस अपूर्व रूप-दर्शनसे पुष्यमित्रकी नाडीकी गति अनजाने ही कभीकी तीव्र हो गई थी। वह बोला, "अनर्गल विवाद दुर्भावनाओंको जन्म देता है, महादेवी। मुझे महादेवीकी ओरसे 'हिंसक' का पदक मिल चुका है। अत. विवाद करके उसे लौटानेकी इच्छा मुझे नही है। महादेवीके अहिंसक राज्यमें निरीह मानव पर कितना अत्याचार हो रहा है, मुझे केवल यही दर्शानेके लिए आना पडा है।"

सौंदर्य भी वीरतासे किसी प्रकारका पक्ष चाहता है। वीरताकी कार्यशील व्यस्तता सदा ही उस कामनाको नहीं बुझा सकती। सम्राज्ञीने तनिक रुखे स्वरमें कहा, "सम्राट् ही त्रस्तोका पूरा-पूरा न्याय करते हैं। यह विभाग मेरे हाथमें नही है, महासेनापति।"

"मेरा फरियादी महादेवीकी ही जातिका एक जीव है। अपनी व्यथा वह सम्राट्को नही सुना सकती। वह अहिंसकोंसे ही त्रस्त है। अत. उससे महादेवीका मनोरंजन होना निश्चित है," पुष्यमित्रने कहा।

रानीने अपने कोमल अधरोको दबाया। "अहिंसकोसे कोई त्रस्त नही होता, महासेनापति। प्रार्थीको उपस्थित कीजिए।"

महासेनापतिने करतल-ध्वनि की और तत्काल ही उसका प्रधान अंगरक्षक श्वेत और स्वच्छ वस्त्रोमें सिमटी-सिकुडी, घूँघटके परदेमे अपना मुख छिपाये एक नारी मूर्त्तिको लेकर उपस्थित हो गया। अंगरक्षकने सिर नवाकर सम्राज्ञीकी अभ्यर्थना की, किन्तु आगत नारी जैसे आई थी वैसीकी वैसी खडी रह गई।

"तुम अपनी सम्राज्ञीके सम्मुख हो। आवरण हटा दो," कोमल तथा स्नेहपूर्ण स्वरमें रानीने कहा।

वह नारी न हिली न बोली। "घूँघट उसने अपने मुँहपर नही डाल रखा है, उसके सारे जीवनपर घूँघट पड चुका है। उसे खोलना उसकी

सामर्थ्यसे बाहर है । महादेवी उसका मुंह देखना चाहती हैं, तो मैं दिखाता हूँ," कहकर पुष्यमित्र पीछे हटा और कनिष्ठिका व अंगूठेसे सिरका पल्ला उठाकर उसने उस स्त्रीका मुँह उघाड दिया।

उसका मुँह देखते ही रानी विस्मय और आतंकसे सिहर गई। जगह जगहसे क्षत-विक्षत, मानो किसी जानवरने उस निरीह अबलाके मुँहको अपने क्रूर पंजोंसे झिझोडा हो, उस नारी-मूर्तिका चेहरा नारी-सुलभ श्रीसे हीन हो गया था, जिसके भीतरसे कभीकी सुन्दरता अपनी अकाल मृत्युकी कहानी सुना रही थी। उसकी आँखोकी पुतलियोमे तेज नही था और वे सामने देखती हुई भी कही दूर देखती प्रतीत हो रही थी।

"सुना दो महारानीको अपने कष्टकी गाथा। सुना दो अपनी घिनौनी कहानी। यहाँ केवल वे ही हैं, जिन्हें उसके सुननेका अधिकार है, जिन्हे तुमसे सहानुभूति है,' पुष्यमित्रने कहा।

त्रस्त नारी फिर भी चुप रही। कुछ क्षण प्रतीक्षा करके रानीने कहा, "कहो, बहन, हम सुन रही हैं।"

अलक्ष्य रूपसे स्त्रीके होठ हिले, और फिर बंद हो गये।

रानीने हैरानीमे महासेनापतिकी ओर देखा। उतनी ही हैरानीसे पुष्यमित्रने कहा, "कैसा संयोग है! अहिंसकोकी छत्रछायामें पलनेवाली प्रजा अपने दुःखकी बात, अपने ऊपर किये गये अत्याचारकी कहानी भी नहीं सुना सकती। कितना शीतल आतंक है!"

पुष्यमित्रके इन वाग्बाणोंसे क्षुब्ध होकर सम्राज्ञीने अपने स्वरमे समस्त अधिकार संचय करके उस स्त्रीको संबोधन किया, "हम तुम्हें आज्ञा देते हैं। कहो जो तुम्हें कहना है!"

अंतमे इसका परिणाम और भी अवाच्छनीय निकला। निरीह प्रजाका वह दीन प्रतीक सहसा फूट-फूटकर रो पडा। उस नारीने अपनी हथेलियोंसे मुँह छिपाया और उलटे पैरो वह वहाँसे भाग खडी हुई। मगधके राज-महलके अधिकारकी ऐसी अवहेलना करनेका साहस किसीने आजतक नही

किया था, और जिसने किया था उसकी स्थिति कभी दंडकी सीमासे बाहर नहीं रही थी। उसके ऊपर पुष्यमित्रका फिर प्रहार हुआ :

"वह फिर भी नारी है। उसका पति होता, तो महादेवीके सामने इस अनुपम अत्याचारकी कहानीको हज़ार ज़बानोंसे सुनाता।"

रानीने तीव्र दृष्टिसे सेनापतिको देखा। उस दृष्टिका अर्थ था : 'मैं भी नारी हूँ, किन्तु मैं कमज़ोर नहीं हूँ।' प्रकटमें वैसे ही उत्तेजित स्वरमें रानीने आज्ञा दी . "यदि इसका पति है, तो उन्हें ही उपस्थित कीजिए, महासेनापति ! मैं इस तथ्यको बीनकर छोड़ूँगी।"

"अवश्य।" और कुछ देर बाद महासेनापति पुष्यमित्रने मगधकी सम्राज्ञीके सामने उसी पागल व्यक्तिको उपस्थित कर दिया, जो कल पाटलिपुत्रके बीचोबीच बैठा मगधकी संस्कृतिको बट्टा लगा रहा था। अपनी निरीह पत्नीके विपरीत उसने ज़मीन छूकर सम्राज्ञीको अभिवादन किया। अभिवादनकी इस असाधारणतामें एक अलक्ष्य व्यंग्य छिपा हुआ था।

"क्या हुआ है तुम्हारे साथ, प्रजाजन ? तुम मगधकी महारानीके सम्मुख हो। जो कुछ कहो सच कहो," महासेनापतिने उसे आदेश दिया।

"कहाँ है मगध ? क्या मगधकी कोई महारानी भी है ?" उस व्यक्तिने छूटते ही प्रश्न किया।

रानीको बोलनेका अवसर देनेसे पहले ही पुष्यमित्रने कृत्रिम रोष प्रकट करते हुए चिल्लाकर कहा, "सभ्यतासे बात करो !"

उसी शान्तिसे उस व्यक्तिने फिर प्रश्न कर डाला, "कहाँ है सभ्यता ?"

फिर इससे पहले कि सम्राज्ञी इस निरंकुश व्यवहार पर उचित रोष प्रकट करे, वह व्यक्ति ठठा कर हँस पड़ा। "मगध नहीं है, मगधकी महारानी नहीं है, मगधकी सभ्यता नहीं है। तुम सब हवामें मँडराती हुई आत्माएँ हो। मुझे डराती हो क्योंकि मैं इस श्मशानमें बैठा तुम्हारे ऊपर अट्टहास जो कर रहा हूँ।"

"यह तो पागल है !" रानीने कहा ।

"पागल हो गया है, महादेवी । सही कहा जाय, तो पागल कर दिया गया है," इशारेसे अगरक्षकको उस व्यक्तिको वहाँसे हटा देनेका आदेश देते हुए पुष्यमित्रने कहा ।

अपनी गम्भीरता तोडते हुए रानी सुदर्शनाने किंचित् हास्यसे कहा, "आप सब कुछ जानते है, महासेनापति । यह सब वितडावाद लाकर आप हमें अबतक खेला रहे थे ।"

पुष्यमित्रने आदरसे मस्तक झुकाया । "सेवक इतना साहस नही कर सकता, महादेवी । यह व्यक्ति पागल हो गया है । इसकी सुन्दर पत्नी भावशून्य हो गई है । यह सब खेल नही है, महादेवी । सेवक उस लज्जाहीन बातको अपने मुँहसे कहना नही चाहता था । अब महादेवी मुझे आज्ञा देंगी, तो साहस करके कहूँगा ।"

रानीने पुन. गम्भीरता धारण कर ली । "अच्छी बात है । मैं आज्ञा देती हूँ । कहो !"

"महादेवी मेरी इस वाचालताको क्षमा करें, भोगपति विशाखदत्त ने उस दीन अबला पर बलात्कार किया है ।"

चौंककर सम्राज्ञीने द्वारपर लटके वस्त्रका सहारा लेकर उसे मुट्ठीमे भीच डाला । उस क्षणकी रानीकी प्रतिक्रियाको सचेत दृष्टिसे देखते हुए पुष्यमित्र कहता रहा

"महादेवी,उस व्यक्तिके लिए सचमुच मगध नही रह गया है, मगधकी महारानी नही रह गई है, मगधकी सस्कृति मर चुकी है । शास्त्रोमे कही अबलापर इस अत्याचारका प्रतिकार नही है । समाजमे भी नही है । स्वय उस नारीका सस्कारशील अत करण मर चुका है । हिंसकोके पास उसका प्रतिकार है , बदला । पीडित होनेपर प्रकृतिका प्रत्येक प्राणी बदला लेता है । उससे गया वैभव लौट नही सकता, किन्तु उससे गया आत्मविश्वास लौट सकता है । महादेवी उनका न्याय करके उन्हें ससारकी

सबसे मूल्यवान् संपत्ति दे सकती है, किन्तु उनका लुटा हुआ अंत करण वापस नहीं लौटा सकती।"

"मगधकी नैतिक शक्ति इतनी कमजोर नहीं, महासेनापति, जितनी आप समझ रहे हैं। तथागतका धर्म उनकी आत्माओंको निष्कलंक कर देनेकी क्षमता रखता है।"

"किन्तु तथागतके धर्मको माननेवाला मगध नहीं रखता, महादेवी। वह साथ-साथ अत्याचारीको भी प्रश्रय देता है। वह दुराचारके इस सदाबहार वृक्षको जड़ें नहीं काटता, उसका काँटा चुभ जानेवालोंके प्यारसे मरहम लगाता है। क्या महादेवी भोगपतिको प्राणदण्ड दिये जानेकी व्यवस्था करेंगी ?"

सम्राज्ञी चिन्तित हो उठी। "यह कैसे हो सकता है, महायुव ! विशाखदत्त भोगपतिको राजसम्मान देनेकी घोषणा की जा चुकी है। उसका विरोध करनेसे मगधकी राजनीतिको भारी धक्का पहुँचेगा, यह तो आप जानते ही हैं। इस बीच उसने अपनी शक्ति असाधारण रूपसे बढ़ा ली है।"

"पाटलिपुत्रने स्वयं अकर्मण्य रहकर उसकी शक्ति बढ़ाई है। अहिंसाने हिंसाको फलने-फूलनेका अवसर दिया है। अहिंसक परिस्थिति-वश वीर हो सकता है, किन्तु अहिंसा वीरताकी जननी नहीं है। वीर वीरताकी आवश्यकता न समझकर उसे भूल जाते हैं, और ." महासेनापतिने महारानीकी तीव्र दृष्टि सहन करते हुए, प्रयाससे स्वरको दृढ़ करके कहा, "और कायर उसमें अपनी कायरता छिपा लेते हैं।"

साफ था कि सम्राज्ञी दब रही थी। तर्कसे नहीं, तो उनकी मुद्रा और भावप्रदर्शनके ढंगसे। इसीलिए रानी प्रत्युत्तर दे रही थी। उसने कहा, "महासेनापति उस सर्वोच्च बलको भूले जा रहे हैं, जो केवल अहिंसकोंके पास ही होता है। मनोबल सब बलोंमें ऊँचा है।"

"मन कोई स्वतंत्र वस्तु नहीं है, महादेवी। वह तो केवल भौतिक

संसारका प्रतिविम्ब है। निरन्तर विपरीत व्यवहारसे वह वल घिस जाता है, और हम जान भी नही पाते कि हम कव शक्तिहीन हो गये, कैसे हो गये। फिर भी यदि मगव वह मनोवल अनुभव करता है, तो सेवक भोगपति को दण्ड देनेके लिए अपनी सेवाएँ अर्पित करता है।"

कुछ देर सम्राज्ञी चुप रही। एक ओरसे महासेनापति पुष्यमित्रका मोहक जादू अपने तर्कोंके साथ उसपर हावी होता जा रहा था। दूसरी ओरसे अव तककी शिक्षा-दीक्षा और तथागतकी भव्य-मूर्ति खीच रही थी। इस खीचातानीसे हतोत्साह होकर रानीने कहा, "आपका प्रस्ताव विचारणीय है, महासेनापति। शान्तिदायिनी अहिंसापर मेरा अटल विश्वास है।"

"हिंसा ही विकृत हिंसाको समाप्त कर सकती है, महादेवी। मेरा उस हिंसा पर अटल विश्वास है, और प्रतिस्पर्धी विश्वास सघर्षके सूत्रधार होते है," महासेनापतिने कहा।

"महासेनापति!" सम्राज्ञीने रोषपूर्ण स्वरमे कहा, "अपने कथनको स्पष्ट कीजिए!"

"महादेवी कोई गलत अर्थ न लगाये। मेरे तर्कोंसे सम्राज्ञीने अपने मनमें जिस सघर्षका अनुभव किया है मेरा उसी ओर सकेत है।"

पुष्यमित्र यथारीति अभ्यर्थना करके वहाँसे प्रयाण कर गया, किन्तु रानी सशक हो गई। वात तुरन्त सम्राट्के कानोतक पहुँचाई गई। सैनिक शक्तिकी ओरसे वेखवर सम्राट् वृहद्रथ भी सजग हो गये। गुप्तरीतिसे पुष्यमित्रके विरुद्ध सचेत होनेकी आज्ञाएँ प्रसारित की गईं।

× × ×

वह दिन और वह रात्रि पुष्यमित्रने भोगपतिको अगले दिन प्रात. ही राजसभामे सम्मान देनेकी योजनाको स्थगित कर देनेकी राजाज्ञाकी प्रतीक्षामे विताये। किन्तु उसकी आशा पूरी नही हुई। उसका तन-मन जल गया। भोर रहते ही, जव सारा पाटलिपुत्र सो रहा था, पुष्यमित्र अपने सैनिक व्यायामके लिए निकला। और वह जव वापस लौटा, तो उसके साथ उसकी शिक्षा-दीक्षामे तैयार मगधका हरावल दस्ता था।

उधर समारोहकी नौबतें बजनी आरंभ ही हुई थीं कि राजमहल पुष्यमित्रके सैनिकों-द्वारा घेर लिया गया। पूजागृहसे निकलते हुए सम्राट् बृहद्रथ बंदी कर लिये गये। बड़ी शान्ति और व्यवस्थासे पाटलिपुत्रमें मौर्य शासनका अन्त हो गया। पुष्यमित्र स्वयं सम्राट्के सामने गया। सम्राट्ने काँपते हुए चिल्लाकर कहा, "राजद्रोही !"

पुष्यमित्रने कहा, "मुझे यह पदक भी स्वीकार है, महाराज ! शुक्र है कि मैं प्रजाद्रोही नहीं हूँ। अब सम्राट्के विचार करनेके लिए यह प्रकोष्ठ है, और यदि इन दो अभागे प्रजाजनोंको सम्राट् अपनी अहिंसाके द्वारा कुछ दे सकें, तो सम्राट् फिर सम्राट् हो जायेंगे।"

सम्राज्ञी सोकर उठीं, तो दास-दासियाँ हाथ बाँधे प्रस्तरकी मूर्त्तियोंकी तरह खड़ी थीं। मार्जनिगारका कोई सामान उपस्थित न था। कोई पानीका कलश लेकर पैर धोनेके लिए आगे न बढ़ी। सम्राज्ञीने पूछा, "क्या बात है ?"

"सम्राट् महासेनापति पुष्यमित्र-द्वारा बंदी कर लिये गये हैं, महादेवी।"

सम्राज्ञीका सारा अलस भाव तिरोहित हो गया। वह बिना उत्तरीयको कंधेपर डाले ही उठ खड़ी हुई। दासीने पीछेसे ओढ़ाया। इस बीच रानी द्वारपर पहुँच चुकी थीं। "कहाँ है महासेनापति ?"

महासेनापति सभावित अशान्तिको यथास्थान दबा देनेके आदेश देते राजमहलमें घूम रहे थे। सेनाएँ पुष्यमित्रके हाथोंमें थीं, अत बाहरकी ओरसे कोई चिन्ता नहीं थी।

सम्राज्ञीको छेड़ना विशेष रूपसे वर्जित किया गया था। उसके जागनेका समाचार पाकर पुष्यमित्र महाराजकी कोठरीकी ओर चला, और वहाँ दोनोंकी भेंट होनी निश्चित थी। किन्तु वह राहमें ही हो गई।

"महासेनापति, यह क्या खिलवाड़ है !" सम्राज्ञीने पूछा।

"महादेवी, मगधने अहिंसाके जुएको अपने कंधोंसे उतार फेंका है। आप इसे खिलवाड़ न कहिए," पुष्यमित्रने कहा।

"साफ़ क्यो नही कहते कि तुमने विद्रोह किया है? तुमने मगधके राज्याधिकार और अपनी स्वामिभक्तिका जुआ अपने कधोसे उतार फेंका है।"

"नही, महादेवी। इस उच्छृखलताके पीछे विचारोका लबा सघर्ष है। एक अपराधीको दड मिल जानेके बाद यह अपराधी भी सम्राट्के सम्मुख बँधा हुआ उपस्थित होगा।"

"तुमने राज्य-व्यवस्थाको स्वय अपने हाथोमे लिया है। पहले तुम्हारे ही अपराधका निर्णय होगा। कहाँ है सम्राट्?"

उस सम्मोहक आतकके सामने पुष्यमित्र सहसा ही विवश हो गया। अचेतन रूपसे उसका हाथ उठा और उसने बता दिया कि महाराज किस प्रकोष्ठमे बद है। रानीने उसकी कमरमे खोसा हुआ चावियोका गुच्छा झटकेके साथ निकाल लिया और वह तेजीसे महाराजके प्रकोष्ठकी ओर चली। राहमे जो प्रहरी भी मिलता वह अपनी गरदन झुका देता।

किन्तु पुष्यमित्रके पास कहनेको बहुत कुछ शेष था। "कठिन से कठिन परिस्थितियोमे भी विश्वास करना ही श्रेष्ठता है। मैने विद्रोह किया है, विश्वास नही खोया है। मैने केवल मगधको सचेत करने का प्रयास किया है। मै अपराधी हूँ, किन्तु जागरणका, मै हिंसक हूँ किन्तु हिंसकका। मै भी मनुष्य हूँ। इस पृथ्वीपर केवल एक ही वस्तु टिक सकती है, हिंसा या अहिंसा, यह मिला-जुला रूप अहिंसा और हिंसा दोनोको विकृत बनाता है, बनावटी कर देता हे ।"

सम्राज्ञी-सुनती जा रही थी और बढी जा-रही थी। वातावरणमे केवल पुष्यमित्रके आत्मसमर्पणके बोल गूँज रहे थे। सम्राट्के प्रकोष्ठतक उसकी आवाज़ जा रही थी। साथ ही द्वारमे चावी लगनेका शब्द हुआ। सहसा सम्राट्की आँखोमे एक चमक कौंध गई। वह उठे और झपट कर द्वारके पासकी दीवारपर लगी ढालमेसे खड्ग खीच लिया।

द्वार खुला और सम्राट्के खड्गका एक भरपूर हाथ प्रवेश करनेवालेके

कंधोको चीरता निकल गया। क्षणमात्रमें तथागतकी भक्त वह सौम्य रानी भूमिपर गिरकर दम तोड़ने लगी।

दोनो प्रतिस्पर्द्धी एक दूसरेके आमने-सामने खडे स्तभित रह गये। वातावरण जड हो गया।

कुछ क्षणोंके वाद सम्राट्के हाथ-पैर कांपने लगे। खड्ग हाथसे छूटकर भूमिपर गिर पडा। पुष्यमित्रकी आँखें घृणा और हिंसासे विस्फारित हो गईं। उसने फिर एकवार समस्त शक्ति सचय करके रानीके तडपते हुए शरीरको देखा। यहाँतक कि सम्राज्ञी सुदर्शनाका प्रत्येक अग शान्त हो गया।

पुष्यमित्रने कड़ककर कहा, "यही तुम्हारी अहिंसा थी!"

सम्राट् पूर्ववत् कांप रहे थे। पुष्यमित्रकी वातका कोई उत्तर नही मिला।

"खड्ग सँभालो, सम्राट् वृहद्रथ! आज या तो हिंसाका अन्त होगा या उस अहिंसाका, जो छिपकर वार करती है। उठाओ खड्ग!" सेनापति पुष्यमित्रका रक्त खौल रहा था।

सम्राट् फिर भी नहीं हिले।

"तो - तो, "पुष्यमित्रने कहा, और उसने अपने लवे खड्गका एक हाथ जोरके साथ घुमाया। सम्राट् वृहद्रथका सिर प्रकोष्ठकी धरतीपर लोटने लगा।

रक्तसे सना नगा खड्ग लिये पुष्यमित्र प्रकोष्ठसे वाहर निकला दालानसे वाहर निकला, और राजमहलसे वाहर निकला, थका-हारा, अशान्त और उत्तेजित।

राजमहलसे वाहर पाटलिपुत्रकी जनताकी अपार भीड अव तक इस क्रान्तिको निरखनेके लिए उपस्थित हो गई थी। उसके सामने जाकर पुष्यमित्रने अपना खड्गवाला हाथ ऊपर उठाया, जिसपर सूर्यकी किरणोंने चमक कर रक्तकी लालीको छिटका दिया।

जयघोष उठा, "सम्राट् पुष्यमित्रकी जय !" "महाराज पुष्यमित्रकी जय !"

पुष्यमित्रने अपना दूसरा हाथ उठाकर चुप होनेका संकेत करते हुए चिल्लाकर कहा, "नहीं, नहीं, मुझे महाराज न कहो, मुझे सम्राट् न कहो। कहो, सेनापति पुष्यमित्र !"

मौर्यवंशके बाद शुङ्ग वंशके इस पहले अधिपति, अपूर्व हिंसक, सेनापति पुष्यमित्रने दो बार सिकंदरकी तरह यूनानियोंके प्रबल आक्रमणको निष्फल करके उन्हें भारतकी सीमासे बाहर किया और आज भी इतिहासमें उसका नाम सेनापतिके रूपमें ही अंकित है।

•

चन्द्रगुप्तकी मोहर

गण्डक नदी एक समय अपने वर्त्तमान वहावसे कोसों दूर हटकर वहती थी। धनधान्य, समृद्धि और वैभवसे भरपूर एक मात्र गणराज्यकी प्राचीन और सुन्दर राजधानी वैशाली गण्डकके तटपर वसी थी। उसके चारों ओर छोटे-छोटे राज्य यत्र-तत्र विखरे पड़े थे। पास ही पाटलिपुत्रमें गुप्तोंका भाग्य-रवि उदय हो रहा था। इन सब एकतंत्र राज्योंके समुद्रमें वैशाली ही एक ऐसा द्वीप थी, जो राजा और प्रजाको वरावरीका दर्जा देकर सदियोंसे राज्य-प्रणालीका एक अनोखा रूप अपनाये हुए थी। उसपर सभीकी दृष्टि अनायास ही जा टिकती थी।

समयके थपेड़ोंसे वैशालीका प्राचीन गौरव और शक्ति नष्ट हो चुकी थी। अब उसका ढाँचा मात्र शेष रह गया था। शरीरकी कांति वही थी, दीप्ति वही थी, लेकिन नियतिके निर्मम हाथोंने मांस-मज्जा निकालकर मानो उसमें भूसा भर दिया था। ईसाकी चौथी शताब्दीके प्रारम्भमें इसी वैशालीके सम्मान और स्वतंत्रताका प्रवाह एक लड़कीके होंठोंसे निकलनेवाली हाँ या ना पर अटक गया। यह लड़की थी वैशालीके गणपति कुमारायुधकी बेटी कुमारदेवी।

वैशालीपर युद्धके वादल मँडरा रहे थे। पाटलिपुत्रके नवनिर्मित महाराजाधिराज चन्द्रगुप्तकी उद्यत सेनाएँ वैशालीकी सीमाएँ छू रही थीं। मरनेके लिए कमर कसे वैशालीके वीरोंमें जीतनेका जोश था। बूढे पिताओंको अपने पुत्रोंके गर्वोंके पीछेसे हारकी कालिमा दिखाई दे रही थी। चन्द्रगुप्त चारों ओरके बली-से-बली राज्योंको ग्रस चुका था। वह महाराजसे महाराजाधिराज बना था। उसका बल अपूर्व था। इधर अभीतक अकेली वैशाली इस चढते हुए सूर्यके आगे मस्तक ऊँचा किये खड़ी थी।

सीमापर चद्रगुप्तके शिविर तन गये थे। विशाल सेनाके पडावसे दूर एक वृक्षके नीचे युद्धके साजसे सजे दो घोडे अपने स्वामियोको पीठ-पर लिये खडे-खडे मचल रहे थे। एक पर चद्रगुप्त स्वय था। दूसरेपर महासेनापति वीरधवल थे। महासेनापति कह रहे थे.

"श्रीमान्ने वैशालीके सामने बडी हलकी-फुलकी शर्त रखी है। बडे सस्तेमे छूट गई वैशाली!"

"नही, धवल, हमे अब भी सशय है कही युद्ध छेडना ही न पडे! शत्रु होते हुए भी हमें वैशालीके गौरवसे मोह है। हम एक बार वैशालीके वैभव और उल्लासको अपनी आँखोसे देख चुके है। आजकी इस युद्ध-यात्रा और इन हलकी-फुलकी शर्तकी नीव उसी समय पडी थी," चद्रगुप्तने रासको और भी कसते हुए कहा।

"महाराज श्री घटोत्कचने आपको वैशाली भेजा था?" सेनापतिने पूछा। घटोत्कच महाराज चद्रगुप्तके स्वर्गीय पिता थे।

"नही। वैशालीके गणोने हमें न्योता दिया था। सदाकी भाँति उस वर्ष भी वैशालीकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरीका चुनाव था। उसी अवसरपर हम मोह-पाशमें फँस गये।" आँखोपर हाथकी छाया देकर, वृक्षकी टहनियोंसे छनकर आती सूर्य-किरणोको रोकते हुए, चद्रगुप्तने दूर तक नजर दौडाई।

"वैशालीकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरीका मोह-पाश?" सेनापति मुसकराये।

"हमें वैशालीके चुनावमे विशेष रुचि नही थी। वह उस समयके एक छोटेसे सेनानायक कुमारायुवकी कन्या थी। अब वह गणपति हो गये है।"

"ओह!" वीरधवल उछल पडे। "अब इस शर्तका रहस्य खुला।"

"अभी नही खुला, महासेनापति," चद्रगुप्तने मुसकराकर कहा। "चुनाव-भवनके उद्यानमे खडे होकर हमने एक दूसरेको खूब जी भरकर देखा। हमें आश्चर्य था कि उस सुन्दरीको छोडकर वे लोग फिर चुनाव कैसा कर रहे थे। शायद वह चुनावमें भाग ही नही लेना चाहती थी।"

"हूँ," सेनापतिने अपनी बात फिर कट जानेके डरसे और कुछ नहीं कहा।

चंद्रगुप्त पर भावना छाती जा रही थी। "दोनों तरफसे खिंचाव हुआ। अगले दिन हम दोनों उद्यानमें अकेले मिले। हमने कहा, 'अगर कभी देवताओंसे वरदान मिला, तो मैं तुम्हें माँग लूँगा।' वह हँस दी। उसने उत्तर दिया, "वैशालीकी कन्याएँ वरदानमें नहीं मिलतीं। वे पराक्रमका प्रमाण देनेसे मिलती हैं।' फिर " सम्राट्ने दोबारा उचककर दूरतक देखा।

"फिर?" सेनापतिने व्यग्रतासे पूछा।

"फिर सहसा वह हमारा परिचय पूछ बैठी। मगधके युवराजका परिचय सुनते ही उसकी तो भृकुटी तन गई। उसने कहा, 'जिस दिन वैशाली में युवकोंकी कमी हो जायेगी, उसकी ललनाएँ कुमारी रहना ज्यादा पसंद करेंगी।"

"क्यों?" महासेनापति चकराये।

"यही सवाल हमने उससे पूछा था। उसने बड़ा अटपटा-सा उत्तर दिया था - 'सिरसे सिर मिलनेका नाम विवाह है। राजाकी रानीका पद राजाके चरणतलसे शुरू होता है। वैशालीकी कन्या अपने हृदयके मूल्य पर भी अपना बराबरीका अधिकार नहीं खो सकती।' और भेंट समाप्त हो गई।"

"उफ!" वीरधवलने हाथ मले।

चंद्रगुप्तने कहा, "हमारे सेनापति होनेके नाते आप जानते हैं कि हमने इतने राज्य देवताओंसे वरदानमें नहीं माँगे। हम वैशालीकी उस कन्याको अपना पराक्रम दिखाने आये हैं। हम बराबरीके अधिकारसे उसके हृदयका मोल करने आये हैं। देखते हैं स्वतंत्रताकी उस गर्वितासे हमें क्या उत्तर मिलता है। उसकी एक हाँ पर वैशालीके वीरोंको अभयदान मिल सकता है।"

दोनो अश्वारोहियोने कान खडे किये । एक घोडेकी टापोकी आवाज सुनाई देने लगी थी । कुछ ही देरमे एक घुडसवारने आकर सम्राट् चद्रगुप्तके चरणोमें मस्तक नवा दिया । सम्राट्ने उसकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखा ।

"सम्राट्की जय ! सारी वैशाली युद्धके लिए मचल रही है ।"

"युद्ध !" सम्राट्के मुँहसे निकला । चद्रगुप्त युद्धके लिए ही तो आया था । किंतु न जाने क्यो वह युद्धके नामसे कभी इतना विरत नही हुआ था ।

"गणपति कल अपना निश्चयात्मक उत्तर देगे," दूतने निवेदन किया ।

सम्राट्ने छुटकारेकी एक नि श्वास छोडी । "चलो, महासेनापति, अब कलकी प्रतीक्षा करना आरभ करे ।"

× × ×

प्रथम दृष्टिमे प्रेमकी बात कुमारदेवीको हास्यास्पद लगती थी । प्रजातत्रकी उस महान् नगरीमे बचपनसे वह यही सुनती आई थी कि राजा किसीका नही होता । वह अपने देशका भी नही होता । वह केवल अपना होता है । अपने व्यक्तित्वके विकासके लिए वह अपने देशकी प्रजाको शूलीपर चढा सकता है, लाखो मनुष्योको युद्धकी अग्निमे झोक सकता है । उसका अन्त पुर केवल उसके व्यक्तित्वकी विकृत वासनाओको सतुष्ट करनेके लिए होता है । इन सस्कारोमे पली कुमारदेवी कभी चद्रगुप्त-सरीखे व्यक्तिपर मोहित हो सकती है, उसे प्रेमकी दृष्टिसे देख सकती है, यह घोर विडंबना थी, घोर असंभावना थी; यदि कोई सभावना थी, तो उसके ऊपर प्रथम दर्शनसे अबतक न जाने विपरीत और विरोधी भावनाओकी कितनी परतें चढ चुकी थी । मोहका वह नन्हा-सा स्फुलिंग उसके नीचे दब गया था ।

चिन्तातुर वृद्ध गणपति दूसरे तरीकेसे सोच रहे थे । युवकोके नेता जयकीर्त्तिको लेकर वह बेटीको समझाने आये थे । कुमारदेवीने उन्हे देखते ही तीव्र स्वरमे पूछा ।

"युद्ध नहीं होगा, तात ?"

"नारी चाहे और युद्ध न हो, ऐसा कभी नहीं हुआ, बेटी। वैशाली-की नारी तो और भी शक्तिशालिनी है। वह चाहे तो एक [illegible] हजारों युवक हँसते-हँसते अपने प्राण विसर्जन कर देंगे। किन्तु हमारा शत्रु उन युवकोंके प्राण नहीं माँगता। वह हमारी भूमि नहीं चाहता। वह हमारी स्वतन्त्रता नहीं चाहता। वह केवल उस कन्याको चाहता है, जिसने उसे कभी मोहकी दृष्टिसे देखा था। वह कन्या उस आदमीकी बेटी है, जिसके कंधोंके ऊपर वैशालीके एक-एक व्यक्तिकी सुख-शान्तिकी जिम्मे-दारी है। हम अपनी बेटीसे उसकी सम्मति जानने आये हैं।"

पिताकी बात सुनकर कुमारदेवी चिहुँक उठी। "शत्रुका मुँह सदा नरमांस माँगता है। शत्रुका हृदय सदासे ही गगनभेदी चीत्कारोंका अभ्यस्त है। यह अनोखा शत्रु है, जो हमारी स्वतन्त्रताकी एक उमंगको हमारे बीचमेंसे छीन ले जाना चाहता है! मैंने कभी ऐसे शत्रुसे मोह नहीं किया। क्या वैशालीकी नारियाँ अब शान्तिके मोलपर बिका करेंगी ? बताइए, तात, क्या यही होगा ?"

गणपतिने अपनी आँखोंमें आया जल उत्तरीयसे पोंछ लिया। फिर स्नेहसे सने स्वरमें उन्होंने कहा, "सारी वैशाली आज अपनी स्वतन्त्रताकी इस एक उमंगकी रक्षा करनेके लिए दीवानी हो रही है। केवल उनका यह बूढ़ा गणपति कहना चाहता है कि उमंगकी यह कीमत बहुत बड़ी कीमत है, बेटी। सारे समाजके लिए एक व्यक्तिका बलिदान सदासे प्रजा-तंत्रकी पहली शर्त रही है। इस शर्तको तोड़ना बहुत मँहगा पड़ेगा।"

"क्यों ? क्या वैशालीके गणोंने संकटके समय एक रहनेका प्रण नहीं किया था ? एक अंगपर भीड़ आ पड़नेपर क्या सारा अंग सिमटकर उसकी रक्षा नहीं करता है ? फिर क्यों वैशालीके गणपति अपना एक प्रियतम अंग नोचकर कुत्तोंको खिला देना चाहते हैं ? यह कैसी होती जा रही है वैशाली, तात !" कुमारदेवी रो पड़ी।

गणपतिके साथ आया युवक जयकीर्त्ति विचलित हो गया। "हम अपने प्राण होम देंगे, देवी! हमपर विश्वास कीजिए।"

गणपतिने दुखसे उस उच्छृखल युवककी ओर देखा। फिर पुत्रीकी ओर देखकर उन्होने कहा, "तुम इस अग्निहोमको देखना चाहती हो तो देखो, वेटी। तुम अपने भी प्राण दे सकती हो, पर वैशाली नही वचेगी। वैशालीकी सारी ललनाओको पाटलिपुत्रके महलोमे चेरियाँ वनकर रहना पडेगा। वैशालीके युवक अपना तेज और स्वाभिमान भूल जायेगे। यन्त्रके निर्जीव अगोकी तरह वे देश जीतेगे, शौर्य और पराक्रम दिखाएँगे, लेकिन अपने लिए नही, पाटलिपुत्रके शासनके लिए। वातावरण वदल जायेगा और वे इसीमे वीरता और इसीमे अभिमान समझेगे। परपरागत दासोकी तरह उनके सोचनेका ढग वदल जायेगा। हमे अफसोस तो यही रहेगा कि यह देखनेसे पहले ही हमारी स्वाभिमानिनी वेटी विप खाकर मर जायेगी। लेकिन वैशाली वदल जायेगी, ज़रूर वदल जायेगी "

"तात!" भावनाओके उद्वेगसे कुमारदेवीने गणपतिको रोका।

"हम तो तुम्हे भविष्यका चित्र दिखा रहे है, वेटी। वह चित्र झूठा नही है, साफ और सच्चा है। इस चित्रकी पृष्ठभूमिमे तुम हो। सारी लज्जा ढाँकनेको वैशाली अपना एक स्तन काटकर कुत्तोको दे रही है। हमने तुमसे प्रस्ताव नही किया है, अपने कलेजेपर पत्थर रखा है। क्या तुम प्रजातन्त्रकी इस प्राचीन नगरीके शोकका अनुमान कर सकती हो, वेटी? लिच्छवियोने कभी इतना नीचा नही देखा था। आज वे अपनी वेटीका विवाह करेगे, किंतु उनके हृदय रो रहे होगे "

"तात!" कुमारदेवीने फिर पिताको और अधिक वोलनेसे रोक दिया, और वह गणपतिके कधेसे लगकर फूट-फूटकर रो पडी।

गणपतिने उसकी पीठपर थपकियाँ दी। "हम शक्ति-सचय करेगे।

हमें थोड़ा-सा अवकाश चाहिए। फिर हम अपना आत्मसम्मान वापस ले लेंगे। हमने आत्मसम्मान बेचा है, आत्मविश्वास नहीं बेचा।"

"तात जो कहेंगे मैं करूँगी", सुबकते हुए कुमारदेवीने कहा।

"चन्द्रगुप्तसे तुम्हारा विवाह करके वैशालीका कर्त्तव्य समाप्त हो जायेगा। युवक जयकीर्त्ति छायाके समान तुम्हारे साथ जायेगा। अपने प्राण मत देना, बेटी। यदि उस युवक सम्राट्के लिए तुम्हारे हृदयमें कभी एक बार भी स्नेह उपजा हो, तो उसे पहचाननेकी कोशिश करना।"

प्रबंधके लिए जयकीर्त्तिको वहीं छोड़कर गणपति चले गये। कुमारदेवीके नेत्रोंमे रिसता जल सहसा सूख गया। आँखें ऊपर उठाकर उसने जयकीर्तिसे पूछा, "बंधुवर, तुम प्रबंध कर सकोगे?"

"देवी जैसा कहें वैसा ही प्रबन्ध कर सकूँगा," जयकीर्त्तिने कहा।

"अच्छा, तो थोड़ेसे हलाहल विषका प्रबन्ध करो," कुमारदेवीने कहा।

जयकीर्त्ति विमूढकी तरह उसका मुँह देखने लगा। कुमारदेवीने अपनी दृष्टि फेर ली थी। उसने युवकके आश्चर्यका अनुमान करके कहा, "अपने पिताके कुलका सम्मान बेचकर कोई लड़की चैनसे नहीं बैठ सकती। तुम्हें इस प्रबंधकी बात किसीसे बतानी नहीं होगी। मैं वैशालीका आत्म-सम्मान उसे वापस करूँगी। वैशाली फिर अपना सिर ऊँचा करके खड़ी हो सकेगी, और आगे कभी हमारी कमजोरी हमे दुःख नहीं देगी।"

जयकीर्त्ति कुमारदेवीके मनकी व्यथा समझ रहा था। वह भी वैशालीमें ही पैदा हुआ था। उसने भी अपनेको सदा उस विशाल समाजका एक अंग समझा था। उसने कुमारदेवीकी सम्मतिमें अपनी गरदन झुका दी। उसने फिर कहा, "देवीने जैसा कहा वैसा ही प्रबंध होगा।"

× × ×

आगे कभी सम्राट् चन्द्रगुप्तकी क्रूर दृष्टि अपने श्वसुर-गृहपर नहीं पड़ेगी, गणोंके सामने इस प्रतिज्ञापर, कुमारदेवीका विवाह सम्राट् चन्द्रगुप्तके

साथ कर दिया गया। किंतु वैशालीके किसी घरमें उस रात कोई दीपक नहीं जला। केवल कुमारदेवीके हृदयमें एक दीपशिखा जलती रही—आत्मसम्मानकी ज्योति, जो हवाके एक तेज झोंकेसे त्रस्त होकर और भी तेजीके साथ जल उठी थी।

पाटलिपुत्रमें कुमारदेवीका दर्शनीय स्वागत हुआ। राजमार्ग फूलोंका बिछौना बन गया। सम्राट् चंद्रगुप्तका अश्व कूदता-फाँदता कुमारदेवीकी पालकीके निकट आया। प्रियतमाके मुँहपर आह्लादपूर्ण दृष्टि डालकर चंद्रगुप्तने कहा, "ये फूल नहीं हैं, देवी, प्रजाने अपनी सम्राज्ञीके शुभागमनमें आँखें बिछा दी हैं।"

मर्माहतकी तरह कुमारदेवीने टेढ़े शब्दोंमें उत्तर दिया, "नहीं, प्रजा विजेताके बल-प्रदर्शनसे डर गई है। इस आवश्यकतासे अधिक आदरसे उन्होंने अपनी दीनताकी सूचना दी है। इन फूलोंकी आँखोंमें कितना भय, कितनी सिहरन छिपी है!"

युवक-सम्राट्का मुँह उतर गया। उसका अश्व उछला, और सम्राट्की आज्ञा क्रुद्ध स्वरमें चारों ओर गूँज गई। "इसी दम राजमार्गसे सारे फूल साफ कर दिये जायें!"

आज्ञाका पालन तुरंत हुआ। हजारों सैनिकोंने मिलकर फूलोंका बिछौना उठा लिया। लोगोंमें सम्राज्ञीका जयघोष गूँज उठा। जिस सम्राज्ञीके मनमें फूलोंको भी कुचलनेकी ताब नहीं है, उसकी छत्रछाया कितनी कोमल, कितनी सुखद होगी! एक क्षणमें घर-घर कुमारदेवीका यश-गान फैल गया।

नियमानुसार विजयके बाद चतुरंगिनीकी फेरी सारे नगरमें होती थी। कुमारदेवीके मनको इस विजयोल्लाससे ठेस न पहुँचे, इसलिए यह कार्यक्रम रोक दिया गया।

राजभवनके द्वारपर हाथ बाँधे, सहस्रों दास-दासियोंके समूहके आगे खड़े राजभवनके मुख्य प्रबंधकर्त्ता महाप्रतिहारने जमीन तक सिर नवाकर

सम्राज्ञीका सम्मान किया। पालकीसे उतरकर कुमारदेवीने पहले एक दृष्टिसे वातावरणका निरीक्षण किया, फिर महाप्रतिहारकी ओर घृणाकी तीव्र दृष्टिसे देखती हुई आगे बढ गई। आश्चर्यसे मुँह वाये महाप्रतिहारने पीछे आते सम्राट्के मुँहकी ओर देखा। सम्राट् भौंह ऊँची किये, होठ दबाये, मानो सब कुछ सुनते-समझते चले आ रहे थे।

रनिवासके अतरीय द्वारपर राजरानियोंने कुमारदेवीकी पडगाहना की। पीछे व्यजनो व कुकुम-रोलीके थाल लिये चेरियोकी पक्तियाँ थी। आगेवाली दासीके थालमेंसे एक व्यजन उठाकर कुमारदेवीके मुँहमे ठूसते हुए एक सजीली रानीने कहा, "दुलहनका स्वागत है।"

कुमारदेवी मुसकरा उठी। वैशालीसे चलकर अब उसके होठोपर हँसी आई थी। हँसीमे ही उस शोख रानीके कानोके पास मुँह ले जाकर कुमारदेवीने एक ऐसी बात कही, जिससे वह अचकचाकर उसका मुँह देखने लगी। उसने कहा, "ऐसा मालूम होता है, बहन, जैसे किसी बदीघर-मे एक बदी किसी नये आने वाले दूसरे बदीका स्वागत कर रहा हो। इस स्वागतसे मेरा मन पुलकित हो उठा है।"

कुमारदेवीको असाधारण सम्मानके साथ उसके लिए नियत कक्षमे पहुँचाया गया। दासियाँ उनकी आज्ञाकी प्रतीक्षामे द्वारसे चिपक गईं।

सम्राट् राजभवनके द्वारपर ही रुक गये थे। कुमारदेवीका सारा व्यवहार एक खूबसूरत और गर्वीली लडकीकी चिढके रूपमें उनके सामने आया था। महलके बाहरी भागके एक कोनेमे खड़े होकर उन्होंने महा-प्रतिहारको इशारेसे अपने पास बुलाया। वह देखते ही दौडा आया।

"आज्ञा, देव?" उसने पूछा।

सम्राट्ने अपने विचारशील नेत्र ऊपर उठाये। "महाप्रतिहार, लगता है नई रानी किसी कारण तुमसे अप्रसन्न हो गई है।"

आज्ञाकारी सेवकने शोकसे अपनी गरदन लटका ली। "यही तो देख रहा हूँ, देव!"

"लेकिन तुम कितने नम्र, कितने कुशल और कितने कार्य-तत्पर हो यह तो नई रानी नही जानती," सम्राट्‌ने कहा ।

स्वामीके मुँहसे अपनी प्रशसा सुनकर सेवककी वाँछे खिल गई । "सब सम्राट्‌का प्रताप है," उसने कहा ।

"फिर भी तुम्हारा सबध तो सदा राजमहलसे रहेगा," सम्राट्‌ने कहा ।

सम्राट्‌के प्रशसा करनेसे कुछ नही होगा यह महाप्रतिहार समझ गया । आज सम्राट्‌की एक रानी बिगड खडी हो, तो फिर उस बेचारे का पत्ता महलसे कटते देर न लगे । सभीको प्रसन्न रखना बहुत कठिन होता है और उसका भार उसके छोटेसे कधोपर था । फिर नई रानी तो मानो सम्राट्‌की जी-जान थी । वह चद्रगुप्तकी विचार-शृखलापर नाच रहा था, बोला "सम्राट् जानते है, सेवकने कभी इस सबधका मान नही खोया ।"

"ठीक है, हम जानते है," सम्राट्‌ने कहा । "किंतु नई रानीको भी तो जानना चाहिए । क्यो न तुम उनके पास जाकर अपना अपराध क्षमा करा आओ ।"

सम्राट् सीधी आज्ञा नही दे रहे थे । राजमहलकी व्यवस्थाके सबधमे सारी गुप्त मत्रणाएँ उसीसे होती थी । इसलिए उसे चद्रगुप्तकी सलाहमे कोई असाधारणता नही जँची । सम्राट् आज सहसा कितने दयालु हो गये है, वह यही सोचकर हवामे उठा जा रहा था । लेकिन सम्राट् और सम्राज्ञी-के बीच कितनी गहरी खाई थी और सम्राट् उस खाईको पार करनेके लिए किस प्रकार उसे सीढी बना रहे थे यह वह नही समझ सका । उसने हर्षसे अपने दोनो हाथ जोडकर झुके हुए मस्तकसे लगा दिये ।

× × ×

यहाँ तककी मजिल सम्मानके साथ कट गई । अब क्या किया जाय, कुमारदेवी इसीमे उलझी थी । इसी उलझनमे उसने राजसी स्वागतसे लेकर स्नान, साज-सिंगारतककी सारी दुर्गम राहोको बिना बोले-चाले, दासियोकी तत्परतासे पार कर लिया । सध्या हो चली थी और राजमहल तरह-तरहके मगल-गानोसे मुखरित होने लगा था । सजीली रानी छाया-

की तरह कुमारदेवीके साथ लगी थी। और भी रानियाँ कई बार आ-आकर कुमारदेवीका मुँह चूम गई थीं।

दीपक जलनेके कुछ समय बाद महाप्रतिहारने एक दासीके द्वारा कुमारदेवीके सामने उपस्थित होनेकी आज्ञा चाही। आज्ञा मिल गई।

महाप्रतिहार राजमहलके भीतर यदा-कदा आता ही था। मुख्यत उसका काम राजद्वार पर था। आजकी सज्जा उसे बडी अपरिचित-सी लगी। इस अपूर्व सजधजसे उसके ऊपर धीरे-धीरे नई रानीका रोब चढता जा रहा था। दासी उसे भेंटकक्षमें लिवा ले गई। वह अभी चारों ओरकी शोभा निहार ही रहा था कि कुमारदेवीका नम्र और मीठा स्वर सुनाई पडा: "क्या चाहते हो?"

नई रानीके सिंगारको देखते ही वह पलकें झपकानी भूल गया। फिर भी वह कार्यकुशल व्यक्ति था। तत्क्षण ही चेतन होकर, उसने जमीनपर लेटकर अनुनयके अत्यन्त भीत स्वरमें कहा, "महादेवी, दासका अपराध क्षमा करें। दास अकिंचन है, सेवक है।"

कुमारदेवीके कानोंमें जैसे किसीने तपा हुआ तेल डाल दिया हो। बचपनसे आजतक उसने कभी इतनी दीनता, छोटेपनकी इतनी भावना नहीं देखी थी। मनुष्य मनुष्यके साथ मनुष्यकी तरह व्यवहार करता है, मनुष्यकी तरह बात करता है, यही उसने देखा था। वह अबतक कई बार सोच चुकी थी कि राजमार्गके फूलोंके अर्थ लगानेमें उसने कहीं भूल तो नहीं की थी। किंतु महाप्रतिहारकी इस क्षुद्र क्षमा-याचनाको देख-सुनकर उसका हृदय भुन गया। उस मनुष्यके इस व्यवहारके पीछे क्रूर राजसत्ता और एकाधिपत्यके दमनकी परंपराका कितना भय छिपा था, उस एक क्षणमें वह इसका अनुमान न लगा सकी। उसका मुख तमतमा गया। आँखोंसे रोष और उत्तेजना टपकाती हुई वह पास ही खड़ी सजीली रानीको लक्ष्य करके बोली:

"इस मनुष्यने कोई अपराध नहीं किया है। बिना कसूर किये ही यह

इतनी नीचतामे क्षमा माँगकर मेरा अपमान कर रहा है। क्या मै इस राजमहलमे ऐसे ही तमाशे देखनेके लिए आई हूँ? यह व्यक्ति अभी, इसी क्षण मेरी दृष्टिके सामनेसे दूर हो जाये।"

उँगलीमे सजीली रानीने आँखे फाडे, किंकर्त्तव्यविमूढ, महाप्रतिहारको चले जानेका इशारा किया। कुमारदेवी जिस ओरसे आई थी, तेजीसे उसी ओर चली गई। पीछे-पीछे गई सजीली रानी और महाप्रतिहार।

महाप्रतिहार चारो तरफ छिपता हुआ राजमहलके वाहर निकला। चाँदनीमे आकर उसने आँखें ऊपर उठाई और उधर देखा, जहाँ खडे होकर सम्राट्ने उसे नई रानीके पास जाकर क्षमा माँगनेकी सलाह दी थी। उसकी आँखोमे जल भर आया था, किंतु फिर भी उस जलके भीतर कुछ आभूषणोकी झिलमिलाहट दिखाई दी। उसने आँखे मली और देखा अँधेरेकी हलकी-सी छायामे इस समय सम्राट् फिर उसी जगह उपस्थित थे।

वह दौडकर सम्राट् चद्रगुप्तके चरणोमे गिर पडा, और उसकी आँखोका वहुत देरसे रुका हुआ वाँध हिचकियाँ लेते हुए टूट पडा। इसी रुदनमे उसने अपनी प्रतारणाका सारा उलाहना चद्रगुप्तके सामने उँडेल दिया।

सम्राट्की सीढी टूट गई थी।

उन्होने महाप्रतिहारको कवे पकड़कर उठाया। "निर्भय हो, सेवक। परोक्षमे यह हमारा ही अपमान हुआ है। तुमने केवल सम्राट्की सेवा की है। तुम्हें दुःखी होनेकी कोई आवश्यकता नही है।"

महाप्रतिहार आश्वासन पाकर चला गया। लेकिन सम्राट् वहाँसे कव गये, सुवह तक गये भी या नही, यह किसीको पता नही चला। जिसने सैकडो खाइयाँ पलके मारते शत्रुओंके शवोसे पाट दी थी, वह इस छोटी-सी अलक्ष्य खाईको पाटनेकी योजना वनाता हुआ पत्थरोके दालानमे सारी रात घूमता ही रहा।

× × ×

सुवह हुई और कुमारदेवीने जयकीर्त्तिको उपस्थित करनेकी आज्ञा दी। जयकीर्त्ति आया। उसने नवोढाका वैभव और शृगार देखा, और

देखताका देखता रह गया। वैशालीके गणपतिके घरमें तो युगोंसे इतनी संपदा इकट्ठी नहीं हुई थी।

"देखा, बंधु," कुमारदेवीने कहा, "इन लोगोंने गणपतिकी बेटीको कितना नीचे दबा दिया है?"

जयकीर्त्तिका सम्मोहन हटा। "हाँ, देवी, देख रहा हूँ, समझ रहा हूँ।"

शायद जयकीर्त्ति पूरा-पूरा अनुमान नहीं लगा सका था। कुमारदेवी-के रोम-रोममें पाटलिपुत्रकी राजसत्ताके प्रति घोर घृणा समा चुकी थी। वह सारी रात उसने सपने देखते बिताई थी। वैशालीके सरल, स्वच्छंद, आत्मगौरवसे पूर्ण संगी-साथियोंके सपने, जिनमें मनुष्यके सामने कभी न झुकनेका आत्मविश्वास था।

"अब समय निकट आ रहा है, बंधु जय," कुमारदेवीने कहा। "वैशालीका शरीर बच गया। वैशालीकी बेटीको अपना शरीर बचाना है। लाओ वह उपहार, जो तुम मेरे लिए वैशालीसे साथ लाये थे।"

यंत्रकी तरह जयकीर्त्तिने अपनी कमरपेटीसे हलाहलकी पुड़िया निकालकर कुमारदेवीके बढ़े हुए हाथपर रख दी।

कुमारदेवीने पुड़िया चोलीमें रख ली। "जाओ, प्रतीक्षा करो। समाचार मिलते ही वैशाली दौड़ जाना। गणोंसे कहना कि उनकी बेटीने उनके शत्रुका अंत करके ही अपना अंत किया है। उसने इस विष मिले हुए रक्तसे वैशालीका गौरव उसे लौटा दिया है।"

"देवी!" भावातिरेकसे जयकीर्त्ति और कुछ न बोल सका।

"जाओ, बंधु जय, विदा। कर्त्तव्यके समय शोक नहीं मनाया जाता।"

जयकीर्त्ति वहीं अपने नेत्रोंसे आये आँसुओंको पोंछकर बाहर निकल गया।

कुमारदेवीने विष मिलाकर अंगूरोंके रसके दो प्याले तैयार किये और संध्या होते न होते वह सम्राट् चंद्रगुप्तका समुचित स्वागत करनेके लिए तैयार हो गई।

एक पहर रात वीतनेपर सम्राट्के आनेका समाचार मिला। तीखे मनकी कटुता सँभालकर कुमारदेवी द्वारकी ओर टकटकी लगाकर खडी हो गई। दासीने अदर आकर निवेदन किया, "सम्राट् पधारनेकी अनुमति चाहते हैं, महादेवी।"

"सम्राट् अनुमति चाहते हैं!" कुमारदेवी हँस दी। "अनुमति है।"

दो क्षण वाद सम्राट् द्वारपर थे। कुमारदेवीकी नजरोसे उनकी नज़रे मिली, और अपराधीकी तरह झुक गई। अपूर्व थी कुमारदेवीकी छटा, अनुपम था उसका तेज।

चद्रगुप्त पहले वोला, "पाटलिपुत्रके राजमहलोमे उतनी सुविधाएँ नही है। देवीको कोई कष्ट तो नही हुआ?"

"यहाँ इतनी सुविधाएँ है कि स्वय उन्हीसे कष्ट होता है," कुमारदेवीने उत्तर दिया।

चद्रगुप्त हँसा। "महाप्रतिहारने भी हमसे यही कहा था कि देवीको कोई कष्ट है।"

महाप्रतिहारका नाम सुनते ही कुमारदेवीकी भौह सकुचित हो गई। "सम्राट्के आतकका उसने जो परिचय दिया था, उससे मनुष्य कहलानेवाला कोई प्राणी सुख अनुभव नही कर सकता। जिसे कोई जीतकर लाये उसके लिए इतना आदर उसके मुँहपर तमाचा मारनेके लिए ही किया जाता है। शायद सम्राट्ने ही उसे वे आदरके शब्द परिश्रम करके सिखाये थे।" सयम रखते-रखते भी कुमारदेवीके स्वरमे तीखापन साफ तौरसे उभर रहा था।

चद्रगुप्तने इस तीखेपनको पीकर शातिसे पलके झपकाई। "इससे भी ज्यादा परिश्रम हमे उसके यहाँसे लौटनेके वाद करना पडा। हमने उसे समझाया कि देवी वीमार है। हमने वडी कठिनाईसे उसे देवीकी महानताका विश्वास दिलाया।"

"नही, नही," कुमारदेवीका ज़वरदस्ती रोका हुआ रोष फूट पडा।

"मैं महान् नहीं हूँ। मैं बीमार भी नहीं हूँ। किंतु यदि इसी प्रकारके दीन व्यक्ति मेरे सामने आते रहे, तो मैं सचमुच बीमार हो जाऊँगी। तब शायद मैं महान् भी हो जाऊँगी!" उसने 'महान्' शब्दपर ज़ोर दिया।

चंद्रगुप्त एकटक कुमारदेवीके मुँहकी ओर देखता रहा। वह न जाने किस दवाकी घूँट पीकर आया था। समतल स्वरमें उसने कहा, "देवी, वैशालीके एक उद्यानमें एक बार हमें जो लड़की मिली थी, वह निश्चय ही महान् थी। उसका प्रेम गौरवसे ओतप्रोत था।"

"गौरव और महानता!" कुमारदेवी फीकी हँसी हँसी। "ये वैशाली-के समाजके अंग हैं, उसके व्यक्तिके नहीं। फूलको उसके पौधेसे तोड़कर कोई दो दिन बाद उससे पूछे उसका गौरव कहाँ चला जाता है!"

चंद्रगुप्तने एकदम पासा पलटा। "देवी देवी नहीं रही, मानवी हो गई है, तुम हमें यही तो विश्वास दिलाना चाहती हो? अच्छा, आजसे हम देवीको मानवी ही कहा करेंगे।" कुमारदेवीकी ओर देखता हुआ वह उस छोटी-सी जगहमें ही चहल-क़दमी करने लगा। "कल रातभर राज-महलके दालानमें हम मानवीके हृदयको समझनेके लिए चक्कर काटते रहे। जानती हो इस सोचनेका क्या परिणाम निकला?" उसने पूछा। फिर स्वयं ही अपने प्रश्नका उत्तर दिया, "हमने अनुभव किया कि मानवी हमें मानवसे ऊपर समझती है, इसीलिए हम मानवीसे दूर हैं। हम एक साधारण केवल मानव बनकर मानवीके पास आये हैं।"

कुमारदेवीके मुँह परसे अपनी दृष्टि हटाकर चंद्रगुप्त एक क्षण रुका। फिर स्वयमें ही डूबकर बोला, "प्रत्येक मनुष्यकी अपनी कमज़ोरियाँ होती हैं। हमने सम्राट् बनकर देश विजय किये, योद्धाओंको पराजित किया, पराक्रम दिखाया। लेकिन आज.. आज हमारा प्यार हमारी सबसे बड़ी कमज़ोरी बन गया है। एक मामूलीसे मामूली आदमीमें और हममें कोई अंतर नहीं रह गया है।"

कुमारदेवी अब भी चुप रही। वह अपने भावोंके साथ डूबती-उतराती

रही । सचेत होकर वस्तु-वस्तुपर घूमती हुई चद्रगुप्तकी दृष्टि एक जगह अटकी और फिर कुमारदेवी पर जाकर टिक गई । "और हमे विश्वास है कि तुम हमारे हृदयकी इस कमजोरीको पहचानती हो । इसीलिए तुमने हमारे स्वागतके लिए दो प्याले भरकर रखे है । तुम अपने अभिमानके कारण इन्हे प्रस्तुत करना ही भूल गई । हमने तुम्हें पकड लिया है, मानवी । हमने भी तुम्हारी कमजोरी पहचान ली है ।"

सरलता और उल्लाससे चद्रगुप्तकी दृष्टिका तेज दुगुना हो गया । इस तेजको न सहनेके कारण कुमारदेवी सिरसे लेकर पैरतक सिहर उठी । जो व्यक्ति रातभर जागकर, उसके हृदयको समझनेके लिए गुदगुदी कोमल शैया छोडकर पत्थरोमे घूमता रहा उससे उसकी कौन-सी भावना छिप सकती है ? चद्रगुप्त सब कुछ समझकर उसे नचा रहा है । अप्रकटके प्रकट हो जानेके भयसे काँपकर अनजाने ही कुमारदेवीकी नजर उन विष-भरे प्यालोपर गई और साथ ही चद्रगुप्तकी अतर्भेदी दृष्टिने उसका पीछा किया । किसी दुर्गम सभावनातक पहुँचा हुआ कल रातका उसका एक विचार स्पष्ट होकर उसके मस्तिष्कमे उभरा और उन प्यालोसे हटकर फिर दोनोकी नजरे एक दूसरेसे मिल गई ।

कुमारदेवी जल्दीसे बोल उठी, "मै कमजोर हूँ, मै मानवी हूँ, इसीलिए सम्राट् अकेलेमे मुझे त्रास देनेके लिए चले आये है ।"

प्रेयसीकी स्पष्ट प्रतारणासे चद्रगुप्तकी सरल मुद्रा करुणाजनक मुद्रामे बदल गई । ऐसेमे वही सँभल सकता है, जिसने स्थितिके प्रत्येक पहलूमें डूबकर मनन किया हो । उसने सर्वथा शात और गभीर वाणीमे धीरे-धीरे कहा, "जो सम्राट् था उसका सारा बल वैशालीकी एक दृढ कन्याके सामने खड-खड हो गया है । हम त्रास देनेके लिए नही आये है । हम यह देखनेके लिए आये है कि जिसे हमने पागल बनकर प्रेम किया, जिसके नेहको हमने वर्षोतक अपने मनमे सजोकर रखा, उसके पास हमे त्रास देनेके लिए कितने अस्त्र है । वैशालीकी मानवी देखे कि हम अपनी कमजोरीका परिणाम भुगतनेमें कितने दृढ है ।"

चंद्रगुप्त शांतिसे आगे बढा। कुमारदेवी आंखें फाड़े देखती रही। चंद्रगुप्तने मृत्युके दूतके सुन्दर कलेवरको अपने दायें हाथमें उठा लिया। "चाहे यह स्वागत हमारे जीवनके लिए अंतिम ही क्यों न हो, हम इसे मानवीका पहला स्वागत समझेंगे।" और उसने स्वर्णपात्र मुँहसे लगा लिया।

× × ×

कुमारदेवी फुरतीसे झपटी। उसका हाथ तेजीसे घूमा और चंद्रगुप्तके हाथमें थमे विषके स्वर्णपात्रने झन्न-झन्न करके फर्शपर अपना रक्त उँडेल दिया। चंद्रगुप्तकी आँखें उल्लाससे चमक गई। कुमारदेवी उद्वेगको सँभाल न सकनेके कारण खड़ी-खड़ी थरथर काँपने लगी।

चंद्रगुप्तने पुकारा, "देवी!"

कुमारदेवी चौंकी और सचेत हो गई। उसके फैले हुए नेत्र एकबार धीरेसे मुँदकर खुल गये, मानो नायिकाकी थकी हुई निढाल पलकोंने नायककी पुकारका मौन उत्तर दिया हो।

जब चंद्रगुप्तने कक्षमें प्रवेश किया था, उसके बायें हाथकी मुट्ठी बंद थी। अब वह उसने खोल दी। उसपर एक सोनेकी मोहर प्रकाश पा कर चमक उठी। चंद्रगुप्तने कहा, "हमने रातभर ही विचार नहीं किया, दिनमें भी कुछ किया। दुर्भाग्यने हमें सम्राट् भी बनाया है, इसलिए हमें अपनी सम्राज्ञीको बराबरका अधिकार भी देना था। हमने राज्य भरमें इस मोहरको प्रचलित करनेकी आज्ञा दी है। इसके एक ओर चंद्रगुप्त और कुमारदेवीकी मूर्तियाँ और नाम अंकित हैं। दूसरी ओर, जिन लिच्छवियोंने हमें सम्राट्से मानव बनाया है और एक अनुपम मानवीका हाथ हमारे हाथमें दिया है, उनकी स्मृतिमें 'लिच्छवय' शब्द खुदा है। अब सम्राज्ञीकी आज्ञाएँ सम्राट्की स्वीकृतिके बिना राज्य भरमें तत्परतासे पालन की जायेंगी। हम मिट जायेंगे, किंतु हमारी ये मोहरें हमारे तन, मन और धनकी बराबर साझेदारीकी कहानी सदा संसारको सुनाती रहेंगी। गुप्तोंका वैभव लिच्छवियोंके गौरव और महानताके साथ-साथ याद किया जायेगा।"

कुमारदेवी होठ सिये एकटक उस मोहरकी ओर देखती रही। चद्रगुप्तने आगे कहा, "हमने इसे पहले इसीलिए नही दिखाया कि मानवी इसे कही एक सम्राट्का प्रलोभन न समझ बैठे "

कुमारदेवीके नेत्रोमें पानीकी एक हलकी-सी परत धीरे-से उभर आई थी, और सम्राट् चद्रगुप्तकी लबी उँगलियोमे थमी हुई वह मोहर अस्पष्ट होती जा रही थी। कही बहुत गहरेमे सोये हुए एक मागधी राजकुमारके स्नेहका नन्हा-सा स्फुलिंग एकाएक भभक उठा।

चद्रगुप्त कहता ही जा रहा था, "यदि यह रसका प्याला हमे सदाकी नीद सुला देता, तो बादमे मानवी इस मोहरको देखती। तब हमारा सिर उसकी गोदीमें होता, और हमे सबकुछ मिल जाता।"

और क्या होता यह कुमारदेवीके समझनेके लिए शेष रह गया। उसका मन इस प्रेमकी पराकाष्ठाकी यादमे उसे सौ-सौ आँसू रुलाकर मारता। कुमारदेवी भी मर जाती, किंतु उसकी सारी घृणा मरनेसे पहले सम्राट्परसे उतरकर उसे ही दबोच लेती। मर जाये ऐसी प्रेमिका तो अच्छा हो ।

कुमारदेवीके हाथने अनजानेमे ही भरा विषका दूसरा स्वर्ण-पात्र उठा लिया, और इससे पहले कि वह उसके होठोतक पहुँचे, चद्रगुप्तकी लंबी उँगलियोने उसकी कलाई थाम ली। कुमारदेवी खिंचकर चद्रगुप्तके निकट आ गई। उसके पानी भरे नेत्रोने चद्रगुप्तकी स्नेहसे व्याकुल आँखोमे झाँककर कुछ टटोला, और विष-पात्र उसके हाथसे छूट पडा। कुमारदेवी अपने प्रियतमके वक्षमे समा गई।

अगली सुबह जयकीर्त्ति फिर कुमारदेवीके सामने था। कुमारदेवीने स्मित मुद्रासे उसे आदेश दिया, "बन्धु जय, आज ही वैशाली जाना होगा। गणपतिसे कहना कुमारदेवीने अपने सोये हुए स्नेहको पहचान लिया है। वैशालीने बिना जाने ही कुमारदेवीको उसकी प्रियतम वस्तु दी है। इसके लिए वैशालीको हीनता अनुभव करनेकी आवश्यकता अब नही रह गई है। कुमारदेवी वैशालीका आत्म-सम्मान ज्यो-का-त्यो उसे लौटा रही है।"

और युवक जयकीर्त्तिकी आँखें हर्षसे नाच उठी।

शतरंजके मोहरे

बगदादके खलीफा वालिद बिन अब्दुल मलिकको आज्ञासे हिंदुस्तान पर अरबके मुसलमानोका सबसे पहला आक्रमण हिजरी ९३ में हुआ। वे जिहादके जोशसे भरपूर, टिड्डी दलकी भाँति भारतके उत्तर-पश्चिमी सिरेमे आये और सिंधके इलाकेपर छा गये। ब्राह्मण राजा दाहिर उनका मुकाबला करनेके लिए आगे बढा और उसने वीरगति प्राप्त की। लेकिन उसका प्रधान गढ, रावडका सुदृढ किला अभी शेष था, जिसे सर किये बिना आगे बढना असभव था। किलेकी कमान राजा दाहिरकी विधवा रानीके हाथोमें थी। स्थान-स्थानपर दूत भेजकर उसने विभिन्न राजाओकी सहायतासे पन्द्रह हजार जवानोको रावडमें एकत्र किया था। लेकिन दूरदराजसे मजहबके नामपर जान हथेलीपर लेकर आनेवाले विदेशी यवन तादादमें उनसे कही बढचढ कर थे। हार निश्चित थी, अवश्यभावी थी।

राजा दाहिरकी दो लडकियाँ थी, जालपा और दर्पणी। दोनो ही युवा थी। जब हार स्पष्ट ही सामने दिखाई देने लगी, तो रानीने उन दोनोको एकान्तमें बुलाया। बारी-बारीसे उनके मस्तकोको चूमकर उसने कहा :

पुत्रियो, तुम देख रही हो भाग्य आज हमारे विपरीत हो गया है ?"

अब क्या होगा ?" जालपा घबराकर बोल उठी।

'कुछ नवीन नही होगा," रानीने अविचलित स्वरमे कहा। "मृत्यु और जीवन दोनोके लिए हमने रास्ते बना रखे हैं। हममें यही विशेषता है कि हम हारते नही। जब हार आती है, तब हम नही रहते। आँगनमे एकत्र चदन तुमने देखा होगा। शीघ्र ही उसमें एक ज्वाला उठेगी और वह ज्वाला हमारे बचे-खुचे वीरोके हृदयपर छा जायेगी। यवन किला जीत लेंगे, लेकिन उन्हें उसका महँगा दाम देना पडेगा।"

दर्पणीकी आँखोमे आँसू आ गये । वह विलखकर वोल उठी, "माँ !"

"यह रोनेका समय नही है, वेटी । रोना उसे ही शोभा देता है, जिसके रोनेमे प्रलय हो । अत निकट है, किंतु मुझे उससे पहले तुम दोनोसे कुछ कहना है । मुझे विश्वास है कि तुम उसे सूत्रकी तरह याद रखोगी ।"

दोनो राजकन्याएँ विकल होकर सिह-माताके चरणोसे लिपट गई । "कहो, माँ," जालपाने कहा । "हमे आज्ञा दो और तुम देखोगी कि चिता हमें तुमसे भी अधिक प्यारी है ।"

उनके सिरोपर हाथ रखकर वीर माताने कहा, "नही, जालपा, मुझे एक दूसरी ही तरहकी वात कहनी है । सभव है इससे तुम्हे युगो-युगोका विश्वास ढहता प्रतीत हो । लेकिन इसीसे देशका भला होता है और जीवन गुलामीके वधनोसे मुक्त होता है । वेटी, जालपा, दर्पणी, मुझे जल्दी है, वहुत थोडेमे कहूँगी ।"

दिन भरकी भागदौडसे रानी थक गई थी । किलेके भारी फाटककी दिल हिला देनेवाली चरमराहट वहाँ तक सुनाई देने लगी थी । महलके वाहर चदनकी चितामे पडते हुए घीकी चडचड भी कानोमे पड रही थी । रानीने पास ही रखे एक मोढेपर वैठकर कहा .

"प्रत्येक व्यक्तिका समाजके लिए कुछ-न-कुछ उपयोग है । जव समाज के ऊपर सकट आता है, तो प्रत्येक व्यक्तिसे यह आशा की जाती है कि वह उसके विरुद्ध पक्तिवद्ध होकर खडा हो जायेगा । किंतु हमारा समाज नारीसे यह आशा नही करता । वह समाजका नही एक व्यक्तिका अग मानी जाती है । वह जव तक जीती है, केवल एकके सुखका साधन समझी जाती है । जव उसका स्वामी मर जाता है, तव उसके भी जल मरनेका विधान है । जव उसका समाज अपनी कमजोरीके कारण उसकी रक्षा नही कर पाता, तव भी उससे यही आशा की जाती है कि वह मर जाये । इस प्रकार ये क़ीमती हीरे, जो कुछ समय वाद शत्रुकी छातीके नीचे उतर सकते है, उसे मृत्युकी पीडाका स्वाद चखा सकते है, समयसे पहले ही नष्ट कर दिये

जाने हैं। मुझे इसमें विरोध है। मरना हर एकको होता है– कुछ देर आगे या पीछे। किंतु इन्सान वही है जो यमको भी अपनी मृत्यु महँगे दामों बेचता है। सतीत्व जानेके डरसे जल मरना कायरता है। उसे जाना है तो जाने दो। नारी वही है जो जाते हुए सतीत्वको भी महँगे दामों बेचती है। इतने महँगे दामों कि शत्रु उसे दे न पानेके कारण पेट फाड़कर मर जाये। वचन दो कि तुम दोनों मरनेकी चेष्टा नहीं करोगी, और जब मरने लगोगी तो अपने समाजको अपने अभावकी कुछ कीमत देकर जाओगी।" विचार के कारण रानीके मुखपर अनेक बल उभर आये।

"हम वचन देती हैं, माँ," जालपा और दर्पणीने एक साथ कहा। "लेकिन तुम क्यों चितामें कूद रही हो, माँ ?"

"मेरा समय समाप्त हो चुका है," रानीने किसीका पदचाप शीघ्रता-पूर्वक उसी ओर आता हुआ सुनकर जल्दीसे कहा। "विजय या मृत्यु, एक रानीके लिए ये ही दो रास्ते हैं। अब मैं उन लोगोंमें अवविश्वासका ईंधन बनने जा रही हूँ, जिनकी चेतना मेरी जीवित-चिताकी ज्वालासे ही उत्तेजना प्राप्तकर शत्रुपर जीतोड़ प्रहार कर सकेगी। पुत्रियो, मैं अपने अभावकी पूरी-पूरी कीमत देशको देकर जा रही हूँ।"

इतनेमें प्रतिहारने आकर कहा, "महादेवी, क़िलेका द्वार टूट चुका है। शत्रु नगरमें घुस आया है। राह-रास्तोंपर मारकाट मच रही है। राज्यपुरोहित आप तीनोंकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। चिता अपनी पूरी तेजी पर है, महादेवी। एक-एक युवक केसरिया बाने पहने महादेवीके बलिदान-की राह देख रहा है।"

"तुम चलो, मैं आती हूँ," रानीने कहा।

प्रतिहार चला गया। उसके जाते ही रानीने दोनों लड़कियोंका हाथ पकड़ा और जल्दीसे महलकी ओर चली। उस समय एक गुप्त और सुरक्षित तहखाना ही रानीका लक्ष्य था।

थोड़ी देर बाद रानी चिताके पास बनी ऊँची मचानपर आई और

लोगोके देखते-देखते चितामे कूद पडी। एक विशाल जयघोष हुआ। उसका वेग समाप्त होते ही राजपुरोहितको याद आया कि अभी दो आहुतियाँ और शेष थी और रानी अकेली आई थी। केसरिया बानोवाले युवक उछलते-कूदते, नेजे-बरछे चमकाते बाज़ारोकी ओर पिल पडे। इधर राजपुरोहित दोनो लुप्त राजकन्याओको ढूँढनेके लिए राजमहलमे इधर-से-उधर चक्कर काटने लगा।

× × ×

यवनोका सेनापति प्रसिद्ध विजेता मुहम्मद-बिन-कासिम था। सध्या होते-होते वह राजमहलके द्वारपर पहुँच गया। द्वार अदरसे बद थे, जो पलक मारते तोड दिये गये। मुहम्मद दलबल सहित भीतर घुसा। जहाँ जो मिलता उसे हिरासतमे ले लिया जाता। तलवार म्यानमें डाले, विजयके गर्वसे मस्तक ऊँचा उठाये वह महलके कोने-कोनेका निरीक्षण कर रहा था, जैसे शेर गायको मारकर उसे चारो ओरसे घूम-घूमकर सूँघता है।

राजमहलके अतरीय भागमे, एक छोटेसे दरवाजेके बीचोबीच दोनो सदलियोपर अपना एक-एक हाथ टिकाये एक वृद्ध पुरुष खडा था। उसकी तीव्र और जलती हुई दृष्टि ठीक सामनेसे आते हुए यवन सेनापति पर पड रही थी। उसकी हड्डियाँ, जो दूरसे ही गिनी जा सकती थी, साँसके तीव्र आवागमनसे जल्दी-जल्दी उठ-बैठ रही थी। सेनापतिके निकट आते ही वह जोरसे चिल्लाया

"ओ यवन, ठहर जा! अभी इस महलके भीतर दो सतियाँ शेष है। उनका अतिम संस्कार होनेसे रुका हुआ है। अगर इस संस्कारके पूर्ण हुए बिना तूने भीतर कदम रखा, तो तू भस्म हो जाएगा।"

मुहम्मद-बिन-कासिमने उसका तात्पर्य समझनेके लिए साथमे आये एक दुभापियेकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखा। जब वह उसका मतलब बयान कर चुका, तो उसने एक यवन सैनिककी ओर इशारा किया, "इस बुड्ढेको तलवारके घाट उतार दो।"

तलवारका एक भरपूर हाथ राजपुरोहितपर पडा और उसका सिर,

आँखें फाडे, अधेरेमें एक ओरको जा गिरा। विना किसी प्रकारका भाव प्रकट किये यवन सेनापति गभीर मुद्रामे महलके अतरीय भागमें घुस गया। उसने सच्चे मजहबका एक और स्तभ गाडा था। उसने अरबकी एक चिर-प्रतीक्षित विजयकी साव पूरी की थी। अरबके मुसलमान उसकी तलवार की तारीफ करेगे, दुनियामे बीमारीकी तरह जगह-जगह बसे काफिर उसकी तलवारका लोहा मानेंगे और खलीफा इज्जतके साथ उसे अपने दिलमे जगह देगा। काफिरोंके साथ जुल्म करना बेजा नही, लेकिन उस-पर हँसना एक मुसलमानका काम नही। यह था मुहम्मद-बिन-कासिम-का उसूल। अफसोस कि वह महलके भीतर भस्म नही हुआ!

जाल्पा और दर्पणी तीन दिन तक अपने जीको दबोचे, भूखी-प्यासी, उस अधेरे तहखानेमे बन्द पडी रही। आखिर जालपाने बाहर निकलने-का निश्चय किया। जब मरना ही है, तो भूखो नही मरेगी।

कही रातका अँधेरा, कही मशालोकी रोशिनी—सारा महल भूतोके निवासकी तरह लग रहा था। दर्पणी आँखे फाडे, अपनी बहनके बदनसे बदन सटाये, पथरीली दीवारके सहारे-सहारे राजमहलके प्रवेश-द्वारकी ओर बढी जा रही थी। फिर वे एक लबे-चौड़े गलियारेमे मुडनेके लिए ठहर गई। जालपाने झाँककर देखा—दूर तक दोनो ओर मशाले दीवारोमे खोसी हुई थी। जालपाने दर्पणीका हाथ कसकर पकड़ा और तेज़ कदमोसे गलियारा पार करने लगी।

गलियारेके अतमे जब वे फिर मुडी, तो सहसा जालपा ठिठक गई। उसके शरीरमें काटो तो खून नही। उनके सामने एक हट्टा-कट्टा यवन सैनिक खडा था, जिसकी छातीपर भयानक काली दाढी लटक रही थी। आहट पाकर वह घूमा और चकराकर इन दोनोकी तरफ देखने लगा। फिर कुछ समझकर वह मुसकराया और उसका हाथ अपनी मूँछोपर पहुँच कर उन्हें ऐंठने लगा। दर्पणीने भयाक्रात होकर एक चीख मारी।

सहसा वे दोनो मुडकर पीछेकी ओर दौड़ चली और यवन सैनिक

दीवारमेंसे मशाल उतारकर उनके पीछे-पीछे भागा। वह अरबीमें चिल्लाता जा रहा था : "लडकियो, ठहरो तो सही। तुम लोगोको ढूँढनेके लिए हम लोगोने ज़मीन-आसमानके कुलावे मिला दिये। अरे, वच कर जाती कहाँ हो, छोकरियो ?"

पकडके निकट आते ही जालपा स्थिर होकर घूम गई। दर्पणी उससे चार पग आगे जाकर ठहरी। यवन इस आकस्मिक प्रतिक्रियासे फिर ठिठक गया। जालपाने तीव्र स्वरमें पूछा, "कहाँ है तेरे सेनापति ?"

उसकी वात न समझकर यवन खडा-खडा हँसने लगा। आगे वढकर उसने धृष्टतासे जालपाका हाथ पकड लिया और फिर दर्पणीकी ओर वढा। दर्पणीने दोवारा एक चीख मारी और अचेत होकर ज़मीनपर गिर पडी। उस वलशाली यवनपर इसका कोई असर नही हुआ। शायद वह जानता था कि इस स्थितिमे लडकियाँ वेहोश होनेके अलावा और कोई काम नही कर सकती। उसने दर्पणीको उठाकर कधेपर डाल लिया और जालपाका हाथ पकडे उसे खीचता हुआ ले चला।

कुछ देर वाद दोनो सिंधी राजकुमारियाँ यवन सेनापति मुहम्मद विन कासिमके सामने थी। उन्हे देखते ही वह वोला, "खुदाका फजल है। तुम दोनोंके लिए ही मैं ठहरा हुआ था। नही तो अवतक मुलतान तक पहुँच चुका होता।"

राजकन्याओके पल्ले उसकी वातका एक अक्षर भी नही पडा, यह समझकर मुहम्मदने उस सैनिकको आज्ञा दी, "ऐ, जाओ, जमाल मियाँको वुला लाओ।" यह सेनापतिका ज्ञानवान् दुभापिया था।

जमाल मियाँ आये और लडकियोके ऊपर एक निगाह डालते ही वह जहाँके तहाँ खडेके खडे रह गये। लेकिन मुहम्मद विन कासिमका ध्यान उस तरफ नही था। दुभापियेके आ जानेको अनुभव करके वह मुँह फेरे-फेरे ही वोला :

"सूरजको देखते ही जिस तरह तारे एक-एक करके भाग जाते है, उसी

तरह विजयी मुहम्मदके सामने आते ही तुम्हारे वीरोंकी आत्माएँ इस दुनियासे कूच कर गई हैं। मुहम्मद अपने साथ इस्लामका तेज लेकर आया है। उस इस्लामकी बाँहें लंबी और छायादार हैं। उनके नीचे सबको पनाह मिल सकती है। लड़कियो, खुदाकी रहमत है कि इस्लाम तुम्हारी तरफ अपना हाथ बढ़ा रहा है। बोलो, क्या इरादा है?"

जमाल मियाँने सेनापतिकी बात ज्यों-की-त्यों सिंधीमें अनुवाद कर दी। जालपाने कहा, "जिस तरह स्वतंत्र विचरते हुए निर्दोष हिरणोंको पापी भेड़िये गोल बाँध कर मार डालते हैं, उसी तरह, ओ यवन सेनापति, तूने हमारे प्रिय माता-पिताको मार डाला है। तू जिस इस्लामका इतने गर्वसे नाम लेता है वह हत्या और विनाशका दर्शन है। ओ इस्लामके दंभी नेता, तू शेर जरूर है पर तूने भूलसे सेहियोंको दबोच लिया है। या तो उन्हें छोड़ दे, नहीं तो पल भरमें उनके काँटे खड़े हो जाएँगे, और तुझे नष्ट कर देंगे।"

मियाँका अनुवाद खतम होते-न-होते मुहम्मद कासिम घूम गया। धर्मान्ध भावोंसे मिश्रित उसका मुख तन गया और उसने तीखे स्वरमें कहा, "बहादुर कासिमका बेटा मुहम्मद काफिर औरतोंको मुँह नहीं लगाता। उसकी एक बीबी है, जो इस दुनियाके गुनाहोंसे पाक है—वह उसे प्यारी है। लड़कियो, तुमने इस्लामके पाक मजहबकी तौहीन की है। बगदादके बाजारमें जिस वक्त तुम दोनों गुलाम बनाकर बेच दी जाओगी, तब तुम्हें पता चलेगा कि इस्लामको नफरतकी नजरसे देखनेवालोंका क्या अंजाम होता है।"

जालपाकी भौंह तन गई। दर्पणीकी मुद्रा करुणाजनक हो गई। वह बड़ी बहनके और नजदीक सिमट गई। जालपाने सेनापतिकी बातका उत्तर दिया, "सेनापति, अभी तो सिख ही लिया है। आगे बढ़, और देख कि अत्याचारको धर्म समझनेवालोंका क्या परिणाम होता है।"

मुहम्मद इन बच्चों जैसी बातोंपर हँसा। "हाँ, हमें परिणामका पता है। हम आगे बढ़ेंगे, और वहाँ सैकड़ों तुम्हारे जैसे हीरे बगदादके खलीफाके

हरमकी रौनक बढानेके लिए हमारी राह देख रहे होंगे—कीमती हीरे! हा हा हा!"

"हाँ," जालपाने दाँत भीचते हुए कहा, "कीमती हीरे, जो जल्दी ही जबानसे फिसलकर पेटमे पहुँच जाते है, और अँतडियोको काट देते है।"

अब सेनापतिको क्रोध आने लगा था, और औरतोपर क्रोध उतारना वह कायरता समझता था। उसने जमाल मियाँकी ओर देखकर आज्ञा दी, "आज ही कारवाँ तैयार किया जाय। जमाल मियाँ, तुम इन लडकियोको साथ लेकर बग़दाद जाओगे। खलीफाके हुजूरमे हमारी तरफसे तोहफे पेश करना और इन लडकियोको खलीफाका हुक्म लेकर बगदादके सबसे जालिम व्यापारीको बेच देना। जाओ, कमबख्तो, तुम्हारी यही सजा है।"

जमाल मियाँ फिर उसकी बातका अनुवाद करके लडकियोको समझाने लगे कि मुहम्मदने उन्हें बीचमें ही रोककर ज़ोरसे आज्ञा दी "जाओ!"

जमाल मियाँ ज़मीनपर झुक गये और तुरन्त दोनो राजकन्याओके हाथ थामकर उस स्थानसे बाहर हो गये।

× × ×

उसी दिन हब्शियोकी एक बडी टुकडीके साथ जमाल मियाँका कारवाँ दोनो राज-कन्याओको साथ ले बगदादके लिए रवाना हो गया।

जालपा और दर्पणीकी स्थिति उन यात्रियोंकी तरह थी, जिनकी नाव अपने समूहसे बिछुड गई हो और मँझधारमे आसमान पर काले बादल घिर कर उन्हें भयावने भविष्यकी काली-काली छायाएँ दिखा रहे हो। जालपाके हृदयमें सब भावनाओंसे ऊपर उभर कर प्रतिशोधकी भावना बार-बार वेगके साथ जाग उठती थी। दर्पणी केवल रो रही थी। वैसे भी वह भूखी थी। म्लेच्छ यवनोके हाथका खाना उसके गलेके नीचे ठीक प्रकारसे उतरा नही था। मजबूरीमे जो कुछ खाया गया था वही, मालूम होता था, जैसे अभी तक गलेमें अटक रहा हो।

जब कही पडाव पड़ता था, जमाल मियाँ उनके पास आ विराजते।

इस आक्रमणसे बहुत दिनों पहले उन्होंने हिंदुस्तान आकर संस्कृत और सिंधी जबानें सीखी थीं। वह हिंदुस्तानकी संस्कृतिको कुछ-कुछ समझनेका दावा करते थे। बुढ़ापेके किनारे पहुँच चुके थे। लेकिन शरीर स्वाभिमान खूनकी तरह लाल था। उनमें अब भी जवानोंसे ज्यादा हिम्मत थी।

दूसरे पड़ाव पर जमाल मियाँने कहा, "इसो, लड़कियो, मुझे हुक्म हुआ है कि तुम्हें बगदादमें अच्छे दामोंपर बेच दूँ। मुझे इस बातका बहुत अफसोस है कि उस नीरस सिपहसालारमें औरतकी कोमल भावनाओंको समझनेका जरा भी माद्दा नहीं है। गुलामोंके व्यापारी बड़े बेरहम और बेहया होते हैं। कभी-कभी खरीदारको उनके मालकी तरफसे दिलजमई करानेके लिए वे लोग औरतोंको सरेबाजार नंगा कर देते हैं। खुदाका कहर उनके सिर पर टूट पड़े!"

जालपाने दूर क्षितिजकी ओर देख कर एक लंबा निःश्वास छोड़ा। शायद वह अपने प्रारब्धको पढ़नेका यत्न कर रही थी।

जमाल मियाँकी निगाह दर्पणीपर जमी थी। वह आश्वासन देते हुए बोले "लेकिन जहाँ तक भी होगा मैं तुम्हें इस मुसीबतसे तो कमसे कम छुटकारा दिलवा दूँगा। हो सका तो मैं ही खरीद लूँगा। बगदादके अमीरोंसे जरा डर लगता है। जिस चीजके पीछे कमबख्त पड़ जाते हैं, उसके लिए कंगाल हो जानेमें ही इज्जतकी बात समझते हैं।" दर्पणीकी नजरें उनसे मिलीं और वह मुसकरा दिये।

लेकिन दर्पणीकी आँखोंमें उस समय कोई भाव नहीं था।

जमाल मियाँ चले गये। जालपाने दर्पणीको सुनाते हुए कहा, "हम आज हार गये हैं तो क्या? इस धर्मयुद्धमें जो मारे गये हैं उनके भाई, बहनें, विधवाएँ मौजूद हैं। एक दिन आयेगा और सिंध फिर उठेगा। सिंधी बाँके बगदाद तक पहुँचकर दुश्मनोंसे हमारी इस बेइज्जतीका बदला लेंगे। तुझे विश्वास होता है न, दर्पणी?"

दर्पणी विस्फारित नेत्रोंसे जालपाको देख रही थी। उसकी आँखोंकी

पुतलियाँ स्थिर थी। लगता था कि उनमे चेतना नही है। उसने शायद जालपाकी वात भी सुनी नही थी। वह अपने विश्वासकी वात क्या वताती? लेकिन प्रतीत हो रहा था कि जालपाके प्रश्नमे स्वय विश्वासका पुट नही था।

"क्या वात है, दर्पणी! तू ऐसे क्यो देख रही है?" जालपा उसके और निकट आ गई। उसे वाहुओमे भरते हुए वह वोली, "देख, मेरी अच्छी वहन, इस तरह दुखी नही होते। तुझे देख कर मेरा मन वैठा जाता है।"

दर्पणी चुप रही। तभी जालपाको ध्यान आया कि दर्पणी पिछले वक्त भी भूखी रही थी। उसने कहा, "यह दुभापिया अच्छा आदमी है। एक तवाक भरकर दलिया लाया था। कहता था पासके गाँवसे एक ब्राह्मणको पकड लाकर उससे वनवाया था। खासतौरसे तुझे खिलानेको कह रहा था। वह भी जानता है कि तू म्लेच्छोके हाथका खाना मनसे नही खाती। डेरेमें रखा है। मै ला रही हूँ। मेरी रानी वहन, दुख मनाना हमे शोभा नही देता।"

जालपा उसे छोडकर डेरेकी तरफ चली। गाँवसे ब्राह्मणको पकड लानेकी वात मनगढत थी। जिस उद्देश्यके लिए जालपा अपनेको जीवित रखे हुए थी उसीके लिए वह येन-केन-प्रकारेण दर्पणीको भी जीवित रखनेकी चेष्टा कर रही थी। दो चार पग चलकर सहसा वह घूम कर वोली, "अरे, अभी तो तू नहाई भी नही! चल, मै हब्शी गुलामसे कहकर पानी ..."

लेकिन आगेकी वात उसके मुँहसे नही निकली। इतना कहते-कहते उसकी निगाह जो दर्पणीपर गई तो वह लगभग चीख उठी "दर्पणी!"

जगलीपनसे दर्पणी अपनी उँगलीमें पडी अँगूठी जल्दी-जल्दी चवा कर उसका हीरा निगलनेकी चेष्टा कर रही थी। जालपा दौडी। अँगूठी वाला वायाँ हाथ थामकर वह ज़ोरसे वोली, "क्या करती है! पागल हो गई है? याद नही, माताजीने क्या-क्या कहा था? इतनी-सी मुसीवतमे सव भूल गई?"

लेकिन दर्पणीके दाँत अद्भुत ढगसे खुले हुए थे, गाल पीछेको हो गये थे, और नेत्र पहलेसे भी ज़्यादा आतकित थे। उसने अपना हाथ छुडानेकी कोशिश की, और जव नही छूट सका, तो उसने जालपाकी कलाईमे अपने

दाँत गड़ाकर बड़े ज़ोरसे काट खाया। पीड़ासे जालपा छटपटा गई। दर्पणीका हाथ उसके हाथसे छूट गया। फिर वह उसे अपने मुँह तक ले गई।

जालपा विवशकी तरह अपने चारो तरफ देखने लगी। चिल्लानेसे सब माजरा खुल जाता। फिर उनपर और भी कड़े पहरे बैठाये जाते, और उनके लिए दुश्मनसे बदला लेनेके अवसर हर प्रतिबन्धके साथ कम होते जाते। अतमें उसने एक बड़े ज़ोरका थप्पड़ दर्पणीके मुँहपर जड़ दिया।

दर्पणीका हाथ मुँहसे हट गया। थप्पड़की पाँचो उँगलियाँ उसके गोरे गालपर उभर आईं, और उसका वेग न सह सकनेके कारण वह एक ओरको लुढक गई। अँगूठीका हीरा लगभग बाहर आ चुका था। जालपाने उसे अपने दाँतोंसे पकड़कर निकाल लिया। दर्पणी अपने दोनो हाथोंसे मुँह छिपा कर बैठ गई। वह रो रही थी। उसका सिर अपनी छातीमें छिपाकर जालपा भी वही बैठ गई। उसके नेत्रोमें भी जल भर आया था।

दूर पहरेपर बैठे हब्शी उनकी किसी भी बातको समझ न पानेके कारण अविचल भावसे जहाँके तहाँ मिट्टीके माधोकी तरह बैठे रहे। जमाल मियाँ शायद कही डेरेके आसपास नही थे। होते तो निश्चय ही यह बग़दादके गुलामबाज़ारमें दर्पणीको खरीदनेके स्वप्न भूल जाते।

× × ×

हिंदुस्तानकी लूटका माल लिये जमाल मियाँके आनेका समाचार उनसे भी पहले बग़दादमें पहुँच गया। ख़लीफाने नये ऊँट भेजे कि थके हारे ऊँटोको छुट्टी दे दी जाये।

जब बग़दादकी चौहद्दीका बुलद दरवाज़ा इन लोगोको प्रवेश देनेके लिए खुला, तो 'अल्लाहो अकबर!' के नारोंसे बग़दादके निवासियोंने जमाल मियाँके कारवाँका स्वागत किया। सबसे आगे एक सजीली ऊँटनीपर जमाल मियाँ स्वय थे। उनके पीछे एक ऊँटपर महमिल था, जिसमें ज़र्कबर्क पोशाकोमे जालपा और दर्पणी बैठी थी। उनके पीछे हब्शी जवानोका ऊँट-दल था, जो हज़ारोकी सख्यामें कभी खतम ही होनेका नाम नही लेता था। सबके पीछे बग़दादी सैनिक थे, जिनकी तादाद

लगभग दो हजार थी। और इन लोगोके वीचमें असख्य तोहफे और अपार घन था, जो विजयी सेनापति मुहम्मद कासिमने खलीफाकी सेवामे अपनी वफादारी और जाँनिसारी के प्रमाणस्वरूप भेजा था।

वगदादके गोल गुवदोपर, छतोपर, छज्जोपर लोगोके ठट जूटे थे। लोग झाँक-झाँक कर उन जीवित हीरोको देखना चाहते थे, जिनकी चमक आँखोके साथ-साथ दिलको भी पार किये दे रही थी। दर्पणी फिर अपने हाथोमें मुँह छिपा कर रोने लगी। जालपाने उसकी ओर देखा, और भौंह विकृत करके उसने दर्पणीके हाथ उसके मुँहपरसे वलपूर्वक हटा दिये। "देखती नही, वगदादके निवासी हमारा कितना शानदार स्वागत कर रहे है! क्या तू यहाँ हिंदुस्तानकी हँसी उड़वाना चाहती है? ये लोग सोचेगे हिंदुस्तानकी स्त्रियाँ कितनी डरपोक होती है!" और दर्पणीने कोशिश करके अपना मुँह सीधा किया। उसके होठो पर मुसकराहट थी और आँखो में रुदन था।

विजयके जोश और उछाहके नारे लगाते लोग उस लंवे कारवाँके दाये-वायें और पीछे खलीफाके महलकी ओर चले। सव ओर मुहम्मद विन कासिमका नाम सुना जा रहा था। उसने हिंदुस्तान नही जीता था, मानो वगदादियोका दिल जीत लिया था।

विजयके दूतोका स्वागत स्वय अपनी उपस्थितिसे करनेके लिए खलीफा दरवारसे वाहर आया। वगदादके इतिहासमें यह पहला अवसर था, जव खलीफाने किसी आने वालेकी इज्जतमें दरवारसे वाहर क़दम रखा था। खलीफाको देखते ही लोगोने 'खलीफा वालिद ज़िंदावाद!' की आवाज़ें उठाईं कि खलीफाने हाथ उठाकर उन सवको चुप किया। फिर उसने तेज आवाज़में कहा, "नही, नही, कहो- भारत-विजेता मुहम्मद विन कासिम ज़िंदावाद!"

खलीफाकी आज्ञा पालन की गई।

दरवार आज नये ढग और नये करीनेसे सजा था। झाड़फानूस आज

असाधारण रूप बिखेर रहे थे। जनसाधारणके लिए गलियारे बनाये गये थे। हरमका दृश्य तिलस्मोंपर छुआ पड़ रहा था। उन्होंने सुना था कि हिंदुस्तानकी हसीनाओंकी भूमिसे मुहम्मद कासिमने दो ख़ूबसूरत और नौजवान तितलियाँ पकड़ कर भेजी हैं, जिनके सामने ख़लीफ़ाके सारे हरम-की सुंदरता पानी भरती है। उत्सुकता और भय दोनों उनकी आँखोंमें नाच रहे थे।

आनबान और शानके साथ ख़लीफ़ाके सामने हिंदुस्तानके तोहफ़े पेश किये जाने लगे। पन्ने और पुखराज, हीरे और जमुर्द। फल, जिन्हें सिंधसे बगदाद तक विशेष रूपसे सुरक्षित रखा गया था। फिर जमाल मियाँ आगे आये। उन्होंने सिर झुकाकर ज़मीनको चूमा।

"ऐ दोनों दुनियाके मालिक, संसारके एकमात्र ख़लीफ़ा, मैं तेरे हुज़ूरमें हिंदुस्तानकी जादुई ज़मीन का एक ऐसा अजीब खेल पेश करता हूँ, जिसे ग़रीबोंने खेला और बादशाहतके सपने देखे, अमीरोंने खेला और घर बैठे योद्धा बन गये, बादशाहोंने खेला, और संसारकी विजयकी कल्पनाएँ उनमें जाग उठीं।"

उसके हाथोंमें एक बड़ा थाल था, जिसपर ज़रीका एक बेशक़ीमती कामका छाजन था। उसने उसे उलट दिया। उसके नीचे एक चौकी थी, जिसपर ख़ालिस सोनेका पत्तर था और जगह-जगह छोटे-छोटे हीरे जड़े हुए थे। कारीगरीसे बिल्लौरमें रंग भरकर चौकीकी ज़मीन पर चौंसठ ख़ाने बनाये गये थे, जो बराबर-बराबर दो रंगों में थे। चौकीकी एक दराज थी, जिसे जमाल मियाँने जल्दी-जल्दी एक सोनेकी चाबीसे खोला और उसे बाहर खींच लिया। बड़ी बारीकी और कारीगरीसे तराशे हुए लाल और पन्नोंके वे बत्तीस मोहरे थे। बिसातपर सजते ही उनकी आभा दुगुने रूपसे चमकने लगी।

"ऐ सारे ज़मानेके ख़लीफ़ा, यह वह खेल है जिसे हिंदुस्तानवाले शतरंज कहते हैं और जो हिंदुस्तानके पहले मुसलमान विजेता मुहम्मद बिन कासिम

की आज्ञासे पहले पहल बगदादको भेट किया गया। इससे उस महान् सेनापतिकी कलापूर्ण दृष्टिका पता चलता है। इससे मालूम होता है कि वतनसे दूर रह कर, हज़ार मुसीबतें झेलते हुए भी, बग़दादका नाम रोशन करने वाला सतरह सालका वह बाँका शूरवीर किस तरह अपने स्वामीके मनोरजनके लिए चिन्तित रहता है। ऐ दुनियाके मालिक, उसे दुआ दे ताकि वह तेरी दुआओसे बल प्राप्त करके अपने उस महान् उद्देश्यमें सफल हो सके।"

जमाल मियाँके इस छोटेसे व्याख्यानसे और उसके भीतर वर्णित तथ्योंसे दरबारके ऊपर ऐसा असर पडा, जिसने कुछ देरके लिए सबका ध्यान उन दो जीवित प्रतिमाओकी तरफसे हटा दिया, जोअभी तक एक-एक नौजवान बगदादीके दिलपर छाई हुई थी।

"देखनेमे चीज़ लाजवाब है! हमे खुशी हुई। कैसे खेला जाता है यह खेल, जमाल मियाँ?" खलीफाने पूछा।

जमाल मियाँने गरदन लटका ली। "जानकी खैर चाहता हूँ, ऐ मालिक। काफिरोने किसी विदेशीके दिमाग़को इस काबिल नही समझा कि कोई इस खेलमे उनका मुकाबला कर सके। यही कारण है कि उन्होने कभी-किसी बाहरी आदमीको यह खेल सिखानेमे दिलचस्पी नही ली। गुलामने जो तारीफ इस खेलकी सुनी मालिकके सामने बयान कर दी।"

मोहरोको हाथमें लेकर देखनेके लिए मचलती हुई हथेलियोको भींचकर बगदादके खलीफाने कहा, "जमाल मियाँ, तुम्हारी अकलपर अफसोस है! तुम एक ऐसी चक्करदार चीजे ले आये हो, जो बेशकीमती तो है, लेकिन जिसे हिंदवाले जानते है, बग़दादवाले नही जानते। हमे ताज्जुब है कि तुमने यह नही सोचा कि इससे सारे बगदादकी बेइज्ज़ती होती है। देखनेवाले कहेंगे कि अरबकी राजधानीमे ऐसी भी चीज़ है, जो बेशकीमती होनेके कारण ही बगदादमे रखी है, लेकिन वे लोग उसकी रूहसे अनजान है। खैर मनाओ, जमाल मियाँ, अगर तुम उस जाँनिसार सिपाहसालारके दूत न होते, तो हम तुम्हारा सिर कलम करा देते।"

खलीफा इस ज़रा-सी बातका मनमाना अर्थ लेकर इसपर इतना नाराज हो जायेगा, इसका जमाल मियाँको गुमान भी नही था। इतनेसे समयमें ही सारे बगदादमे प्रसिद्ध हो गई उन सुंदरियोकी तरफसे खलीफाका ध्यान हट जाये, इसलिए उसने यह नई चीज़, जिसकी कीमतका अनुमान उसके नयेपनके साथ मिल कर कल्पनाको छितरा देता था, खलीफाके सामने पेश की थी। लेकिन भाडमें जाय दर्पणी और उसका हुस्न। अब खलीफाकी काटती हुई नज़रोसे पिंड छुडाना भारी हो रहा था। कुछ देर सकतेकी हालतमे खडे रह कर जमाल मियाँने निवेदन किया.

"गुलाम दो और बेशकीमती तोहफे मालिकके हुजूरमें पेश करना चाहता है और गुलामको इतमीनान है कि खुदावंदका प्यारा, बगदादका शिरमौर उनकी आत्माका रहस्य पहलेसे ही जानता है। फिर भी वे तोहफे बेमिसाल हैं और इस तोहफेसे किसी भी हालतमे कम नही है।"

भारी स्वरमे खलीफाने कहा, "इजाजत है।"

× × ×

जमाल मियाँ पीछे हटते हुए वहाँसे लोप हो गये। कुछ देर बाद फिर प्रकट हुए। इस बार वह बार-बार झुकते हुए, लोगोकी वाह-वाह और मरहबा-की ध्वनियोके उत्तरमे आदाबअर्ज करते हुए चले आ रहे थे। उनके पीछे झिलमिलाती मूल्यवान पोशाकोमे जालपा और दर्पणी थी। उनके सुंदर मुख लोगोके सामने प्रदर्शनके लिए खुले रखे गये थे। खलीफाकी पलकोका उठना-गिरना बंद हो गया।

दर्पणीका चेहरा शुभ्र था। किसी प्रकारके दु ख-सुखका भाव उसके मुखसे प्रकट नही हो रहा था। संभवत पीडाका अतिरेक उसके हृदयसे अनुभूतिका तत्त्व नष्ट कर चुका था। सारा दरबार उसे घूर रहा था। लेकिन उसकी दृष्टि मुखकी सीधमें खलीफापर जमी थी। लगता था कि खलीफाकी कमरमे कामदार म्यानमे लिपटी कटार ही मानो उसका एकमात्र लक्ष्य हो।

शतरजके बारेमें जमाल मियाँके सिरपर घहराते हुए खलीफाके

तीव्र उद्गारोको जालपा सुन चुकी थी । शायद उसने मन ही मन कुछ निर्णय भी कर लिया था । यही कारण था कि उसके होठोपर मुसकराहट अपनी हलकी लालिमाके साथ नाच रही थी । खलीफाके दरबारका ऐश्वर्य उस पर जादू-सा करता प्रतीत हो रहा था । अपनी गभीरताके कारण एक देवी-सी लग रही थी, तो दूसरी इद्रके दरबारमे अभी-अभी नृत्य करके आई अप्सरा-सी प्रतीत हो रही थी ।

नजरे सीधी रखकर खलीफाने कहा, "हम हैरान है, जमाल मियाँ, कि हम तुम्हारे हाथोको चूमें, बहादुर मुहम्मद बिन कासिमकी यादगारको चूमें या इन सुदरियोके हाथोको चूमे, क्योकि हमारे होठ अब किसी चीजको बडे जोरसे चूमनेके लिए मचल रहे है ।"

इसपर दरबारमें कहकहोका एक दौर चला । विलासी और नौजवान खलीफा दरबारमें सब तरहकी बाते करता था । जबतक उसे अपने बुजुर्गोका स्मरण रहता था वह अदब और शानमे सीरोसे कम व्यवस्था पसद नही करता था, और जब दरबारमे बैठे-बैठे ही रगीनी आ जाती थी, तो मयखाने-के बगदादी नागरिकमे और उसमे कोई अतर नही रह जाता था ।

कहकहोकी मद्धिम होती हुई ध्वनियोके बीचमे एक बारीक और सयत ध्वनि सुनाई दी "नही, ये तीनो चीजे बगदादके खलीफाके चूमनेके योग्य नही है । अगर चूमना आवश्यक ही है, तो उस कसौटीको चूमिए, जिसपर हिंदुस्तानवाले दूसरोकी अक्लको घिसकर परखते है ।" और उसने बिखरी हुई शतरजकी ओर खलीफाका ध्यान आकृष्ट किया । यह थी जालपा ।

सारा दरबार जालपाकी आवाज सुननेके लिए नि शब्द हो गया । सूई भी गिरती, तो उसकी आवाज सुनाई दे जाती । जालपाने चुपचाप अपनी ओर देखते हुए खलीफाकी नजरोसे नजरे मिला कर कहा, "इतनी मूल्यवान भेंट अनाथोकी तरह जो खलीफा ठुकरा देगा उसे जौहरी कौन कहेगा ? न कहिए फिर कि बगदादमे कोई ऐसी चीज है, जिसे हिंदुस्तान-

वाले जानते हैं, बगदादी नहीं जानते। आज हम बगदादमें हैं तो बगदाद हमारा है और हम बगदादके हैं। मैं बताऊँगी बगदादके खलीफाको इस खेलका रहस्य।"

जालपाकी भाषा समझ न पा सकनेके कारण उस वक्त खलीफा तड़प गया। उसकी बल खाती हुई आवाज़में निकला, "जमाल मियाँ, इस वक्त महान् खलीफाके कान क्या सुन रहे हैं ?"

जमाल मियाँने झुककर अपने ऊपर सौंपे हुए कर्त्तव्यको पूरा किया। अनुवाद समाप्त होते ही खलीफा उछल पड़ा। "खुदाकी कसम, बगदादके इतिहासका नया अध्याय आरंभ होने जा रहा है। स्वागत है, स्वागत है, लाख बार स्वागत है ! जमाल मियाँ, तुम जितना धन एक बारमें उठा सको शाही खजानेसे ले जा सकते हो।"

इस कृपाके लिए जमाल मियाँ झुके तो बस झुके ही रह गये।

× × ×

दोनो भारतीय राजकन्याओंको बग़दादके शाही हरममें दाखिल कर लिया गया।

दिनभर खलीफा जशन वग़ैरहमें बाहर रहा। दो चार बेगमें जालपा और दर्पणीको देखने तो आईं, लेकिन स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि उनके आगमनको कुछ विशेष महत्त्व नहीं दिया जा रहा था या इतना महत्त्व दिया जा रहा था कि उसके कारण ईर्ष्या और द्वेषका स्वाभाविक वातावरण उत्पन्न हो गया था। इस प्रकार थोड़ी ही देर बाद जालपा और दर्पणीको एकांत मिल गया।

अपनी बहनकी ओरसे दर्पणीके हृदयमें ज्वाला कौंध रही थी। एकांत पाते ही उसने व्यंग्य-बाण छोड़ा, "क्या पता था कि बगदाद इतना मनोरम है !"

जालपा हँस पड़ी। "यही क्या पता था कि हिंदुस्तानसे बाहर भी कोई जगह है, और वह बग़दाद हो सकती है !"

दर्पणीके जैसे काँटे चुभ गये। "इतने सस्ते मूल्यपर यवनकी बेगम बननेके लिए ही रावड़में पैदा हुई थी ?"

उनी मुसकराहटके साथ जालपा वोली, "जिम चीज़का कालान्तरमे विकना ही निश्चित है उसे अपने मूल्यका क्या पता हो मकता है ? फिर वह चाहे जहाँ पैदा हुई हो, इससे क्या आता जाता है ?"

"तुझे अपने मूल्यसे संतोष है ?" दर्पणीने होठ तिरछे करके पूछा।

"मुझे भी नही होगा !" जालपाने विस्मयसे कहा। "मैने तो अपनी क़ीमत जानबूझ कर बढाई है।"

दर्पणीके सब्रका बाँध टूट गया। वह झल्लाकर तीव्र स्वरसे बोली, "तो तू मुझसे किस जन्मका वदला चुका रही है ? मुझे मरने क्यो नही देती, जालपा ?"

"क्योकि तू विक गई है, दर्पणी। अव मुझे तेरा मोल भी तो लेना है न। अपनी रानी वहनके जीवनका इतना सस्ता मोल कैसे लगा दूँ ?" जालपाने कहा।

इतनेमे खलीफाके आनेकी घोषणा हुई। एक चोवदारके बाद दूसरे चोवदारकी स्वागतकी आवाज़ कितनी ही देरतक सुनाई देती रही। होठोपर उँगली रख कर जालपाने दर्पणीको किसी भी प्रकार वोलनेसे रोकनेका इशारा किया और वस्त्र सुव्यवस्थित करके वह खलीफाके स्वागतके लिए तैयार हो गई।

जमाल मियाँके साथ द्वारपर आकर खलीफा वेसब्रीसे भीतर घुस पड़ा। सामने ही चाँदके दो टुकडे देखकर वह झूम गया। उसने अदाजसे सिर जरा-सा झुकाकर कहा, "हुस्नकी देवियोको वगदादके खलीफाका पहला सलाम।"

"कवूल है," जालपाने तिरछी होकर उत्तरमे कहा। दर्पणीके मुख पर घृणाका हलका भाव सयमके वावजूद झाँक रहा था।

"गुलाम रसूल !" खलीफाने बाहर खडे गुलामको पुकारा।

वह आया। "हुक्म हो, मेरी जानके मालिक ?"

"शतरज लाओ," खलीफाने हुक्म दिया।

जब तक शतरंज आई खलीफा एक क्षणको भी चुप नहीं रहा। वह बातें करता रहा, हिंदुस्तानकी, उसके रीति-रिवाजोंकी, उसके निवासियोंकी और उनके रहनसहनकी।

बिसात बिछ गई। जालपाने अपनी लंबी-लंबी उँगलियोंसे उस पर शतरंजके मोहरे सजाये। फिर वह खलीफाको सुझाने लगी। जमाल मियाँ नियमानुसार अनुवाद करने लगे। "ऐ अरबके खुदा, देख यह बादशाह है। इसकी शान इतनी कि यह अपने घरसे किसी भी तरफ़ एक कदमके फ़ासलेसे ज्यादा नहीं चलता। यह वजीर है, जिसे सदा किसी-न-किसी कामसे बिसातपर चारों तरफ दौड़ना पड़ता है। यह ऊँट है, जो सदा दूरकी मार करता है, लेकिन तिरछे-तिरछे। यह घोड़ा है, जिसकी नजर कहीं होती है और कदम कहीं पड़ता है। यह हाथी है, जो बेतहाशा सीधी पट्टीपर भागता है।"

हाथीकी बात सुनकर खलीफ़ाको खूब हँसी आई। उसने मग्न होकर कहा, "आखिर हिंदुस्तान हिंदुस्तान है।"

जालपाने भी हँसीमें योग दिया। "और ये सोलह पैदल हैं। इनके लिए पीछे लौटना वर्जित है। इनका काम है आगे बढ़ना और मर जाना। और, ऐ खलीफा, शतरंजकी यही खूबी है कि इसके मोहरोंकी जो गति निश्चित कर दी गई है, कोई मोहरा उससे विचलित नहीं होता, चाहे मर जाये।"

बेअख्तियार खलीफाके मुँहसे निकला, "वाह रे हिंदुस्तान!"

"अब आइये, पहली बाजी बिना किसी शर्तके रहेगी। इसकी हार जीत नहीं मानी जायेगी। एक ही बाजीमें बगदादका बुद्धिमान खलीफा शतरंज की चालोंको समझ जायेगा।"

खलीफाने एक बाजी खेली। इस नये मनोरंजनकी इतनी मोहिनी उस पर छा गई कि वह बोलना भूल गया। जब बाजी खतम हो गई, तो जालपाकी आकर्षक ध्वनि बंद हो गई। खलीफा बिसातके ऊपर कुहनी रख कर जालपाके पास अपना मुँह ले जाकर सहसा बोल उठा, "ऐ

हिंदुस्तानकी अक्लमद हूर, वगदादका महान् खलीफा तुझे अपने हरमकी मलिकाका प्रतिष्ठित पद देना चाहता है।"

जालपा समझी नहीं। उसने दोजानू बैठे जमाल मियाँकी तरफ देखा।

खलीफा पीछे हट गया। उसके चौडे नासापुटोंसे एक नि श्वास निकला। उसे जमाल मियाँके अनुवाद समाप्त होने तक प्रतीक्षा करनी पडेगी।

लेकिन उत्तरमे जालपाने कहा, "और दर्पणी—मेरी वहन—उसका क्या होगा ?"

"हम उसे तुझसे भी ऊँचा मानेंगे," और खलीफाने अपनी कनिष्ठिका से दर्पणीका झुका हुआ मुंह ऊपर उठा दिया। उसकी ऊँगलीकी अगूठीमें पड़े चमकते हीरेकी आभा दर्पणीके सुन्दर मुखको देदीप्यमान कर गई।

× × ×

उनके वाद जालपा सहसा ही हतोत्साह-सी हो गई। आशकासे खलीफा और जमाल मियाँ दोनोने उसके मुखकी ओर देखा। फिर जालपाने जो वात कही उससे जमाल मियाँ अचकचा कर उसका मुँह देखने लगे। खलीफा जल्दीसे वोल उठा, "क्या है ? क्या सुना हमारे कानोने ?"

जमाल मियाँ खलीफाके चरणोंमें गिर पडे। "मेरी जानकी सलामती वख्शी जाये, मालिक।"

खलीफाने उसे झटक दिया। "हाँ, हाँ, वख्शी, जल्दी वोलो।"

जमाल मियाँने अनुवाद किया, "हिंदकी नाजनी कह रही है कि वे महान् खलीफाके हरमके काविल नहीं है, क्योकि आक्रमणकारी, क्रूर मुहम्मद विन कासिमने उन्हें तीन दिन अपने हरममे पत्नीकी तरह रखा है।"

खलीफा सुनते ही तडप गया। "वग़दादके महान् खलीफाके कान यह क्या कुफ्र सुन रहे है ! उस लौंडे सिपहसालारकी यह हिम्मत ! उसने तोहफ़ेको खुद जूठा करके हमारे हुजूरमे भेजा है। इसकी सजा मौत है ?" और आवेगमें वह चिल्लाया, "गुलाम रसूल !"

गुलाम रसूलने एकदम प्रवेश किया। "हुक्म हो, मेरी जानके मालिक ?

खलीफाने चुटीले स्वरमे आज्ञा दी, "इसी वक्त कारवाँ तैयार करनेका हुक्म दिया जाये। वजीरको फरमान लिखनेके लिए कहो। सिपहसालार

मुहम्मद बिन कासिम जिस सूरतमें हो, जहाँ हो, वहीं अपनेको बैलकी कच्ची खालमें सिलवा कर बगदादके लिए रवाना कर दे—बस।"

"जो हुक्म, मेरी जानके मालिक," गुलाम रसूलने कहा।

अपने भीतर भड़की हुई भीषण प्रतिहिंसासे उत्तेजित खलीफ़ाने जाते-जाते बारी-बारीसे जालपा और दर्पणी पर एक-एक निगाह डाली, जिसका अर्थ था कि अभी तक हिंदकी नाज़नीनोंने बगदादके खलीफाकी शान-शौकत देखी है, अब वे उसका प्रताप देखेंगी।

जमाल मियांका सिर खलीफाकी अंतिम स्वीकारोक्तिमें नत हो गया। क्या झूठ था और क्या सच था, यह वह खूब जानते थे। इन लड़कियों-को अपने घरमें रखनेकी अपनी पूर्व कल्पना पर वह मन ही मन सिहर उठे।

खलीफ़ाके जानेके बाद दर्पणी जालपाके चरणों पर गिर पड़ी। "मैं तेरी महानताके सम्मुख अपना सिर झुकाती हूँ, जालपा। मुझे क्षमा कर दे।"

जालपा उसका सिर अपनी छातीमें छिपा कर पहली बार रोई।

पूरे एक मास तक खलीफाने हरमका रुख नहीं किया। फिर एक दिन सारा हरम एकत्र किया गया और कोमलहृदया नजीबजी बेगमोंके सम्मुख बैलकी खालका एक थैला लाकर रखा गया। खलीफाने उसे खोलनेकी आज्ञा दी। खोलने पर उसमेंसे एक लाश निकली। वह सड़ी हुई घिनौनी लाश, जिसे देखकर अधिकांश बेगमें बेहोश हो गईं, भारत विजेता मुहम्मद-बिन कासिमकी थी, जो विजयपर विजय करता हुआ उदयपुर तक पहुँच गया था। इससे पहले कि वह उदयपुर पर अपनी छाया डालता, खलीफाके दूत उसकी मौतका परवाना लेकर पहुँच चुके थे।

कुछ देर तक जालपाने लाशको टकटकी लगाकर पहचाना। फिर खलीफाके हाथमें थमे हरे फूलपर एक दृष्टि डाली और सहसा बड़े ज़ोरसे खिलखिलाकर हँस पड़ी। खलीफाने अचकचाकर पूछा, "क्यों? क्या तुमने महान् खलीफासे धोखा करनेका नतीजा नहीं देखा, नाज़नीनो?"

"देखा, ऐ बुद्धिमान् खलीफा, खूब देखा। हमने देखा कि हिंदुस्तान-वाले शतरजके बारेमें विदेशियोंकी अयोग्यताको ठीक ही समझते थे।

वे जानते थे कि विदेशी शतरजके भौतिक रूपको भले ही समझ जाएँ, लेकिन शतरजके भीतर इस नश्वर जीवनका जो दर्शन है उसे वे नही समझ पाएँगे। शतरज कहती है कि ओ खिलाड़ी, सारी बिसात पर एक समूची नज़र डाल कर अपनी और विरोधीकी स्थितियोको भलीभाँति देख ले। अगर केवल एक मोहरेपर तेरी निगाह रहेगी, तो तू हार जायगा। ऐ महान् खलीफा, तू इस दूसरी बाजीमे हार गया। शतरजमे विरोधीके बादशाहको मारा नही जाता, केवल उसे मात दी जाती है। तेरे इस अभागे सेनापतिने इस नियमका उल्लघन करके हमारे पिताको शतरजकी बिसातसे उठाकर मार डाला, हमारी प्यारी माँको जल-मरने पर मजबूर किया। लेकिन हमने उसके प्रधान गढमे आकर भी अपना बदला ले लिया। ऐ खलीफा, झुँझला मत, यह तो शतरजकी एक चाल थी।"

जमाल मियाँ अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए काँपते रहे। सुनते ही खलीफा आगबबूला हो गया। वह चिल्ला कर बोला, "गुलाम रसूल!"

"हुक्म हो, मेरी जानके मालिक?" गुलाम रसूलने कहा।

"इन सापिनोको ज़िंदा ही दीवारमें चिनवा दिया जाये।"

"जो हुक्म, मेरी जानके मालिक," गुलामने सिर झुकाया।

उसी दिन खलीफाके महलके सदर दरवाजेके पास एक दीवार खड़ी की गई और एक दूसरेसे चिपटी हुई उन दोनो भारतीय कन्याओको सदाके लिए जीवित ही उसमे चिन दिया गया। सिरके ऊपर उठती हुई दीवारसे केवल जालपाके अतिम स्वर सुनाई दिये, "दर्पणी, तुझे अपने मूल्यसे सतोष है?' और दर्पणीकी हँसी सुनाई दी—प्रसन्नताकी हँसी, सतोषकी हँसी।

खलीफाके इस बीभत्स व्यवहारसे भारतमे आई हुई अरबकी फौजोके हौसले पस्त हो गये। व्यक्तिगत निरकुशता और नीच स्वार्थके प्रदर्शनके सामने उनकी सामाजिक और धार्मिक कर्त्तव्यकी चेतना लुप्त हो गई। फिर राजपूतोने उन्हे धकेलना आरभ किया, और थोडे ही कालमे भारतकी सीमासे बाहर कर दिया।

●

पीले हाथ

जसलमेर राजस्थानकी मरुभूमिका हृदय है। हृदयसे जिस प्रकार रक्तकी नाड़ियोंकी ओर लहू दौड़ता है उसी तरहसे जैसलमेर राज्यकी कथाएँ सारे राजस्थानको अनुप्राणित करती रहती हैं। उन्हीं कथाओंमें से यह एक राजस्थानी लड़कीके पीले हाथोंकी कथा है।

विक्रम सवत् १४६२ की बात है, मोहिलोंके प्रदेशमें औरीतके निकटसे एक बड़ा काफिला गुज़र रहा था। यह काफिला भाटियोंके सरदार सादूका था। सादू पूगलके शासकका उत्तराधिकारी था। चैनसे बैठना उसे आता नहीं था। वह कुछ दिनों घर बैठता था केवल घायल साथियोंके घाव सुखानेके लिए और बाकी बचे हुओंके बदन माँजनेके लिए। फिर सिंधुकी घाटीसे नागौरके पूरबतक एक बड़ा हमला होता था। खेत उसका इतना ही लंबा-चौड़ा था। निशाना कोई भी हो सकता था, इससे उसे कुछ भी लेना-देना नहीं था। इसी प्रकारके एक हमलेसे बहुतसे ऊँट और घोड़ोंको हथियाकर वह वापस लौट रहा था, औरीतके निकटसे। साथमें थे चार छोटे भाई, पाहू कबीलेका वीर सरदार जयतुंग, और सात सौ भाटी जवान।

सामने मरुभूमिकी बालू थी। सब पसीने-पसीने हो रहे थे और ऊपरसे सूरजकी किरणें उड़ती हुई बालूके साथ बदनमें चिनचिनाहट पैदा कर रही थीं। विश्रामके नाम पर रेतमें एक दूसरेसे दूर-दूर कहीं नीम, कहीं खेजड़ी, कहीं कीकर और कहीं काँटेदार खैरके वृक्ष दिखाई देते थे। औरीत अभी दो कोस था।

जयतुंग अपनी ऊँटनी हाँककर आगे सरदार सादूके पास ले आया।

"भला, कुँवरजी, अपना तो मन चाहता है यहीं सूर्य देवताकी किरणोंके नीचे पट लेटकर विश्राम किया जाय। ऊँट खैरके पत्ते खा लेंगे

और बलबला लेंगे और आप किसी नीमके नीचे बैठकर रामनाम लीजिए। अपनी चिन्ता हम आप कर लेंगे।"

"औरीत दो ही कोस तो रह गया है।" सरदारने कहा। "दीवडी[1] पानी से भरी जा सकती है वहाँ और सोगरा[2] सेकनेका भी बदोबस्त हो ही जायगा। थोडा और चलो, राजा। औरीत अब आया।"

औरीतके आनेसे पहले एक और छोटी-सी घटना घटी। एक कोस और आगे बढनेपर एक कीकरके नीचे ठडे सोगरापर लाल मिर्चकी चटनी फैलाता हुआ एक चरवाहा मिला। उसने जो ऊँटोकी बलबलाहट सुनी, तो आँखोपर हाथ रखकर एकदम खडा हो गया। फिर जब तक कारवाँ उसके पास ही न आ गया, सोगरा और लाल मिर्च उसके हाथ पर ही रखे रहे। सबसे आगे सरदार सादू था। कीकरकी हल्की छिटकती छायासे बाहर निकलकर चरवाहा आगे वाले ऊँटके पास आया और दाये हाथसे सूरजकी किरणोको बचाते हुए उसने मुँह ऊपर उठाकर पूछा.

"किधरसे आते हो?"

"इधरसे ही आते है,जिधरसे देख रहे हो",सादूने हँसकर उत्तर दिया।

बिना उत्तरपर भली प्रकार विचार किये ही प्रश्नकर्ताने दूसरा प्रश्न किया, "कहाँ जाओगे?"

"जहाँ ठौर मिलेगी अभी तो वही जाएँगे।" अपने लबे रेगिस्तानी जीवनमें सरदार सादूने ऐसे बहुत-से प्रश्नकर्त्ताओको उत्तर दे-देकर इस घिसीपिटी प्रश्नोत्तरीका व्यावहारिक ढग सीख लिया था।

"कौन लोग हो?" प्रश्नकर्त्ताने बिना सकोचके तीसरा प्रश्न पूछा।

जयतुग साथ लगा हुआ था। उसने दहाडकर कहा, "हट जा,राह छोड़ दे! हम लोग भाटी है। भूखसे प्राण निकल रहे है। ज्यादा चीचपर करेगा, तो कच्चा चबा जाएँगे।"

१ पानीका एक राजस्थानी पात्र।

२. मिरचीके साथ खाई जानेवाली मोटी रोटी।

उत्तर सुनकर चरवाहा कुछ क्षण ठिठका और आँखें फाड़कर सादू और जयतुगको देखता रहा। फिर अलग हटकर उसने जल्दी-जल्दी अपना सोगरा सिर पर ओढ़े दुपट्टेके छोरमें बाँधा और पलटकर सीधा एक चरती हुई ऊँटनीकी तरफ़ भागा चला गया। फिर ऊँटनीको पकड़कर वह जाने किस तरह उछलकर खड़ी ऊँटनीकी नगी पीठपर चढ गया और उसकी ऊँटनी औरीतकी तरफ तेजीसे दौड पडी।

सादू खिलखिलाकर हँस पडा। "डर गया है बेचारा भाटियोंका नाम सुन कर।"

जयतुगने भी इस हँसीमें योग दिया।

इसके बाद थके हुए ये राही एक कोस और चलनेके बाद हरियालीके समीप पहुँचे। सब लोग अपनी ऊँटनियों और घोडोंसे उतर पड़े। पास ही एक तालाब था। सरदार सादू जयतुगको साथ लिये तालाबकी ओर बढा।

तालाबके किनारे वही चरवाहा खडा मिला। उसने दूरसे ही हाथके इशारेसे अपने पास खडे हो मनुष्योंको इन्हें दिखाया। वे लोग इनके अपने पास पहुँचनेकी प्रतीक्षा न करके स्वयं इस तरफ बढे। सरदार सादूके पास आ जाने पर उन दोनोंने झुककर जुहार की। उन्हें इस तरह झुकते देखकर वह चरवाहा भी हड़बड़ाकर झुका।

"आप भाटियोंके सरदार कुँवर सादूसिंह हैं?" उनमेंसे एकने पूछा।

"हाँ, हैं," जयतुगने उत्तर दिया। "फिर?"

"हमारा अहोभाग्य, कुँवरजी," जयतुगकी तरफ़ झुकते हुए उस व्यक्तिने कहा। "मोहिलोंके सरदारने संदेश देकर भेजा है। कहलाया है कि औरीतके निकट आनेपर इस तरह बचकर न निकल सकोगे। हमारी आवभगत लेनी पड़ेगी। न ली तो हम भाटियोंको आगे नहीं बढने देंगे।"

"यह लीजिए, ज़बरदस्तीकी मेहमानदारी और ऊपरसे धौंस!"

जयतुगने कहा। "अरे, पहले हमे हाँ या ना तो करने दी ही होती। भाटिये मोहिलोकी अकड सहने वाले नही हे।"

सरदार सादूने कहा, "अच्छा, अच्छा, जाओ रावजीसे कहना कि सात सौ भूखे-प्यासे जवानोंके लिए भोजन और विश्राम, और दो हज़ार पशुओके लिए चारे-पानीका प्रवन्ध करे—और जव तक चाहें, तव तक करते रहे। यहाँ अव आगे वढनेका विचार नही है।" फिर जयतुग की ओर देखकर समर्थन पानेके लिए सरदारने पूछा, "क्यो, राजा साहव ?"

"आपके विचार वहुत सुन्दर हे, कुँवरजी," जयतुगने उत्तर दिया।

चरवाहा नृत्यकी मुद्रामें एक घुमाव लेकर वोला, "मैं मोहिलोंके सरदारकी ऊँटनियाँ चराता हूँ। मेरा नाम फूलसिह है। सरदारके मेहमान सो मेरे मेहमान। एक अरज मेरी है—मानो चाहे न मानो—एक भाटी मेरे यहाँ ठहरेगा।"

कुँवरजी राजस्थानमे किसी भी भले आदमीको कहा जा सकता है। राजा साहव एक ही होते हे। लेकिन यहाँ अधिकारभरी वाते तो कर रहे थे कुँवरजी, और समर्थन मिल रहा था राजा साहवकी तरफसे। सदेशवाहकोने अचकचाकर चरवाहे फूलसिहकी वातको पीछे डालकर पूछा, "कसूर माफ़ हो, सरकार। पर आपमें से सरदार सादूसिह कौन हे इसका पता नही चला।"

घर छोड़कर वाहर घूमनेवालोमे जो एक प्रकारकी विशेष आवारगी आ जाती है, सरदार सादूमे उसका अभाव नही था। इस आवारगीमे मसख़रीका अपना एक विशेप स्थान होता है। जव किसीको मसखरी सूझती है, तो वह वड़े-छोटेका लिहाज़ भूल जाता है। सरदार सादूने भौंह चढाकर मुसकराते हुए, जयतुगकी ओर उँगलीका निर्देश करके कहा, "और कौन हो सकता है ? डीलडौलमे भी क्या तुम लोगोको कुछ पता नहीं चलता ?"

जयतुग अपना उभरा हुआ डीलडील छिपानेकी इच्छा नही रखता था। सीना तानकर उसने कहा, "हाँ, हाथी हम हैं, ये तो बस शेर ही शेर है।"

फूलसिंह चरवाहेने झटसे शेरका पजा पकड लिया। "कुँवरजी, अब न छोडूँगा। दो हजार पश और छ सौ निन्नानवे भाटी जवान रहेंगे सरदारके मेहमान और इकले तुम रहियो हमारे मेहमान। ना कही, तो अपना सिर यही फोड कर परम धाम पहुँच जाऊँगा। कही बात पुरानी, अब न छोडूँगा।"

हाथ छुड़ानेकी चेष्टा न करके सरदार सादू मुसकराते ही रहे, लेकिन जयतुगने अपने डीलडीलपर किये गये व्यगका पूरा-पूरा वदला चुकाते हुए कहा, "हाँ हाँ, छोड़ना मत कुँवरजीको। हमारी तरफसे छूट है। वाह रे, मोहिलोकी मेहमानदारी! हम अपने चारणसे मोहिलोंके आतिथ्य सत्कारपर गीत लिखवाएँगे।"

जिस वातके कारण जातिका मान ऊँचा हो रहा हो उसे तो अब छोड़नेका कुछ प्रश्न ही नही रह गया था। चरवाहेने सरदारका हाथ और भी कसकर पकड़ लिया। सिर झुकाकर सदेगवाहक चलने लगे, तो सरदार सादूने जयतुगको लक्ष्य करके कहा, "अच्छा, राजा साहब! तुम्हारी यही इच्छा है, तो यही सही। हम फूलसिंहके मेहमान और फूलसिंह हमारा मेजवान। चलो जी, फूलसिंह, तनिक हम अपने साथियोको खवर देते चलें कि हम तुम्हारे यहाँ ठहर रहे है। फिर चलेंगे।"

कुँवरजीका हाथ पकड़े चरवाहा आगे-आगे और राजा साहव पीछे-पीछे अपने-अपने आरामके सामान जुटाते सारे भाटियोंमें घूम आये। कुँवरजी सवसे कहते चले कि वह शाति प्राप्त करनेके लिए फूलसिंह चरवाहेका आतिथ्य-स्वीकार कर रहे हैं। किसीके हाथसे पानीकी भरी दीवडी छूट पडी, तो कोई योही हक्का-वक्का वना खडा रह गया। लेकिन सरदारकी मुख-मुद्रा देखकर किसीने उसे सरदारके नामसे संवोधन नही किया।

इस छोटेसे परिवर्तनके साथ भाटिये मोहिलोंके मेहमान हो गये। सरदारकी खाली जगहको जयतुगने पूरा किया। मोहिलोका वृद्ध सरदार

इतने लवे-तड़गे, मोटे-ताजे जवानको भाटियोका सरदार न समझता, तो और क्या समझता ?

× × ×

चरवाहा वडा जीदार जीव था। एक भाटीको अपना अतिथि वना लेनेकी प्रसन्नतामें वह उसका हाथ पकडे-पकडे अपने घर तक तो चुपचाप ले आया। लेकिन गरम पानीसे कुँवरजीके हाथ-पैर धुलानेके वाद उसका मुखर स्वभाव अपना रग दिखाने लगा। चुप रहना उसके लिए भारी जोखिमका काम था। हृदय फट पड़नेकी सभावना वनी रहती थी। इसलिए वह कभी खतरा मोल नही लेता था। जव कोई पास होता, तो उसे फूलसिहके सासारिक ज्ञानकी वातें सुननेके अलावा और कोई चारा ही नही था।

"कहनेको तो ऊँटनियाँ चराता हूँ," मट्ठेका कटोरा कुँवरके सामने रखते हुए फूलसिहने कहा, "पर विना मुझे वताये सरदार भी कही आ-जा नहीं सकते। मैं चाहूँ, तो दो घडीके लिए सरदारका आना-जाना भी रोक दूँ।"

"अच्छा!" कुँवरको आश्चर्य हुआ। "इतना रोव मानते हैं सरदार तुम्हारा ?"

"मानना कौन चाहता है ? मनवाता हूँ," फूलसिहने कहा।

"कैसे मनवाते हो ?" कुँवरने पूछा।

"सरदारकी खास ऊँटनी मैं चराता हूँ। सरदार कही जाते है, तो पहले मुझसे पूछते हैं कि ऊँटनीकी तवियत तो ठीक है। मैं जव हाँ कर देता हूँ, तव सरदारको सवारी मिलती है," फूलसिहने कहा।

"ओह! तो यह है तुम्हारी शक्तिका रहस्य," कुँवरने हँसकर कहा।

फूलसिहने इस व्यग पर कोई ध्यान नही दिया। मोहिलोके राज-परिवारका आतिथ्य छोडकर जिस व्यक्तिने चरवाहेका सत्कार ग्रहण किया था, उसे यह जाननेकी नितान्त आवश्यकता थी कि ऐसा करके उसने कोई ग़लती तो नही की। इसके लिए फूलसिहकी शक्तिका पूरे प्रकाशमें आना आवश्यक था।

"राजपरिवारमें सबसे ज्यादा भरोसा मुझपर किया जाता है," फूलसिहने उसी धारामें दूसरा रहस्य प्रकट करते हुए कहा ।

"तुम्हारे बिना महल झाड़बुहारी बिना पड़ा रहता होगा," कुँवरने व्यंग किया और फूलसिहकी तरफ़ हँसकर देखा ।

लेकिन झाड़बुहारी देना फूलसिहके लिए कोई अपमानकी बात नही थी । इसलिए व्यंगका भाव ग्रहण न करते हुए वह बोला, "नही । कुँवरीकी इच्छा जब महलसे बाहरकी हवा खानेकी होती है, तो मैं साँडनी पर बैठा कर उन्हें घुमा कर लाता हूँ । यह तो तुम मानोगे, कुँवरजी, है भरोसेका काम ?"

कुँवरजी उठंग गये ।"तुम्हारा रुतबा बड़ा है !"

फूलसिहका अदम्य उत्साह बढ़ा । "रुतबेकी बात कहते हो, कुँवरजी । कस्तूरीके हिरनसे कम हैसियत मेरी नही होती, जब कोरमदेवी मेरे ऊँट पर होती है और नकेल पकड़े मैं सध्या समय दो कोस हरियाली पर दौड़ता हूँ । सचमुच देवी है । एक बार पत्थरको आँख भरकर देख ले, तो पत्थर पानी हो जाय । गुस्सा इतना कि खुद सरदार साहब घबराते है । पर आज तक मुझे अ ने व नही कहा ।"

"तो तुम्हारी कुँवरी बहुत सुन्दर है !" अतिथिने मेजबानके कथनका साराश बता कर उसकी बात ध्यानमे सुननेका प्रमाण दिया ।

"बस, कुँवरजी, सुन्दर कहकर तो तुमने सारी बात खो दी । पूनमका चाँद देखा है कभी ? तुम तो खैर रोज खुले आसमानके नीचे अपने सरदार के साथ रहते हो । समझ लो कि हमारी कुँवरीको नही देखा, तो तुमने पूनमका चाँद नही देखा !"

भाटी सरदारकी उत्सुकता जागी । "जब तक भाटी यहाँ रहेंगे तुम्हारी कुँवरी घूमने नही निकल सकती । फिर कैसे देखेंगे हम ?"

"सो तो है," फूलसिहने कहा । "और जबसे कुँवरीकी मगनी हुई है, तबसे तो वह कभी महलसे बाहर निकली ही नही ।"

"उठँगा हुआ भाटी सरदार फिरसे तकिये पर पसर गया, उठती हुई आग पर जैसे पानी पड़ गया हो । लेकिन तब तक फूलसिंह तरकीब सोच चुका था ।

वह उछलकर बोला, "तुम्हे पता नही, मोहिलोमे भाटियोकी बहादुरीका कितना मान है। भाटियोकी जीदारीकी कितनी ही कहानियाँ मैंने खुद कुँवरीको घुमाते-फिराते सुनाई है। कुँवरीने उनमे बडा रस लिया था। एक दिन कहती थी कि सादू सरदारके ताजे-से-ताजे पराक्रम मै बटोरकर लाऊँ, तो वह मुझे बहुत-सा इनाम देगी।"

"सच ? "कुँवरजी फिर उठँग गये।

"और क्या झूठ ? " फूलसिह अपने अतिथिको प्रसन्न देखकर हर्षित होकर बोला। "तुम तो सरदारके साथ सदा रहते ही हो। सादू सरदारकी कहानियाँ तुमसे अच्छी और कौन मुना सकता है ?"

निश्चय ही और कौन सुना सकता था ! कुँवरजी खिल पडे। किन्तु तुरंत ही फिर उनके मुखपर मुरदनी छा गई। "भला, यह तुम्हारी कुँवरी की मगनी हुई कहाँसे है ?"

"राजाओकी लडकी राजाओके घर। सरदारने अपनेसे भी बडा घर ढूँढा है। मदीरके राठौरोका नाम सुना है ? राठौरोके राजाका बेटा है। राजाके मरनेके बाद गद्दी उसे ही मिलेगी। हमारी कुँवरी राजरानी बनेगी। दस हज़ार राठौर जवान हर वक़्त हाथ बाँधे कुँवरीकी सेवामें खडे रहेगे," कल्पनामे मग्न होते हुए फूलसिह बोला।

"नही।"सादू सरदारने कहा। "ऐसी मूर्खताएँ राठौरोमे नही होती। राठौर सैनिकोको हाथ बाधे सेवामे खड़े रहनेके अतिरिक्त और भी बहुत-से ज़रूरी काम करनेको रहते है। वीरतामें भाटियो और राठौरोमे बराबरका जोड है। लेकिन राठौरोका दल बहुत बडा है ।"

किस प्रकार अनजानेमें ही भाटी सरदार राठौरोकी वीरताकी प्रशसा करता-कराता उनकी और भाटियोकी शक्तिकी तुलना करने लगा था यह देखकर फूलसिह बीच ही में बोल उठा।

"दल तो उनका इतना बडा है कि सारे मरु देशपर छा कर रह जाए।"

भाटी सरदारने कहा, "छोडो इस चर्चा को। तब फिर, कल कुँवरीको सादू सरदारकी वीरगाथा सुनानेकी बात तय रही।"

फूलसिहने समर्थनमें सिर हिलाया। फिर वह अपने मनचाहे मेहमान के लिए शीत-रावडीका प्रबध करनेके लिए उठ गया। यह भोजन ऐसा था, जिसका इतज़ाम दो दिन पूर्व करना होता है। दो दिन पहले इतना बड़ा सौभाग्य मिलनेकी खबर नही थी। इसलिए पडोसियोकी सहायताकी आवश्यकता फूलसिहको अनुभव हो रही थी।

× × ×

किसी बडे कामका फल मिल जाना उस कामका सीधा परिणाम होता है। मनुष्य कभी सोचता भी नही कि वह उस बडे कामके मार्गमें बढता हुआ किसीकी दृष्टि भी अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। फिर जब एक दिन यकायक वह उस प्रशसाकी दृष्टिको अनुभव करता है, तब उसी कामका मूल्य स्वय उसीकी दृष्टिमें कितना बढ जाता है, दभ और सतोपका कितना बड़ा खजाना उसे अनायास मिल जाता है, यह वही जान सकता है, जिसने भाटी सरदारकी तरह अपनी जानको रोज़-रोज़ हथेलियो पर रखकर अपने कारनामोका इतिहास बनाया हो। अब सरदार सादूके मस्तिष्कमें वे पिछली रोमाचपूर्ण घडिया रगबिरगी तूलिकासे चित्रित चित्रोकी तरह घूमने लगी।

उस सारे दिन सरदार सादू अपने जीवनकी बिखरी हुई घटनाओमेंसे सबसे अधिक पराक्रमसे पूर्ण घटनाओको छाँटनेमें व्यस्त रहा। कोई बहुत सुन्दर राजपूत कन्या इन घटनाओको सुनकर उनके नायकके प्रति दो प्रशसा के शब्द कह देगी, इस छोटी सी महत्त्वहीन सभावनासे प्रेरित होकर ही सरदार सादूका मन उछला जा रहा था।

अगले दिन भाटी सरदारने अपने सैनिकोके प्रयोगमें आनेवाला एक नया पगड बाँधा। लाल रेशमी अगरखा और चूडीदार पाजामा पहना। कमरपेटीमें लबी तलवार लटका कर वह फूलसिहसे बोला, "चलो।"

फूलसिह इससे पहले ही अपनी छोटीमोटी तैयारी कर चुका था। शान-से अकडता हुआ वह औरीतके बाजारोमेंसे होता हुआ मोहिलोके रनिवासकी

ओर चला। फूलसिंह के निकट आज फूलसिंहसे अधिक सौभाग्यवान कोई साँडनी चरानेवाला सारे राजस्थानमे नही था। उसके साथ राजस्थानके आतक, पूगलके निवासी, सरदार सादूका एक वीर सैनिक था।

ड्योढीपर खडे सेवकसे फूलसिंहने कहा, "कुँवरीजीसे कह दे जाकर। हम अपने भाटी मेहमानके साथ उनकी सेवामें आये है।"

मुसकराकर सेवक चलनेको हुआ, तो सामनेसे आते एक युवकको देखकर उसने कहा, "लो, कुँवर मेघराजजी आते है। अब उन्हीके साथ भीतर चले जाना।"

सरदार सादूने घूमकर देखा। जिस युवककी ओर सकेत किया गया था, उसका रग गेहुँआ था। वदन चुस्त और हल्का, और नाकनक्श साँचेमे ढले हुए थे। कमरपेटीमे छोटा नेजा था। पास आकर उसने पहले अतिथि को आँखोमे निकाला, फिर फूलसिंहकी ओर एक क्षण देखकर सरदारसे पूछा ·

"भाटी हो?"

"हाँ।"

मेघराज गले मिलनेके लिए आगे वढा। सादू सरदारने उसे गलेसे लगा लिया। लेकिन उसकी कमरमें भाटी सरदारके मजबूत हाथ एक वार लिपट जानेपर छूटनेका नाम ही नही ले रहे थे। मेघराजका उत्साह जव समाप्त हो गया, तो उससे कहा, "अव छोडो।"

"अभी नही", सरदारने कहा। "पहले वचन दो कि यह भाईचारा सदा वना रहेगा।"

मेघराजने जोर आजमानेकी कोशिश की, किंतु उसकी हड्डियाँ चरमरा गईं। हारकर उसने कहा, "अच्छा, वना रहेगा। अव छोडो। तुम ाटियो मे यह वहुत वुरी आदत है। एक वह तुम्हारे सरदार है। एक वार हाथ पकडकर छोड़ते ही नही।"

उसे छोड़कर सरदार सादूने अपना साफा उतार लिया। "पगड़ी बदल लो, क्या पता फिर भूल जाओ। तुम्हारे कहनेसे तो पता चलता है कि तुम लोगोंमें हाथ पकड़कर छोड़ देनेकी अच्छी आदत है।"

मेघराजने पगड़ी बदलते हुए कहा, "तुम तो बड़े मजेके आदमी मालूम होते हो। यह फूलसिंह तुम्हें इधर कैसे पकड़ लाया?"

फूलसिंहने कहा, "यह कुँवरीजीको सरदार सादूकी वीरगाथा सुनाएँगे। उन्होंने मुझसे कह रखा था।"

"सरदार सादूकी वीरगाथा! मैं भी सुनूँगा। वह तो मरुदेशका नाहर है," मेघराज प्रसन्न होता हुआ बोला। "चलो, मैं भी चलता हूँ।"

तीनों व्यक्ति मोहिलोंकी सबसे ऊँची और विस्तृत हवेली—जिसे महल कठिनाईसे ही कहा जा सकता था—की भूलभुलैयामें से होते हुए कोरमदेवीके निजी वास तक पहुँचे।

मेघराजने स्वयं बहनको सूचना दी। अपने प्रिय नायकका शौर्य-वृत्तान्त सुननेके लिए कोरमदेवी अधीर हो गई। तुरंत कक्षमें चिकका प्रबंध कराकर उसके पीछेसे कोरमदेवीने आगंतुकोंको देखा। चरवाहेने परिचयात्मक स्वरमें कहा।

"कुँवरीजी, साक्षात् कथावाचकको पकड़ लाया हूँ। जो कुछ आपको ये सुना देंगे और कहीं सुननेको नहीं मिलेगा। खास सादू सरदारके दाहिने हाथ हैं। न हो पूछ देखिए "

"क्या नाम है इनका?" कोरमदेवीका सरल व कोमल स्वर चिकके पीछेसे सुनाई पड़ा।

फूलसिंह वहीं कालीनपर बैठ गया। कुँवरजीने उत्तरमें कहा, "मेरा नाम जयतुंग है। भाटी, जातिका छोटा-सा नायक हूँ। बहुत दिनोंसे आपके दर्शनोंकी इच्छा थी। आज अवसर मिला, तो छोड़ नहीं सका।"

"मैं भाटियोंकी वीरताका सम्मान करती हूँ," कोरमदेवीने कहा। "उनकी वीरगाथाओंको मैं बड़े चावसे सुनती हूँ। पर खेद है तुम्हारे सामने

नहीं आ सकूँगी। इससे तुम्हें अपना अपमान नहीं समझना चाहिए। तुम्हारी कथाको सुननेके लिए मेरे साथ इस समय सारे राजमहलका नारी-समाज एकत्र है।"

भाटी सरदार मेघराजके पास एक ऊँचे आसनपर बैठ गया। फिर वह बोला, "भाटी सरदारको आपने देख लिया है, देवी ?"

"हाँ, वह महलमें भोजन कर गये है। जैसा उनका डीलडौल है, उसीसे ऐसी घटनाएँ घटनी सभव हो सकती है। तुम अब सुनाओ, देरी न करो।"

"भाटी सरदारका सारा जीवन आवारगीमें बीता है, देवी। उनके साथ जो रोमाचपूर्ण घटनाएँ घटी है उनमें बहुत-सी सुखान्त है, तो बहुत-सी दु खान्त भी है। आप कैसी घटना सुनना चाहती हैं ?" भाटी सरदारने प्रश्न किया।

इसपर एक निमिपके लिए सन्नाटा छा गया। मेघराज और फूलसिह दोनोने उत्सुकतासे सचेत होकर उस आवरणकी तरफ देखा, जिसमें से फर्माइश निकलनेवाली थी। कुछ देरमें कोरमदेवीका स्वर फिर सुनाई पड़ा।

"जब भाटी सरदार स्वय जीवित है, तो कोई भी घटना इतनी अधिक दु खान्त नही हो सकती कि सुनी न जाए। तुम कोई भी घटना सुना सकते हो।"

भाटी सरदारने एक क्षण सोचा। फिर वह बोला, "देवी, उन घटनाओ का अत इसीलिए दु खपूर्ण है कि भाटी सरदार स्वय जीवित रह गये। यदि साथ-साथ उनका भी अत हो जाता, तो वह दु खपूर्ण अत गौरव और गरिमासे ढँक जाता। मुझे भय है कि आपके साथ बैठा नारी-समाज उस दु खसे पीड़ित होगा।"

कुछ देर चुप्पी छाई रही। फिर आदेश हुआ, "उस दु खको झेलनेके लिए हम सब तत्पर हैं। तुम कहो।"

भाटी सरदारने कहा, "देवी, मैं आपका मनोरंजन करने आया हूँ। भगवान् जानता है कि मेरी भावना शुद्ध है। यदि मेरे मुँहसे निकले शब्दोंसे आपको कुछ पीड़ा पहुँचे, तो मैं उसकी आपसे क्षमा चाहता हूँ। इस संसारमें दुःख और सुख दोनों हैं। जो दुःख झेलना तो दूर रहा, दुःख की बात सुनना भी नहीं चाहता, वह इस विविध रंग-रूपी संसारके आधे दर्शनसे वंचित रहता है। आपने इससे भय नहीं खाया इसके लिए आप मेरा आदर ग्रहण कीजिए। सबसे पहली बात जो मैं कहना चाहता हूँ वह यह है कि शायद मोहिलोंको पता नहीं, भाटी सरदारके साथ आये चार भाइयोंकी वधुएँ अपनी-अपनी सुहागरात देखनेसे पहले ही एक-एक करके स्वयं सरदारके हाथोंमें परलोकगामी हुई हैं।" कहकर सरदार रुक गया। यह रुकना उस अँधेरी चिकके पीछे बैठे नारी-समाजकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए था या स्वयंकी सजीनेके लिए, जानना कठिन ही होगा।

कोरमदेवीकी माँ पास ही बैठी थीं। उनकी आँखोंमें इतनेसे ही जल भर आया। पंक्तिबद्ध दासियाँ जैसे सन्न हो गईं। सूई भी गिरती, तो आवाज़ सुनाई दे जाती। और कोरमदेवी सोच रही थी कि यह कैसा कथा सुनाने वाला है, जो भूमिका-भूमिकामें ही स्तब्ध किये दे रहा है! उसने फिर कहा, "कहो।"

फूलसिंह मुँह ऊपर उठाकर सरदार साढूको देख रहा था, जैसे उसके मुँहसे निकले एक-एक अक्षरको पी जाना चाहता हो। साढूने सामने उपस्थित केवल दो श्रोताओंपर एक निगाह डाली और कहना आरंभ किया

'तुन्नो और मेहरा सरदार साढूसे छोटे हैं। यह घटना तुन्नोको लेकर है। राठौरोंके मंदोरके निकट, यहाँसे बहुत दूर, रेगिस्तानके पार शखलाओं-का देश है। प्राणोंको तिनकेकी भाँति परित्याग कर देनेवाले न शखलाओं ने अपनी वीरताका एक तिहास बनाया है। यह इतिहास उन्होंने अपने रक्तसे धरतीकी छाती पर लिखा है। महाराज शखला इनके राजा और कुलगुरु हैं।

"सिवुकी घाटीके निकट एक छोटेसे प्रदेशपर आक्रमण करते हुए, सरदार के कधेसे कधा भिडाकर तुन्नो लड रहा था। वहुत देरकी मेहनतके वाद जव तुन्नोने अपने मुकावलेमे लडते हुए योद्धाको भूमि पर गिरा लिया, तो उससे पूछने लगा 'मारूँ या छोड दूँ ?'

"उस वीरने कहा, 'मार दोगे, तो मुझे स्वर्ग मिलेगा। छोड दोगे, तो तुम्हें स्वर्ग दिला दूँगा—यही पर, इसी धरतीपर। शखलाओकी कुमारी का नाम सुना है कभी ? उसके साथ तुम्हारा गठवधन करा दूँगा। वचन देता हूँ।'

"तुन्नोने शखलाओकी कुमारीका नाम उससे पहले कभी नही सुना था। फिर भी न जाने क्यो उस दिन तुन्नोने उसे छोड दिया। लडाई भी जीत ली गई। विजयका पुरस्कार समेट कर नाचते-कूदते भाटी अपने देश लौटने के लिए रेगिस्तान पर उतर पडे। सव लोग खुश थे। सव के मन-मयूर नाच रहे थे। अनुमान था कि पदरह दिनके भीतर रेगिस्तान पार कर लिया जायेगा, और फिर सरदार सादूको पहली वार पूरा रेगिस्तान पार करने वालेकी ख्याति मिलेगी।

"तीन दिनकी निर्विघ्न यात्राके वाद दूर आकाश पर कुछ मटमैला रग दिखाई देने लगा। सरदारने चेतावनी दे दी तूफानका अदेशा है। मरु भूमिका तूफान ववाल वनकर आता है। यदि तूफान आया, तो हमारे छोटेसे काफिलेका क्या होगा ? कुछ पता नही था। शायद रेतके इस समुद्रमे इन रेंगते हुए छोटे-छोटे कीडोका कुछ नामनिशान भी वाक़ी न रह जाय।

"लेकिन इससे पहले तो अभी वहुत कुछ हो चुकना था। दक्षिण दिशा से एक साँडनी-सवार तेज़ीसे अपनी साँडनी दौडाता हुआ आया। उसके पास आने पर पता चला कि यह वही वीर था, जिसे तुन्नोने छोड दिया था। उसने सरदारको जुहार दी और कहने लगा कि शखलाओकी कुमारी तुन्नोकी प्रतीक्षा कर रही है।

"सरदारने पूछा, 'गखला महाराजकी लड़कीसे तुम्हारा क्या संबंध है ? तुम वहाँ तक कैसे पहुँचते हो ? उसने आज तक तुन्नोको कभी देखा भी नहीं है। वह उसकी प्रतीक्षा किस तरह कर सकती है ?'

"उत्तरमें उस वीरने कहा, 'उसका मुझसे बहनापा है। विपदामें एक समय उसने मुझे राखी पहनाई थी। मैंने आज ही उसके सामने तुन्नोकी वीरताका बखान किया था। सुनकर वह मुग्ध हो गई है। गखला महाराजने उसका संबंध सदौर राज्यके बड़े ठिकानेदारोंमें कर रखा है। पर वह लड़की राठौरोंमें नहीं जाना चाहती।'

सरदारने पूछा, 'क्यों, राठौरोंमें क्या बुराई है ?'

"इस पर मैंने कहा कि जब लड़की मिलनेकी बात चल रही हो, तो जिरह नहीं की जाती। हमारे लिए इतना ही जान लेना काफ़ी है कि गखलाओंकी लड़की राठौरोंमें नहीं जाना चाहती। किसी विशेष जातिसे इतना भेद रखना हम लोगोंमें नया नहीं है।

"मेहरा महाराजने सम्मति दी कि इस आमंत्रणके पीछे छल भी हो सकता है। इस पर उस संदेशवाहक वीर पुरुषका मुँह तमतमा गया। फिर भी वह चुप रहा। लेकिन सरदारकी आपत्ति सबसे ज्यादा ज़बरदस्त थी। ऊपरसे तूफ़ानके आसार नज़र आ रहे थे।

"अन्तमें यह ठहरा कि तुन्नोके साथ सरदार सादू स्वयं, मैं और दस भाटिए जाएँगे। तुन्नोजी गखला महाराजसे बातचीत करके मामलेको आहिस्तासे निवटानेकी चेष्टा करेंगे। नहीं तो मैं और सरदार कन्याको हरण करके भाग खड़े होंगे और तुन्नोजी और साथियोंके साथ बादमें कौशलसे निकल आएँगे।

"गखला महाराज भाटियोंसे लड़ाई मोल नहीं लेना चाहते थे। इसलिए बिना गरम हुए ही उन्होंने प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। खबर हम तक पहुँच गई और हम उस हारे हुए वीरकी सहायतासे गखला महाराजकी हवेलीसे लड़कीको निकाल लाये। रास्तेमें ही तुन्नोजी मिल गये, जो गखला

महाराजसे समय पर विदा ले चुके थे, और हम सब तेज़ीसे चल कर काफिले-में जा मिले। हमे सकुशल पहुँचा कर उस वीर साथीने हमसे विदा ली और वह वापस लौट पडा।

"अभी थोड़ी ही दूर पहुँचे होगे कि हमे पीछेसे रेतके गुब्बार उठते दिखायी दिये। स्पष्ट था कि शखला महाराज अपने साथियोको लेकर आक्रमण करनेके लिए आ रहे थे। सरदार सादूने दो सौ साथियोके साथ मुझे पीछे छोडा और स्वय तुन्नोजीके साथ आगे बढ गये। तय रहा कि सुरक्षित स्थान पर लडकीको छिपा देने पर वह समस्त साथियो सहित मेरी सहायताके लिए वापस लौटेगे।

"दो सौ साथियोके साथ मैं जहाँ-का-तहाँ रुक गया। थोडी ही देर में शखला महाराजकी छोटी-सी सेना दिखाई देने लगी। उन्होने भी हमें देख लिया और अपने घोडे तेज़ कर दिये। किंतु वे हम तक कभी नही पहुँच पाये।

"हवा मस्ताकर चलनी शुरु हुई और बालूके कण वायुमडलमे व्याप्त होन लगे। धीरे-धीरे आसमान धुंधला होने लगा और दोनो ओरके दल एक दूसरेको दिखाई देने असभव हो गये। मैं अपने साथियो सहित शखला महाराजका स्वागत करनेके लिए आगे बढा। एक बार वह और हम निकट आ भी गये और उन्होने मुझे देख भी लिया, लेकिन उसके बाद फिर कभी मेरी भेट शखला महाराजसे नही हुई।

"तूफ़ान ज़ोर पकड रहा था और गरम बालू साँय-साँय बोलने लगी थी। हमने इस प्रकारके तूफान रेगिस्तानी जीवनमे अनेको बार देखे थे। हमने ऊँटोपर से तहे हुए रस्से खोल दिये और थोडी ही देरमे दो सौ भाटी एक दूसरेके साथ रस्सोंसे बँध गये। अब यदि मृत्यु आती, तो एक साथ और जीवन मिलता, तो एक साथ।

"दुपट्टे खोलकर हमने आँखो पर पट्टी बाँधी और मुँहपर इकहरा कपडा लगाकर हम ऊँटोको हाँक ले चले। एक स्थानपर ठहरनेमें खतरा था।

ठहरनेपर हम लोगोके शरीरो पर बालूके टीले बन जाते और वही पर हम सबकी कब्र बन जाती । अन्दाज़से हम ठीक दिशामे चल रहे थे । किंतु फिर भी कहा नही जा सकता था कि हम सही-सही किस ओर बढे जा रहे थे ।

"मालूम नही तूफान कितनी देर चला । लेकिन जब रात आई तो वह थम चुका था और तारे आकाशपर निकल आये थे । हम लोगोने कपडे झाडे और बदन पोछे । दिशाका अनुमान किया । एक बार तो पता ही नही चला । लेकिन धीरे-धीरे तारोकी अवस्था समझमें आ गई और हमने ठीक दिशा पकडी । हम उस सही दिशासे बीस कोस इधर-उधर हो गये थे ।

"इस बीचमे सरदार पर जो बीती उसका तो बखान ही कठिन है । थोडा आगे बढते ही उन्हें भी तूफानने घेर लिया । हमारी तरह उन्होने भी रस्सोके सहारे काफिलेको बिछुडने नही दिया । लेकिन जिस प्रदेशमे वह थे वहाँ ज़मीनमें रेतके बडे-बडे गड्ढे थे । कभी कोई उन गड्ढोमे धँस जाता कभी कोई । इस प्रकार सबको निकालते-छुडाते सरदार कुछ ही दूर आगे बढ पाये थे कि गखलाओकी वह कन्या रेतकी मारको सहन नही कर सकी । वह शीघ्र ही अचेतन हो गई और उसके नाक और मुँहसे खून निकलने लगा । सरदारने पानी मँगाया, लेकिन अफसोस ! बालूकी खुश्की से घबरा-घबराकर सब लोग अपनी-अपनी दीवडी खाली कर चुके थे । स्वय सरदारकी दीवडी तूफानके हगामेमें खोई जा चुकी थी ।

"सरदारने कसकर लडकीके मुँहमें कपडा ठूँस दिया । इससे सभव था कि खूनका आना बद हो जाता या जहाँ का तहाँ रुक जाता । लेकिन खून नाकसे और अधिक मात्रामें बहने लगा और नाक बद करना असभव था । दिखाई कुछ दे नही रहा था । हमारे कई साथी रेतके नीचे दब चुके थे और उन्हें निकालनेके लिए खीचतान चल रही थी । सरदार, तुन्नोजी, मेहराजी और बाकी दोनो भाई एक दूसरेसे बहुत अलग थे, दूर थे ।

"कुछ देर बाद लडकीने सरदारकी कलाई कसकर पकड ली । उसकी पकडसे अनुभव होता था कि यह उसकी अतिम शक्ति थी । और अतमें

वह शक्तिशाली पकड ढीली पड गई। लडकीका हाथ चेतनाहीन होकर नीचे लटकने लगा। वह मृत्युके असीम विश्रामकी शरणमे जा चुकी थी, जहाँ तूफान नही था, शाति थी। उस सुन्दर कन्याने जीवनकी मधुरताका, यौवनकी मादकताका, मनकी चचलताका एक भी क्षण अनुभव किये विना मरुस्थलीके वालूको अपने प्राण भेट कर दिये थे। उसे कुँआरी कहूँ, व्याही कहूँ या केवल वधू ही कहकर चुप हो जाऊँ, कुछ समझमे नही आता। केवल उसकी उस अतिम पकडका अनुभव आज भी कलाई पर रह-रहकर डक मारता है।

"सही है कि सरदार सादूने सवसे पहले रेगिस्तानको पार करनेवाले की प्रसिद्धिका फल चखा है। किंतु उसके मनमे उस यात्राकी जो स्मृतियाँ एकत्र हैं वे उसे जीवन और मृत्युका अतर समझनेमे वाधा दे रही हैं। सरदार आज जीवित ही मृत है। वह लडते हैं, तो जीवनका मोह छोडकर और जीते है, तो सौ-सौ वार मर कर। न जाने कव उन्हे शाति और सतोषका स्वाद चखनेको मिलेगा।"

× × ×

कथावाचककी कथा समाप्त हो गई, फिर भी शाति और चुप्पीका एक अद्भुत वातावरण छा गया। कुछ देर तक वायु भी जैसे सुप्त हो गई। कही से किसी प्रकारकी ध्वनि, किसी प्रकारकी टिप्पणी, किसी प्रकारका स्वर सुनाई नही दे रहा था।

फिर मेघराजका नीचे झुका हुआ मस्तक ऊपर उठा। "कुँवरजी, कुछ और सुनाइए। आपने तो मन कडवा कर दिया।"

सरदार सादू एक फीकी हँसी हँस कर वोला, "नही, कुँवर साहव, अव तो कुछ कहा नही जायगा। जितना कहा है उससे कही ज्यादा आँखोके आगे नाच गया है। जव आपका सुनने मात्रसे ही मन कडवा हो गया, तो मुझ पर तो न जाने क्या वीत रहा होगा। अभी तो सरदार ठहरेंगे, कल फिर सुनाऊँगा।"

फिर सरदार सादूने चिकसी ओर किसी प्रकारका निर्देश सुननेकी भावनासे देखा। कोरमदेवीने कहा, "आपकी बात सुनकर तो यही नही लगता कि आप पाहू जातिके नायक है।"

सरदारने घबराकर आँखे चौड़ी की कि कोरमदेवीने आगे कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि राजपूतानेका कोई कथावाचक अपना कौशल दिखा रहा है। क्या सचमुच ऐसा हुआ था?"

सरदार सादू अपने आसनसे उठकर कक्षके बीचमें आ खड़ा हुआ। उसने अपने अँगरखेके भीतरसे कुछ पीली चूड़ियाँ निकालकर कहा, "देवी, मनुष्यकी भावनाओके सघर्षमे मानव जीवनमें जो करुणा उत्पन्न होती है, उससे उसका आगे बढ़नेका उत्साह गिर जाता है। फिर भी करुणा तो मानव जीवनमे है और उसकी कतई उपेक्षा भी नही की जा सकती। उसके दर्शन और अनुभव न करनेवाला मनुष्य प्रसन्नता और उत्साहकी भावनाओको भी पूर्णरूपसे अनुभव नही कर पाता। करुणाको देखो, सुनो, देवी, फिर उसे झूठ समझ लो, तो भी मनुष्यका मन बहल जाता है। इसे झूठ समझकर यदि आप सब लोग स्वस्थ हो सकें, तो इसे झूठ ही समझें।" तब और आगे बढ़कर उसने अपने शब्दोकी रवानीमें ही बहते हुए कहा, "क्या इस झूठी कथाके नायककी ओरसे मैं देवीके हाथोमें यह छोटा-सा उपहार पहना सकता हूँ?"

कोरमदेवीने चिकके पीछेसे ही चूड़ियोको अपनी ओर बढ़ते हुए देख लिया। प्रयोग-ग्रस्त व्यक्तिकी तरह उसके हाथ चिकसे बाहर निकल आये और सरदार सादू उनमे चूड़ियाँ पहनानेके लिए आगे बढ़ा। किंतु हाथोको देखकर वह जहाँ-का-तहाँ स्तब्ध खड़ा रह गया।

लाल मेंहदीसे रंजित करतलोको थामे जैसे दो कमल-डंडियाँ पानीकी तरह लहराती हुई नीले रंगकी चिकसे बाहर निकल आई हो।

कुछ क्षणो उन हाथोको देखकर सरदार चौंका और उसने उन चूड़ियो को उन हाथोमें पहना दिया, जिनका आकार उसके मन पर सदा-सदाके

लिए अंकित होकर रह गया था। कोरमदेवीके हाथ भीतर खीच लेने पर ही उसका स्वप्न भग हुआ।

जब खडे रहना असभव ही हो गया, तो सरदारने पूछा, "अनुमति हो, तो अब जाऊँ, देवी ?"

भीतरसे फिर वे ही हाथ बाहर निकले। इस बार वे खाली नही थे। एकमे एक नक्काशीदार ढाल थी और दूसरेमें एक कामदार म्यान सहित तलवार थी। कोरमदेवीने कहा, "पुरस्कारमे हम तुम्हे इससे अच्छा और क्या उपहार दे सकते है ?"

सरदार सादूने वह ले लिया। उसने तलवारको होठोसे लगाकर चूमा। फिर उन सुन्दर हाथोको अपने सामनेसे लुप्त होते देखकर वह लौट पडा। एक लबी साँस खीचकर वह मेघराजसे बोला, "चलिए, कुँवर जी।"

दोनों कुँवर कक्षसे बाहर निकल गये, किंतु फूलसिंह वही बैठा रह गया। उसका पुरस्कार शेष था और बिना उसे लिये उसका वहाँसे टलना असभव था।

विस्तृत दहलीजके चौकमे आकर कुँवर मेघराजकी चुप्पी टूटी। "कुँवरजी, वह तलवार तो दिखाओ, जो तुम्हें मिली है।"

आश्चर्य प्रकट करते हुए सरदार सादूने म्यान सहित तलवार निकालते हुए पूछा, "क्यो ? क्या यह अच्छा पुरस्कार नही है ?" और उसने म्यान उसके हाथोमे दे दी।

मेघराजने तलवार म्यानसे खीचकर एकदम सरदार सादूकी छातीसे लगा दी। फिर सामने होते हुए उसने उसकी आँखोमें आँखें डालकर कहा, "तुम जयतुग नही हो, कुँवर। बताओ तुम कौन हो ?"

सादूके शरीरमे सनसनी दौड गई। कठिनाईसे स्थिर-चित्त होकर उसने कहा, "कौन हूँ ? तुम्हारा क्या अनुमान है ?"

"तुम स्वय सरदार सादू हो," मेघराजने कहा। "मुझे तुम्हारा एक-

एक शब्द याद है। 'उस अंतिम पकड़का अनुभव आज भी कलाईपर रह-रहकर डंक मारता है।' इसका क्या मतलब है? क्या उस मरनेवाली लड़कीने सब भाटियोंको अपनी मृत्युके समय वह अनुभव कराया था?"

"यदि मैं स्वयं सरदार सादू हूँ, तो तुम क्या करोगे?" सरदारने पूछा।

"मैं तुम्हारे अपराधका दंड दूँगा। तुमने छद्म वेषमें मोहिलोंकी हवेलीके भीतरी भागको देखा है। इसमें तुम्हारा क्या अर्थ है?"

"ठीक है," सरदारने कहा। "क्या दंड दोगे?"

"तुम्हें मेरे साथ द्वंद्व युद्ध करना पड़ेगा," मेघराजने तीव्र स्वरमें कहा।

"फिर तो न्यायाधीशका पद तुम्हारे लिए बहुत महँगा पड़ेगा।"

"अपराधीको दंड मिल जानेपर वह महँगा नहीं रहेगा," कुँवर मेघराजकी आँखोंमें एक क्षणके लिए चमक कौंध गई।

"किंतु अपराधीको दंड कभी नहीं मिल सकेगा," सरदार सादूने कहा। "बचपनसे लेकर मैंने आज तक केवल तलवार चलाना ही सीखा है। इस लगातार अभ्याससे जो कौशल मेरे हाथमें आ गया है उससे तुम जीत नहीं सकोगे। अपमान अनुभव न करना। अभ्यासके सामने बड़े-बड़े गिर जाते हैं।"

"मुझे चिंता नहीं," कुँवर मेघराजने कहा। "अन्यायको हरा देना या स्वयं उसके सामनेसे लोप हो जाना दोनों एक ही बात है। एक राजपूत अन्यायके सामनेसे केवल मरकर ही लोप हो सकता है। तुम अपनी तलवार निकाल लो। निर्णय अभी हो जायेगा।"

सरदार सादू मुँह ऊपरकर ठट्ठा मारकर हँस पड़ा। चिढ़कर कुँवर मेघराजने उसकी छातीमें तलवार चुभाई। सादूने शांत होकर कहा, "भला, कुँवर साहब, यह तो सच ही तुम लोगोंमें हाथ पकड़कर छोड़ देनेकी बड़ी बढ़िया आदत है! अभी तो तुम्हारी पगड़ीने मेरे सिरका पसीना भी नहीं सोखा है। पगड़ीको ऐसे उछालोगे, तो सिरकी पगड़ी और पैरके जूतेमें क्या अंतर रह जायगा?"

क्षणमात्रमें कुँवर मेघराजका पारा पिघल गया। सादूकी छातीसे तलवार हटाकर उसने उसे म्यानमें छिपाते हुए कहा, "सादू सरदार, तुमने मेरे मर्मपर वार किया है। वहुत वुरा किया है तुमने !" उसने अपना मुँह नीचे झुका लिया।

सादूने उसकी ठोडीको अपने हाथसे ऊपर उठाया, तो देखा उसमे आँसू छलछला आये थे। दड देनेका अभिमान, वदलेकी भावना, निकालनेकी कोई राह न पा सकनेके कारण जल वनकर आँखोकी परतोपर तैर आये थे।

सरदार सादूने उसे छातीसे चिपका लिया। इस वार मेघराजने छूटने की चेष्टा नही की। सरदारने कहा, "इसमें किसी प्रकारका छल नही था, भैया। हँसी-हँसीमें ही फूलसिंहको हाथ थमा दिया और मैं सादूसे जयतुग वन गया। लेकिन अव लगता है कि भेद खुल गया, तो सभी मोहिलोके मनको इससे चोट पहुँचेगी। सभव है भाटियो और मोहिलोमें इस जरा-सी वातके ऊपर ठन जाय। कुछ भी न हुआ, तो कम-से-कम तुम्हारे पिताजी इस प्रकार मेरे आतिथ्य ग्रहण करनेसे वच जाने पर सदाके लिए वुरा मान जायँगे। इसलिए इस वातको हम जानें या तुम। वोलो, वचन देते हो ?"

उसकी छातीसे अलग होकर मेघराजने कहा, "अव मैं किसी वातका वचन नही देता। फिर भी लगता है कि यह वात विना छिपाये काम नही चलेगा।"

इतनेमें अपने पुरस्कारमें एक रेशमी चादरका जोडा लेकर फूलसिंह वहाँ आ गया। उन्हे इतने निकट ही पाकर वह वोला, "अरे, कुँवरजी, क्या आप मेरी प्रतीक्षामें थे ? यह देखिए ! मैंने वहुत मना किया कि मैं पुरस्कार लेकर क्या करूँगा, वह तो आपको मिल ही चुका है। लेकिन कुँवरीजी माने तव न। यह चादरका जोड़ा मेरे कधेपर रख ही दिया।"

सरदार सादूने उसकी साधू प्रवृत्तिको सराहा। मेघराज मन ही मन हँसा। फिर वे तीनो हवेलीसे वाहर निकल आये। मेघराजने जव वहाँ आकर विदा ली, तो उसने सरदारके हाथको एक वार कसकर दवाया। इस

दबावमें सरदारके छद्म वेगकी मजबूरीके कारण और अधिक साथ न रह सकनेकी क्षमा-याचना थी ।

अस्वीकार न कर सकनेकी विवशताके कारण जो पुरस्कार फूलसिंहको ग्रहण करना पडा था उसे अपने वदनसे मिलाते-जुलाते वह प्रसन्न-वदन सरदार के साथ अपने घरकी ओर चला जा-रहा था । किंतु सरदार सादू चाहकर भी प्रसन्न न हो सका । कोरमदेवीके हाथोंको लेकर उसके हृदयमें मरुभूमि का तूफान फिर करवटें लेने लगा था । सारे रास्ते सरदार सादू सोचता रहा कि जिस लडकीके ये हाथ होंगे स्वयं वह कैसी होगी !

लेकिन इस उत्सुकताके पीछे कुछ और भी भाव थे । इन भावोंसे जीतना सदा ही मनुष्यके लिए कठिन रहा है ।

× × ×

अतीतकी घटना सुनाकर जहाँ सरदार सादूने मोहिलोंके राज-परिवार को क्षण भरके लिए अभिभूत-सा कर दिया था, वहाँ वर्त्तमानका मूर्त्तरूप जयतुंग तीन दिनकी बादशाहतका पूरा-पूरा आनंद ले रहा था । उसका सदा मुसकराता गोल चेहरा, आवश्यकतासे कुछ अधिक भारी शरीर, इधर-उधर आनंदप्रद वस्तुओंको खोजती हुई तेज निगाहें, ये सब चीजें मिलकर अकसर लोगोंको उसके समीप बने रहनेके लिए बाध्य करती थीं ।

मोहिलोंके वृद्ध सरदारने इस खिले हुए व्यक्तित्वको देखते ही पहचान लिया था । यह व्यक्ति, जो रात-दिन हिंसाके स्वप्न देखता था और लगभग नित्य ही मारकाटसे भरे आक्रमणोंका संयोजन करता था, और जिसकी कहानियाँ मरुदेशके मुरदा नौजवानोंको तलवार उठानेके लिए प्रेरित करती थीं, क्या सोचता है, कैसे सोचता है, यह जानना विचारोंकी अच्छी अदलाबदलीका साधन हो सकता है ।

इसलिए उस सुबह राजमहलसे प्रीतिभोज लेकर जब जयतुंग अपने प्रभु व साथियोंके साथ बाहर निकला, तो वृद्ध मोहिले सरदारने कहा, "कुँवरजी, अमल भी साथ-साथ होगा ।"

अफीमके प्रति जयतुंगकी अपार श्रद्धा थी । उसने खिलकर कहा,

"आपने इस समय यह प्रस्ताव बहुत सुन्दर रखा है, सरदार साहब । वास्तवमें इसके जैसा निरापद नशा इस ससारमे और कोई है इसमे सदेह ही है । मन किसी प्रकार भी वशमे न आ रहा हो, युद्धके लिए भुजाएँ फडक रही हो, घोडेकी पीठपर बैठे-बैठे जाँघे अकड़ गई हो, तो चीनिया रानीका सेवन करे । देखनेवाला कह नही सकता कि जवान सो रहा है कि जाग रहा है । "

वृद्ध सरदार हो हो करके हँसा । "और कुछ सच हो न हो, लेकिन आपका तारीफ करनेका ढग "वह फिर जोरसे हँसते हुए बोला, "बहुत सुन्दर है बहुत सही है कहा जाय, तो ठीक होगा । मालूम होता है कि उत्साहका सोता आपकी कल्पनामे मौजूद है ।"

और वे लोग अतिथि-गृहमे पहुँच गये । करीनेसे लगी मसनदपर चित्त लेटकर जयतुगने कहा, "सरदार साहब, कभी-कभी तो मुझे ऐसा लगता है कि सब कल्पना ही कल्पना है, इस ससारमे कल्पनाके अतिरिक्त और कुछ नही है, बशर्ते कि कल्पना खूब स्वतत्र हो—और आप जानते है कि कल्पना सबसे अधिक किस समय स्वतत्र होती है ?" जयतुंगने मोहिले सरदारकी तरफ प्रश्न-सूचक दृष्टिसे देखा । जब वहाँसे भी प्रश्नसूचक दृष्टि मिली, तो उसने कहा, "जब बीहड शत्रुओके बीचमे चार घडीसे आप बराबर दोनो हाथोसे तलवार चला रहे हो और आपके हाथ यह अनुभव करना छोड दें कि वे आपकी आज्ञा-पालन कर रहे है, बल्कि खुद-ब-खुद अपनी गति पर घूमते रहें, तब कल्पना सबसे अधिक स्वतत्र होती है ।"

"हे परमात्मा ! " वृद्ध सरदारने भौंह चढाते हुए आश्चर्यपूर्ण मुद्रामे कहा । "तब आप कल्पना करते हैं !"

"क्यो ?" जयतुग छतकी ओर देखता हुआ बोला,"मस्तिष्कको व्यस्त रखनेके लिए और कोई काम उस समय रहता ही नही । शरीरके जिन हिस्सोको मस्तिष्क आज्ञा देता है वे कम्बख्त नाफरमाबरदार हो जाते है । बस चैनके साथ उस वक्त ऐसी ही कल्पनाओकी तरगें मस्तिष्कमे उठने लगती है, जैसी अमल करनेके बाद उठती है । इसी लिए तो मैं अमलकी स्वर्गीय मादकताकी प्रशसा कर रहा था ।"

"ओह !" इस विचित्र व्याख्यासे और भी चकित होते हुए मोहिले सरदारने कहा, "तो आपकी एकके बाद एक इतनी विजयोंका यह रहस्य है?"

"निःसंदेह," जयतुगने कहा, "लेकिन मोहिलोंके पास कौन-सी रहस्यमय शक्ति है, मैं भी यह जानना चाहता हूँ ?"

मोहिले सरदारने अपने अँगरखेकी भीतरी जेबसे अफीमकी एक सोनेकी बनी डिबिया निकाली। डिबिया पर जयपुरी नकाशी थी। उसमें से थोडी-सी अफीम निकालकर वह अपनी स्वच्छ हथेलीपर अमलका नुस्खा तैयार करते हुए बोले, "हम देखते हैं शत्रु कैसा है, कितना है, कितने पानीमें है। यह सोचते हैं कि उसे पराजित करनेके लिए शक्ति कितनी, चातुर्य कितना और वीरता कितनी चाहिए। फिर सही परिणाममें सब वस्तुओंको सँजोकर हम अपने शत्रु पर टूट पडते हैं।"

"वाह, वाह !" जयतुगने सचमुच प्रशंसा प्रकट करते हुए कहा, "आपके पास तो हारनेके अवसर ही नहीं रहते।"

"किंतु," मोहिले सरदार बोला, "यह आपकी युद्धप्रणालीसे बिल्कुल भिन्न है। आप केवल वीरताके भरोसे ही लडते हैं, पर वह वीरता अद्भुत है, विचित्र है। आप पहली ही चोटमें शत्रुका शीराजा बिखेर देते हैं। वह तिलमिला जाता है और आप तब तक दूसरी चोट कर बैठते हैं। आपके बारेमें मैंने यही सुना है। और तब तो गजब हो जाता होगा, जब आपके कुछ ही साथी—दोनों हाथोंसे तलवार चलाते हुए—कल्पनाओंमें खो जाते होंगे !" सरदारने हँसते हुए जयतुगकी ओर देखा।

"जो आप कहना नहीं चाहते वह मैं कह दूँ।" जयतुग सीधा होकर बोला, "आप दूसरे शब्दोंमें हमारे युद्ध-कौशलको मूर्खता कह सकते हैं। लेकिन यह बात न भूलिए कि जो जीवनके बारेमें जिस तरहके दृष्टिकोण रखता है उसी तरहके युद्ध-कौशलको वह अपनाता है। हम समझते हैं कि जितना ही मृत्युको पास बुलाया जाय उतना ही वह दूर भागती है। इसलिए हम मृत्युसे छेडखानी करके जीते हैं। आप समझते हैं कि मृत्युको छल करके

जीता जा सकता है, और आप उसे छलनेमें सफल हो जाते हैं। लेकिन छलके इस खेलमें मृत्यु कभी-कभी भयानक रूपसे जीतती है। जिस व्यक्तिके प्राणोको आप सबसे अधिक सुरक्षित समझते है, मृत्यु कभी उसे दयनीय रूपसे उठा लेती है क्या अमल तैयार हो गया ?" जयतुगने मोहिले सरदारकी हथेलीकी ओर देखा।

"ओह !" झटपट अपनी भूल सुधारते हुए मोहिले सरदारने तैयार हुआ अमल जयतुंगके हाथ पर रखा। फिर वह बोला, "आपकी बात आश्चर्य-जनक रूपसे सही मालूम होती है। साथ ही साथ यह भी सत्य है कि मृत्यु जब तक छेड़खानी सहन करती है, तो करती है, लेकिन जब वह जवाबमे जरा-सी छेड़खानी कर बैठती है, तो मनुष्यके लिए वह अंतिम होती है। उसके बाद उसमे चेतना ही नही रहती।" मोहिले सरदारने मुसकराकर अपना अमल मुँहमें रख लिया।

उनका अनुसरण करते हुए जयतुग हँसता रहा। फिर होंठ दबाकर वह बोला, "वास्तवमें जीवन और मृत्युके बारेमे लोगोके बड़े ही अलग-अलग और विचित्र विचार हैं। आप ढूँढे जाइए और छोर आपके हाथ नही आता। अपनी अवस्थाके अनुसार मनुष्य कोई भी विचारधारा पकड़ लेता है और चल पड़ता है। वह विजयी होता है, तो दुनिया उसके पीछे-पीछे चल पड़ती है। पराजित होता है, तो मूर्ख बनते भी उसे देर नही लगती।"

अपने-अपने अनुभवोंसे मँजे हुए राजपूत जातिके दो कबीलोके ये वीर जिस प्रकार खुले दिलसे मृत्यु और जीवनके बारे मे अपने विचार एक दूसरेके सामने व्यक्त कर रहे थे, उसी प्रकारके वास्तविक संघर्षको लेकर निकट भविष्यमे आनेवाली जो घटनाएँ उनके अस्तित्वके साथ खिलवाड़ करनेवाली थी, उनका यदि उन्हें पता होता, तो शायद दुगुना अमल कर लेनेके बाद भी वे इस प्रकार पीनकका आनंद न ले पाते।

× × ×

अगली सुबह जब मोहिले सरदारकी पीनक टूटी, तो सामने ही उनका बेटा मेघराज चिंतित मुद्रामें प्रतीक्षा करता हुआ बैठा दिखाई दिया। जयतुंगको ज्योंका-त्यों पड़ा छोड़कर मोहिले सरदारने जलके लिए संकेत किया और मेघराज बाहर जाकर एक सेवकके हाथों जल लिवा लाया। मुंह हाथ अच्छी तरह धो चुकनेके बाद सेवक-द्वारा प्रस्तुत किये गये वस्त्रसे शरीर पोंछते हुए सरदारने कहा, "मेघराज, तेरे चेहरे पर मुरदनी छा रही है। क्या बात है ?"

मेघराजने कहा, "अभी अभी मंदौरसे एक टुकड़ी आई है। भारी भेंटके साथ मंदौरके राजा साहबने कोरमदेवीकी पोशाक भेजी है। उन्होंने विवाहके लिए अगहन बदी दोयजका मुहूर्त्त भी सुझा भेजा है।"

"तो फिर खुशी मनाओ, बदलेकी भेंट भेजनेका इंतज़ाम करो। लेकिन नहीं, तुम्हारा मुंह क्यों उतर रहा है ?" मोहिले सरदारने बेटेके मुंहको ध्यानसे देखते हुए पूछा।

मेघराज तनिक आगेको ओर झुक गया। "पिताजी, कोरमदेवीने पोशाक लेनेसे इनकार कर दिया है।"

"ऐं !" मोहिले सरदार चौंका। "क्यों ?"

"वह कहती है कि उसे यह विवाह ही स्वीकार नहीं है।" और मेघराजने पिताकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए उनके मुंहकी ओर देखा।

इस बार मोहिले सरदार केवल आश्चर्यसे मेघराजके मुंहको निहारता रहा। फिर वह जरा चेतन होकर बोला, "तुम समझ तो रहे हो कि तुम्हारे मुंहसे क्या निकल रहा है ?"

"मैं पूरे होशमें हूं, पिताजी," मेघराजने कहा। "कोरमदेवी भी उतनी ही गंभीर है। आप बाहर आइए, तो मैं बताऊं।"

सरदार और मेघराज दोनों तुरत बाहर निकल आये। वहां आते ही मेघराजने स्वरको अत्यंत धीमा करके कहा, "कोरम कह रही है कि उसका विवाह मंदौरके राजकुमारसे नहीं, भाटी सरदार सादूलसिंहके साथ होगा।"

"क्या बकते हो !" सरदार चिल्लाया।

उत्तरमें मेघराज केवल चुप रहा।

इस चुप्पीसे जो अवकाश मिला उसके भीतर सरदारने समझ लिया कि स्थिति वास्तवमें वही थी, जो मेघराज कह रहा था। कोरमदेवीके लिए कुछ भी असंभव नही है। मोहिलोके उन्मुक्त वातावरणमे पली वह उद्दड लडकी किस समय किस प्रकारका विवाद खडा कर देगी इसका कभी किसी को पता नही रहता था। किसीको वह अपने सामने बोलने नही देती थी, और जब चाहती थी, तभी किसीकी भी बात सुननेसे इनकार कर देती थी। समय-समय पर वह अजीब-अजीब इच्छाएँ प्रकट करती थी और मोहिले सरदारकी समस्त शक्तियाँ आज तक लाडली बेटीकी प्रत्येक इच्छा पूर्ण करती चली आई थी। अनायास और सहज ही मिल जाती इन इच्छा-पूर्तियो से कोरमदेवीको अपने आप ही वह अधिकार मिल गया था, जिसमे किसीकी कैसी भी इच्छा अदम्य हो जाती है, और उसे पूरा करनेके अतिरिक्त और कोई चारा ही नही रह जाता। क्षण मात्रमें मोहिले सरदारकी आँखोके सामने घूम गया कि विरोधका क्या परिणाम होगा और उस परिणामसे जो परिणाम निकलेंगे उसमे कैसे-कैसे ज़हर खिल सकते है।

एक लबी नि श्वास निकालते हुए सरदारने मुँह लटकाकर कहा, "मै कोरमसे बातें करूँगा। तुम हम दोनोके बैठनेका प्रबध करो।"

मेघराज तुरत वहाँसे चला गया।

कुछ ही देर बाद पिता, पुत्र और पुत्री महलके एक एकात कक्षमें त्रिकोणाकार बिछे हुए आसनोपर बैठे थे। कोरमदेवी खडी ही रहना चाहती थी, किंतु मोहिले सरदार खडे और बैठे हुए व्यक्तिकी विचारधारा का अतर समझता था। वह उपस्थित समस्यासे जिस प्रकार भाग-भागकर प्रत्युत्तर दे सकता है, वह सुविधा बैठे हुए व्यक्तिको नही रहती। इसीलिए सरदारने बेटीको आज्ञा देकर आसन पर बैठ जानेके लिए बाध्य किया।

जब कोरमदेवी बैठ गई, तो पाँव नीचे किये बैठा हुआ मेघराज उठकर पिताकी पीठ पीछे जा खड़ा हुआ। कोरमदेवीने बैठकके इस परिवर्तनको देखा और वह समझ गई कि स्थितिकी गंभीरता भाईको पिताका पक्ष लेनेके लिए मजबूर कर गई।

कोरमदेवीके बैठते ही तकियेका सहारा लेते हुए वृद्धने कहा, "मैंने मेघराजसे जो कुछ सुना है, बेटी! क्या वह सच है?"

कोरमदेवी चुप रही। वह केवल सिर नीचा किये हुए पैरके अंगूठेको मसलती रही।

"तो वह सच ही है," सरदारने कहा। "और यह भी सच है कि भाटी सरदारकी ओर तुम्हारी दृष्टि है?"

कोरमदेवीने इस बार भी चुप रहकर अपनी स्वीकारोक्ति प्रकट की।

"हूँ!" सरदारने कहा "हम भाटी सरदारका आदर करते हैं। उसका व्यक्तित्व बड़ा है और वह महान् है। यह सच है कि आजका राजपूत नौजवान भाटी सरदारकी कसम खाकर छाती ठोकता है। हम-सा सौभाग्यवान् और कौन होगा, जिसे स्वयं सरदार साढ़ू-जैसा लोगोंका प्रिय नायक जमाईके रूपमें मिले। लेकिन मुझे बड़ा अफ़सोस होता है तुम्हारी बुद्धि पर कि तुम जरासे मोहमें आकर इतने बड़े वीर व्यक्तिकी जानकी ग्राहक बन बैठी हो!"

इस बार कोरमदेवीने चौंककर पिताकी तरफ़ देखा। "क्या मुझसे कोई अपराध हो गया है, पिता जी?" और किसके प्रति अपराधका यह प्रश्न था यह प्रकट ही था।

"इसे अपराध नहीं, तो और क्या कहा जाए?" सरदारने कहा, "बच्चों और बड़ोंमें और फरक ही क्या होता है? मैं तुम्हारे सामने नीति और धर्मकी बात नहीं करता। किसीको वचन देकर तोड़ देना कितना बड़ा अधर्म है, मैं तुम्हारे बारेमें उसकी दुहाई नहीं देना चाहता। मैं जानता हूँ

कि तुम्हारे पास उसका जवाब है। तुम कह दोगी कि तुम्हारी आत्मा इसे स्वीकार नही करती। और मैं जानता हूँ कि जिस विवाह-सबधको आत्मा स्वीकार नही करती वह पैशाच-विवाह होता है। लेकिन मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि जिस समय मदौरके दस हजार राठौर हाथोमे दुवारे लेकर उठ खडे होगे और तुमसे पूछेगे कि कहाँ है वह जिसने तुम्हे उनसे छीन लिया है, तो तुम क्या जवाब दोगी, किस तरफ इशारा करके कहोगी कि यहाँ है वह भाटी सरदार ? कौन-सा वह लोहेका कवच है, जिसे पहनाकर तुम भाटी सरदारको राठौरोके लपलपाते हुए खड्गोके सामने खडा कर दोगी, और वह उनसे बच निकलेगा ?"

पिताकी यह हृदयको वेध देनेवाली बात सुनकर कोरमदेवी रोप, प्रेम और वेदनाके मिश्रणसे थरथर काँप रही थी, और जब मोहिले सरदार चुप हुआ, तो कोरमदेवी फूट-फूटकर रो पडी।

मेघराज देख रहा था कि बहनके लौहनिश्चय पर करारी चोट पडी थी। किंतु वह यह भी जानता था कि कोरमदेवीको बहुत जल्दी निश्चय कर लेनेकी आदत थी, और जब वह एक बार निश्चय कर लेती थी, तो उससे उसे डिगाना जैसे पहाडको अपने स्थानसे डिगाना था। फिर भी वह खडा-खडा इस चोटमे आहत हो रहा था। इसी कारण उसके गौर मुखपर हार्दिक कष्टकी लाली उभर आई थी। लेकिन वह चुप रहा।

आखिर कोरमदेवीने कहा, "राठौर जानबूझकर आगमे नही कूदेगे।" कहनेको तो कह दिया, किंतु उसके शब्द कुछ अस्पष्ट थे।

मोहिले सरदार तो उसकी सुनने और अपनी सुनाने आया ही था। उसने कोरमदेवीके शब्द कान लगाकर सुने। फिर वह बोला, "हूँ! तो यही है तुम्हारा तर्क ? कितना कमजोर और फीका तर्क हो गया है तुम्हारा, बेटी!"

कोरमदेवी मानो भभक उठी। "भाटियोने घास नही छीली है, पिता जी," उसने कहा। "मुझे भाटियोसे छीननेके प्रयत्नमें राठौर अपना ही नाश कर बैठेंगे।"

"मुझे खुशी होगी !" सरदारने शांत वाणीमें कहा, "तब भी खुशी होगी, जब हजारों वीर मरकर तुम्हारी एक इच्छा पूरी करेंगे ! तब भी मैं प्रसन्न ही हूँगा, जब हजारों स्त्रियोंकी गोद और हजारों ललनाओंका सुहाग तुम्हारे हाथोंको पीला करनेमे काम आ जायगा !" सरदारका कंठ अवरुद्ध हो गया। फिर भी थूक निगलकर वह कहते चले, "लेकिन तब मैं शायद खुशीसे पागल हो जाऊँगा, जब मेरी बेटीके पीले हाथोंपर बहादुर भाटियोंके लाल लहूकी धाराएँ बह रही होंगी !"

कोरमदेवी आँखे फाडकर अपने पिताकी सूरतको देखती रही। यहाँ तक कि उसने देखा कि विपरीत और अटल भविष्यकी काली छायाओंसे पार न पा सकनेके कारण वृद्ध सरदार रो पडा। कोरमदेवीके कलेजेमें जैसे कुछ कहते-कहते अटक गया। फिर पिताको जरा चेतन होते देखकर ही उसने कहा, "पिता जी, मोहिलोंने कभी भविष्यके बारे इतना नही सोचा, जितना आज आप सोच रहे हैं। भाटियोंने कभी अपने प्राणोंको इतना नही सहेजा, जितनी चिंता आज आप उनके लिए कर रहे है। मुझे भाटी सरदार इसीलिए प्रिय है कि उसने खतरोंको सफलताके साथ पार किया है। वह अब भी खतरोंको पार कर सकता है। वह अगर नही कर सका, तो मोहिलोंकी बेटी अपना पथ पहचानती है।"

मोहिले सरदार अवाक् हो गया। उसके मस्तिष्कमे सचित समस्त तर्क कोरमदेवीके वचनोंके प्रभावमें विलीन हो गये। कोरमदेवीके पास कोई दलील नही थी, किंतु उसमे ओज था, और राजपूतोमे शायद सबसे बडा यही एक दुर्गुण था। अंतमे जब कोई राह नही रही, तो वृद्ध सरदारने अपने जूते पहननेके लिए नीचे पाँव लटकाये। तब इतनी देरसे चुप खडा मेघराज सहसा हिला। उसके होंठ खुले और उसने कहा

"एक बात मैं भी कहना चाहता हूँ, पिताजी।"

सरदार जूता पहनते-पहनते रुक गया। सिर पीछे फिरा कर उसने कहा, "मेघराज, मैं यहाँसे जाना चाहता हूँ।"

'-मुझे बहुत बड़ी बात नहीं कहनी है, पिताजी। मैं तो सिर्फ यह सच्चाई कोरमके सामने रखना चाहता हूँ कि जिसे वह भाटी सरदार समझ बैठी है वह भाटी सरदार नही है। भाटी सरदार फूलसिंह चरवाहेके घर अतिथिके रूपमें टिका हुआ है।"

सरदार जैसे बैठा-बैठा ही उछल पड़ा। कोरमदेवी मुँह बाये रह गई। वह अचकचाकर भाईकी आँखोमे देखने लगी। कही उनमे कोई शैतानीका भाव तो नहीं है ?

"यह तुम क्या कह रहे हो, मेघराज !" मोहिले सरदार बोला, क्या यह सभव है ?"

"हाँ, सभव है, पिताजी," मेघराजने कहा। शायद लबे सैनिक-जीवनने भाटी सरदारको असीम साहसी और विनोदी बना दिया है। लेकिन इस तरह उन्होने मोहिलोके आतिथ्य-सत्कारका मजाक बनाया है। मैंने उससे पगडी बदल ली थी, नही तो उसी दिन तलवार उठ चुकी थी, और फैसला भी तुरत हो जाता।"

वृद्ध सरदार बजाय मुरझानेके खिल उठा। उत्साहमे बेटीकी ओर देखकर उसने कहा, लो, अब तो बाजी ही पलट गई, बेटी !"

कोरमदेवी अनखनाकर उठ गई। बडे व्यथित और तीव्र स्वरमें उसने कहा, "मैं भाटी सरदारके शरीरको नहीं चाहती। मेरा मोह उसकी आत्मामें है, उसकी उस वीरतासे है, जिसने भयानक खतरोमे अपनेको सचेत रखा है।"

कोरमदेवी वहाँसे चली गई और मोहिल सरदार अवाक् होकर उसे जाते देखता रहा। फिर वह सिर पकडकर उसी आसन पर तकियेके सहारे लेट गया। एक बार अपने बालो पर हाथ फेरते हुए वह बोला, "मेघराज, किसीको जल लानेके लिए कह दे।"

मेघराज स्वय ही जल लेकर आया। जब मोहिले सरदारने जल पी

लिया, तो वह फिर लेट गया। मेघराजने पिताके माथेपर अपना हाथ रखा। "एक राह अभी और रह गई है, पिता जी।"

नहीं, अब कोई राह नहीं रह गई है, बेटा!" सरदारका निराश स्वर निकला। जब कोरम कुछ निश्चय करती है, तब कोई राह नहीं रहती, आज तक नहीं रही।"

मेघराजने कहा, "भाटी सरदार यदि कोरमको अस्वीकार कर दें, तो राह अब भी खुली है, पिताजी। मुझे तो आशा है कि वह एक लडकीके लिए अपने सात सौ साथियोंका खून बहानेके लिए तैयार नहीं होगा। क्या आप उससे एक बार पूछेंगे नहीं, पिता जी? आखिर उन्हींसे तो इस बातका सबसे बडा सबब है।"

मोहिले सरदारकी आँखोंमें एक चमक आई, और वह उठ गया, "शायद भाटी सरदार अपनी ओर एक राजपूत लडकीका बढा हुआ हाथ अस्वीकार न कर सके। मैं पहले उसके साथीसे ही इसके लिए पूछूँगा। अब कुछ उम्मीद जान पडती है। वे लोग कभी व्यर्थके रक्तपातको पसन्द नहीं करेंगे। तब हम भाटी सरदारके सामने कोरमका हाथ और उसके साथियों की अनिच्छा एक साथ रखेंगे। उसे अपने साथियोंकी तरफ मजबूर होकर झुकना पडेगा, और कोरमको लेकर इस नाशका श्रीगणेश नहीं हो सकेगा।" सरदारने अपने जूते पहने और अपने साथ मेघराजको लिए वह महलसे निकल कर उसी अतिथि-गृहमें पहुँच गया, जहाँ अभी-अभी अफीमकी मादकतासे उत्पन्न कल्पनाओंकी तिलाजलि देकर जयतुग उठ बैठा था।

X ⊠ ⊠

सेवक चाँदीकी सुराहीसे जयतुगके हाथोंपर जल उँडेल रहा था। निकट आकर मोहिले सरदारने कहा, 'जय भवानीकी, कुँवर जी।"

चुल्लूका पानी ज़मीनपर छोडकर जयतुंगने हाथ जोड दिये। "भवानी माताकी जय, सरदार साहब। मालूम होता है आप बडे सवेरे उठ गये।"

सरदारने पलटकर मेघराजसे कहा, "बेटा, कुँवरजी के लिए जलपान का प्रबंध करो। देखते नहीं अमलने कुँवरजीका चेहरा फीका कर दिया है?"

मुँहपर पानीका चुल्लू डालते हुए जयतुगने कहा, "कुँवर साहव, देखना जलपान ज़रा गरिष्ठ हो। हल्के जलपानसे मेरे चेहरेपर ताज़गी नही आती।"

किंतु जयतुगकी इस वातसे किसीके मुख पर भी मुसकराहट नही आई। जव जयतुग सेवकके हाथके वस्त्रका प्रयोग कर चुका, तो सरदारने सेवकको वहाँसे चले जानेका इशारा किया। उसके चले जाने पर वह वोला .

"कुँवरजी, जो प्रस्ताव मै आपके सम्मुख रखने जा रहा हूँ, यदि आप उसे हज़म कर गये, तो फिर शायद गरिष्ठ जलपानकी ओर आपकी दृष्टि न उठ सके। मेघराज, तुम इनके लिए हल्के जलपानका ही प्रवव करो।"

जयतुगने मेज़वानके द्वारा अपनी वात इस प्रकार कटती देखकर आश्चर्यसे सरदारकी ओर देखा। फिर वह वोला, "अच्छा तो, कुँवर साहव, आप तनिक ठहर जाइए। पहले मै सरदार साहवका प्रस्ताव सुन लूँ।"

सरदारने खड़े-खडे ही प्रस्ताव रखा "कुँवरजी, सविनय निवेदन है कि मै अपनी वेटी कोरमदेवीका हाथ आपके हाथोमे देना चाहता हूँ।"

जयतुग जैसे आसमानसे जमीन पर आ गिरा। एक क्षण वाणीरहित होकर उसने वारी-वारीसे सरदार और मेघराजकी मुख-मुद्राओको देखा, वहाँ असावारण रूपसे गभीरता विराज रही थी। फिर उसने कहा, "इतनी कृपाओका वोझ मै सम्हाल नही सकूँगा, सरदार साहव। मै अपनी कृतज्ञता किस प्रकार प्रकट करूँ समझमे नही आता। आप जो कुछ कह रहे है क्या वह पूरी गभीरतासे कह रहे है?"

"जितनी गभीरतासे दिनमें सूरज निकलता है, कुँवर जी, मेरे मुँहके शव्द भी उतनी ही गभीरतासे निकल रहे है। तो आप इसे स्वीकार करते है? ज़रा ठहरिए, आपका अपमान करना मेरा उद्देश्य नही है। आप स्थिति समझ ले, तव अपनी स्वीकारोक्ति दे। मदौरके राठौरो से मेरी वेटीकी मँगनी हो चुकी है।"

जयतुग हाथ-मुँह पोछनेके वाद जिस मुद्रामे वैठा था उसी मुद्रामे वैठा

रहा। हिलने-डुलनेका उसे अवसर ही नहीं मिला। उसने कहा, "मंदौरके राठौरोंमे आपकी बेटीकी मँगनी हो चुकी है।"

"हाँ, कुँवर जी," सरदारने कहा। "जब मँगनी हुई थी, तब वह बच्ची थी। अरिनकमल मंदौरका युवराज है। उनीमे मँगनी हुई थी। किंतु बाप बेटीके लिए सबसे अच्छा वर ढूँढता है। हमें भाटी सरदारसे अच्छा वर इस समय सारे राजपूतानेमे दिखाई नहीं देता।"

"भाटी सरदारसे अच्छा वर आपको सारे राजपूतानेमें दिखाई नहीं देता!" जयतुंग मोहिले सरदारके शब्दोका ज्यों-का-त्यों अनुसरण करता हुआ बोला।

जयतुंगकी स्वयंकी विचारशक्ति कुछ समयके लिए कुंठित हो गई थी या वह परिस्थितिकी विषमताको सिर झुकाये सोच रहा था, दोनो मोहिले इस बातको बडे ध्यानसे देख रहे थे। सरदारने जयतुंगके कंधेपर हाथ रखते हुए कहा, "कुँवर जी, आप कुछ सोचमें पड गये है?"

जयतुंगका सिर उठा। उसने कुछ निश्चय कर लिया था। दृढ स्वरमे वह बोला, "सरदार साहब, आपने परिणाम सोच लिया है?"

मोहिले सरदारने अपने पुत्रकी ओर देखा—यह कैसा सवाल था? इसका क्या अर्थ हो सकता था? इस बार मेघराजने उत्तर दिया, "हाँ, कुँवर जी हमने परिणाम अच्छी तरह सोच लिया है। अब जो कुछ सोचना बाकी रह गया है वह आपको रह गया है।"

जयतुंग हँसा। "मुझे परिणामके बारेमें कुछ नहीं सोचना है, कुँवर साहब। मैं एक दूसरी बात सोच रहा था। इस तरहकी योजनाओंका परिणाम तो सदा ही एक-सा होता है, और उसमे भाटी सुलझना अच्छी तरह जानते है। मुझे यह सबंध स्वीकार है।"

जयतुंगका निश्चय सुनकर दोनो मोहिलोंके मुखपर कालिमा पुत गई। सरदारने विस्मयसे कहा, "आपको स्वीकार है!"

"क्यों ? आपको आश्चर्य हो रहा है ?" जयतुगने पूछा।

"ओह !" मोहिलोका वृद्ध सरदार वापस लौट चला। जाते-जाते उसने कहा, "मेघराज, कुँवरजी के लिए जिस प्रकारका जलपान वह चाहें वैसा ही प्रबंध करो।"

और मेघराज आज्ञा पालनके लिए पिताके साथ हो लिया।

कुँवरजीके छद्म-वेषमें पाहुओंके राजा साहबने जो उत्तरदायित्व अपने सिर ले लिया था वह अनविकृत था। किंतु वर्षोंके संसर्गसे जयतुगने भाटी सरदारकी वीरता और साहसको जितना आँका था उसीके अनुसार उसने वह जिम्मेदारी अपने सिर ओट ली थी। फिर भी संदेहका निराकरण होना अनिवार्य था। इसलिए जलपानकी प्रतीक्षा न कर पाकर जयतुग सीधा अपने साथियोंके निवास पर पहुँचा, और पंच-कल्याण पर सवार हो कर, फूलसिंह चरवाहेका पता बतानेके लिए उसने एक मोहिलेको साथ लिया। कुछ ही देरमें वह चरवाहेके घरके सामने उतरा।

साथ आये मोहिलेने चरवाहेको पुकारा। वह तुरत बाहर निकला। साक्षात् कुँवरजीको सामने देखकर वह एक बार तो हक्काबक्का रह गया। फिर भूमि पर झुककर उसने भाटीके पाँव छुए। "पाँव लागी, महाराज।"

"सुखी रहो," भाटीने कहा। "भाटी सरदार कहाँ है ?"

चरवाहा समझा नहीं। वह अचकचा कर जयतुगका मुँह देखने लगा। "भाटी सरदार तो आप ही है, महाराज !" उसने कहा।

जयतुग उत्तेजनामें पहली बार भूल कर गया था। उसे सुधारते हुए उसने कहा, "कुँवरजी कहाँ है ?"

"कुँवरजी भीतर है। घरके भीतर पधारो जी," चरवाहेने कहा।

जयतुग उसके पीछे-पीछे चला। भाटी सरदार भूमि पर बिछी हुई एक दरी पर बैठे सूत बँट रहे थे। जयतुगको देखते ही उठ खड़े हुए। "जुहार, राजा साहब। आप यहाँ कैसे !"

"यह आप क्या कर रहे हैं, कुँवरजी ?" जयतुगने कहा ।

"मैं अपने मेज़बानसे सबसे अधिक मज़बूत रस्सीको बँटनेका तरीक़ा सीख रहा था । मेरा सवाल ज्यों-का-त्यों है," भाटी सरदारने कहा ।

फूलसिंह अभी आश्चर्यान्वित हुआ पीछे ही खड़ा था । अपना नाम सुनते ही उसे स्थितिका बोध हुआ, और उसने झपटकर एक कोनेसे पीढ़ा उठाया । फिर उस पर अपने कंधे पर पड़ी चादर डालता हुआ वह बोला, "आसन लो, महाराज ।"

जयतुगने फूलसिंहकी तरफ़ देखकर कहा, "तुम ताज़े जलका प्रबंध करो जी ।"

सुनते ही फूलसिंह पलटकर वहाँसे तीर हो गया । उसके जाते ही जयतुगने कहा, "अब शायद यह अभिनय समाप्त कर देना पड़े । कुँवरजी, आपने मोहिलोंके राज-परिवारमें किसी कुँवारी लड़कीका नाम सुना है ?"

भाटी सरदार हँस पड़ा । "राजा साहब, आप बात कहना तो जल्दीमें चाहते हैं, लेकिन स्वयं ही उसे उलझा रहे हैं । मोहिलोंके राज-परिवारमें कुँवारी लड़कियोंकी कमी तो नहीं होनी चाहिए । क्या आपने अपने लिए कोई चुन ली है ?"

जयतुगने दूसरी बार अपनी भूल सुधारी । "इस बातको छोड़िए । क्या आपने मोहिले सरदारकी लड़कीके बारेमें कभी कुछ सुना है ?"

"हाँ, सुना तो है," भाटी सरदारने कहा । "उसका नाम कोरमदेवी है ।"

"हूँ !" जयतुगने कहा, "क्या यह भी सुना है कि उसकी मँगनी हो चुकी है ?"

"हाँ, राठौरोंके युवराजसे ।"

"क्या आपका अनुमान है कि वह भाटियोंको प्रशंसाकी दृष्टिसे देख सकती है ?" जयतुगने कुछ आश्चर्यमिश्रित स्वरमें पूछा ।

"अनुमान नहीं, निश्चय है," भाटी सरदारने कहा । "वह निश्चय ही भाटियोंको प्रशंसाकी दृष्टिसे देखती है । वह उनकी वीरतापर मुग्ध है ।"

"कुँवरजी!" आश्चर्यसे अभिभूत होकर जयतुग बोल उठा। "मालूम होता है आपको यहाँ बैठे-बैठे ही मुझसे कही अधिक जानकारी मिल गई है!"

सरदार सादू हँसा। "हाँ, राजा साहब, इस बारेमे मुझे आपसे अधिक जानकारी है। आप कहना क्या चाहते है?"

"मै जो कहना चाहता हूँ उसकी जानकारी आपको नही होगी," जयतुगने कहा, "इसका निश्चय है। आपने यह कभी नही सुना होगा कि मोहिले सरदार अपनी लडकीका संबध आपसे करना चाहते है।"

यह सरदार सादूके आश्चर्यान्वित होनेकी बारी थी। विस्मयसे भौंह चढाकर उसने कहा, "राजा साहब, अभी तक पीनकमें ही हो क्या? मालूम होता है चौनिया रानी सिरपर चढकर बोल रही है!"

जयतुगने उतनी ही गभीरतासे कहा, "मै चेतन ही हूँ, कुँवर जी। पर बात सच है। किसी कुमारीके पवित्र और अनछुए हाथ भाटी सरदारकी तरफ बढ चुके है। यही जिज्ञासा मुझे इतनी जल्दीमें यहाँ खीच लाई है कि स्वय सरदार सादू इसे स्वीकार करते है या नही।"

क्षण मात्रमें सादू सरदारकी आँखोके सामने वे गोरी और लचकदार कलाइयाँ घूम गईं, जिनके द्वारा उसे एक ढाल और एक तलवार उपहारमें मिली थी। मानो कोरमदेवी चिकके पीछेसे बोल रही हो. 'मेरा विवाह तुमसे होगा। जब तुम मुझे ले कर चलने लगोगे, तो सारा राजपूताना तुम्हें भूखी आँखोंसे देखेगा। उस समय कुल-सम्मानकी रक्षाके लिए मै तुम्हें आज यह ढाल और तलवार दे रही हूँ। जिस तरह यह ढाल और कठिन से कठिन धातुके विरुद्ध टकरानेसे भी नही टूटेगी, उसी तरह आशा करती हूँ कि इन्हें रखनेवाला कठिन-से-कठिन परिस्थितिसे टकराने पर भी मेरी रक्षा करनेमे समर्थ होगा "

बादमे भाटी सरदारने कहा, "आपका इतना बडा सच मुझे कितना बडा मजाक लग रहा है इसे आप नही जानते। इस तरहकी मजाक अच्छी

नहीं होती। मैं उस लड़कीको देख आया हूँ। वह स्वच्छ दूधकी तरह निष्कलंक है। उसके नामको लेकर हँसी नहीं चलनी चाहिए।"

जयतुगने सादू सरदारके चेहरेकी ओर दृष्टिपात करके स्थिरतासे कहा, "यही सबसे बड़ी हँसी लगती है, कुँवरजी, कि यह बात सच है और प्रस्ताव स्वयं मोहिले सरदारके मुँहसे मेरे सामने निकला है। पर आपने उसे कब देख लिया?"

"मैंने उसे नहीं देखा है, केवल उसके हाथ देखे हैं। देखकर उन हाथोंको अपनानेका मोह भी हुआ था, लेकिन मैंने प्रयास करके उसे दबा दिया। मैंने उसे आकाश-कुसुम समझा था, किंतु वह बड़ा खूबसूरत काँटा है, जो चलते-चलते पैरोंमें अपने आप चुभ गया। अगर आपकी बात सच है, तो अब यह काँटा नहीं निकलेगा, राजा साहब।"

जयतुग प्रसन्नतासे उछल पड़ा। "आपने मुझे उबार लिया है, कुँवरजी! आपके वेषमें मैं अपनी स्वीकृति मोहिलोंको दे आया हूँ।"

सरदार सादू मुसकराया। इस मुसकराहटमें सच्ची प्रसन्नता छिपी थी। उसने कहा, "फिर आप इसलिए जल्दी-जल्दी मेरे पास दौड़े आये कि कहीं मैं डर न जाऊँ। मेरे वेषमें आप—कुछ भी कर आते राजा साहब, चाहे दिल्लीपतिको अपना शत्रु बना आते—तो भी मैं पीछे न हटता।"

जयतुगने आगे बढ़कर सरदार सादूको अपने विशाल शरीरसे चिपटा लिया। गद्‌गद होकर उसने कहा, "मैं आपको क्या बिलकुल भी नहीं पहचानता, कुँवर जी?"

इतनेमें फूलसिंह ताजे जलका लोटा और कटोरा दोनों हाथों पर रखे आ उपस्थित हुआ। विनम्रतासे झुककर उसने जयतुगसे कहा, "जल, महाराज।"

जयतुगने कहा, "वस्तु पहले बड़ोंको दी जाती है। तुम देखते नहीं पास ही स्वयं भाटी सरदार खड़े हैं।" उसने सरदार सादूकी ओर संकेत करके बताया।

फूलसिंह भौचक्का वना खडाका-खडा रह गया। "हुजूर क्या कह रहे हैं, समझ नही पडा !" उसने कहा।

"म कह रहा हूँ कि भाटी सरदारको पहचानो। यह है भाटी सरदार। तुम पहले भी भूलकर आये थे और अब भी भूल कर रहेहो," जयतुगने कहा।

"यह भाटी सरदार है ! और आप कौन हैं ?" चरवाहेने अचकचाकर पूछा।

"मैं कौन हूँ ? मैं पाहुओका राजा हूँ," जयतुगने ज़ोरसे खिलखिला कर कहा।

फूलसिंह चरवाहेके हाथसे जलका लोटा छूट कर भूमि पर लुढक पडा। वह मुँह वाये दोनो भाटियोको देखता ही रह गया। फिर तुरत ही चेतन होकर वह लोटा और कटोरा उठाकर ज्योंही वाहर भागने लगा, जयतुगने उसे रोक दिया। "रहने दो, हमे प्यास नही है। कुँवरजी, आप तुरत चलिए।" और वह कुँवर सार्दूसिंहका हाथ पकडकर उसी क्षण वहाँसे वाहर हो गया।

फूलसिंह हडवडाकर वाहर निकल आया और भीतसे चिपका सार्दूसिंह और जयतुगको पचकल्याणपर उडता हुआ देखता रहा।

× × ×

दो सेवकोके हाथोपर गरिष्ठ जलपान रखवाकर जव मेघराज फिर वैठकमे लौटा, तो सिर नीचे झुकाये हुए भाटी सरदारके सामने थाल रखवा कर वह हाथ जोडते हुए वोला, "और जो आज्ञा होगी वह तुरत प्रस्तुत किया जाएगा।"

भाटी सरदारने थालोके छाजन उघाडकर मुँह ऊपर उठाते हुए कहा, "यह दालोसे वनी हुई मिठाइयाँ, ये कचौडियाँ ! मै तो कभी इतना कडा भोजन नही करता, भाई मेघराज जी।"

मेघराजने अपना विनम्रता और ख्यालोमें खोया हुआ सिर ऊपर उठाया, फिर आश्चर्यसे उछलता हुआ वह वोला, "अरे, कुँवरजी !"

इससे पहले कि कुँवर सादूलसिंह उसके आश्चर्यकी प्रतिक्रियामें कुछ कहें मेघराज वापस भागा। पिताको इस परिवर्तनकी सूचना देना आवश्यक था।

कुछ ही देरके बाद मोहिले सरदार मेघराजके साथ-साथ उस स्थानपर पहुँचा। उसने अपनी बाँहें उठाईं और कुँवर सादूलसिंह उसकी छातीसे चिपट गये।

धीमे किंतु गद्गद स्वरमें मोहिले सरदारने कहा, "धन्य हो, कुँवर जी, कि तुमने भूल ठीक समय पर सुधार ली है। मंडोरके संदेशवाहक अभी ठहरे हुए हैं, और मुझे उनको जल्दीसे जल्दी उत्तर देना है। कुँवर जयतुंगने सब बातें तुम्हें बता ही दी होंगी।"

मसनदोंकी ओर बढ़ते हुए भाटी सरदारने उत्तर दिया, "राजा साहबने मुझे सब बातें बता दी हैं। मुझे उनके निश्चय पर प्रसन्नता है।"

शांतिके साथ बैठकर मोहिले सरदारने गहरी निराशा भरी निःश्वास छोड़ी और बोला, "मेरा भी यही अनुमान था। मैं भाटियोंको जानता हूँ। फिर भी मनमें एक दुराशा थी कि राजा साहबकी जगह यदि सही व्यक्ति होता, तो मैं उसके साथ सदा रहनेवाली बुद्धिकी दुहाई दे सकता था। किंतु तुमने छलका परदा डाल रखा था, कुँवर जी। उसे मैं अपने आप कैसे तोड़ सकता था? यही संबंध मुझे सबसे ज्यादा खुशी देता और इसी पर मुझे सबसे ज्यादा सोचना पड़ रहा है।"

"बहुत सोच-विचार ठीक नहीं रहता," कुँवर सादूलसिंहने कहा। "इससे होने वाले काममें मन आधा रह जाता है, और जिस काममें आधा मन रहता है वह कभी सफल नहीं होता। आपको इतना सोच-विचार करनेकी जरूरत ही क्या है? यह पूरी तरहसे आपकी ही इच्छा पर है, संबंध करें या न करें। किंतु आपके पूछने पर राजा साहबने जो उत्तर दिया है, मैं भी वही उत्तर देता।"

मोहिले सरदारने तनिक कातर निगाहोंसे भाटी सरदारके मुँहकी ओर

देखा। उस तेजस्वी मुखमे जो कुछ निकल रहा था वह पूरे अभिमान और दृढताके साथ। मानो उसने किसी उपस्थित समस्याके दूसरे पहलूको कभी देखा ही न हो।

"मेरी इच्छा पर क्या है, कुँवर जी ? नही, मेरी इच्छा तो बँधी हुई है। मै कोरमके विरुद्ध अपना हाथ नही उठा सकता। मै भाटी सरदारको मजबूर नही कर सकता। मै तो केवल यह पूछना चाहता हूँ कि क्या राठौरोसे भिडना बुद्धिमानी होगी ? तुम इस बातका जवाब दो, कुँवर जी।"

कुँवर सादूलसिहने कहा, "इस बातका जवाब मै भी नही दे सकूँगा, सरदार साहब। स्वय न्याय जिस बातका उत्तर देता है उसका उत्तर वीर नही देते। मै तो केवल एक बात जानता हूँ, आप अपनी बेटीका विवाह किसी विशेष वरसे करना चाहते है, बेटीकी इच्छा उसके साथ है, वर भी पीछे नही हट रहा है। फिर ससारके जो भी तत्त्व उनके विरुद्ध कमर कसते है वे अन्यायका पक्ष लेते है। प्रत्येक वीर न्यायके ऊपर अपनी जान दे देना अपना कर्त्तव्य समझता है। न्याय हमारी ओर है। जीत हमारी होगी।"

"मुझे भी न्यायकी शक्तिमे विश्वास है," मोहिले सरदारने उत्तरमे कहा। "किंतु न्यायकी भी अपनी कीमत होती है। जिस न्यायकी आवश्यकतासे अधिक कीमत देनी पडती है वह न्याय भी अन्यायके रूपमे परिवर्तित हो जाता है। भाटियो और मोहिलोका सर्वनाश इस न्यायका बहुत अधिक मूल्य है, कुँवर जी।"

सरदार सादू उपेक्षासे हँसा। "कोई आपको न जानता होता, सरदार साहब, तो यही समझता कि आपके स्वरके पीछेसे भय बोल रहा है।" वह सीधा बैठ कर बोला, "जरा राठौरोको मुकाबलेपर आने तो दीजिए। अभी तो यही निश्चय होना शेष है कि नाश भाटियो और मोहिलोका होगा या राठौरोका होगा। जिस न्यायकी आवश्यकतासे अधिक कीमत देनी पडती है वह फिर सामाजिक परपरा बनकर अपनी कीमतसे भी कही ज्यादा रग देता है। इसीलिए न्यायकी कोई भी कीमत ज्यादा नही होती।"

सिर नीचा किये मोहिले सरदार उठ गया। उसने भाटी सरदारके सिर पर अपना हाथ रखा। फिर वह बड़बड़ाया, "न जाने प्यारको तर्क कहाँसे मिल जाते हैं।"

जब मोहिले सरदार नजरोंसे ओझल हो गये, तो भाटी सरदारने मेघराजकी ओर मुसकराकर देखते हुए कहा, "हाँ तो, मैं कह रहा था कि मुझे इतना गरिष्ठ जलपान करनेकी बिलकुल भी आदत नहीं है, भैया। तुम्हे कष्ट न हो, तो ...."

मेघराजने झपटकर स्वयं थाल उठा लिये और बोला, "क्षमा कीजिए। दूसरा समय हो गया है। अब आप जलपान नहीं, भोजन करेंगे।"

मेघराज चला गया और भाटी-सरदारने कल्पनाओंके जाल बुनने आरंभ किये। उन कल्पनाओंके जालमें दो गोरे और कोमल हाथ थे, जिनके सामंजस्यसे किसी अत्यंत सुंदर, स्वच्छ और निष्कपट प्रेमसे पूरित मुखकी रचना होती थी।

मोहिले सरदारने वधूके लिए भेजी गई राठौरोंकी पोशाकको स्वयं अपने हाथोंसे संदेशवाहकोंको वापस करते हुए कहा :

"राठौरपतिसे कहना : जब हमारी बेटीकी मँगनी उनके बेटेसे हुई थी, तब हमने केवल दोनों कुलोंका सम्मान देखा था। लेकिन वह हमारी भूल थी। आज हमारी बेटी बड़ी हो गई है। मंदौरका राजकुमार भी बड़ा हो गया है। उस समयसे आज स्थिति बदल गई है। हमारा विचार है कि दोनों ही कुलपतियोंको फिर एक बार इस संबंध पर विचार कर लेना चाहिए, और इस विचारमें वर और वधूका आपसी लगाव प्रमुख है। हम अपनी बेटीका राजनीतिक विवाह नहीं करना चाहते।"

मंदौरके संदेशवाहक हक्केबक्के रह गये। एक बार उन्होंने मोहिलोंके सरदारको आश्चर्यकी मुद्रासे देखा-भाला और फिर अपना लाया हुआ सामान समेटने लगे। किंतु काफ़ी तत्परतासे यह काम करते हुए भी उनकी दृष्टि

भाटियोंके उन डेरोंकी ओर उठ जाती थीं, जहाँ मोहिलोंके नये मेहमान टिके हुए थे। उनके मस्तिष्क इस अचानक परिवर्तनका रहस्य भी साथ ही साथ उतनी ही तत्परतासे सोचनेमें लगे हुए थे। औरीतमें इससे आगे क्या होता है इसका समाचार सर्दार तुरत पहुँचता रहे, यह प्रबंध करके जाना क्या बुद्धिमानी नहीं होगी?

वे लोग इसका प्रबंध करके गये। पूरन नामका एक ब्राह्मण इसके लिए तैयार हो गया।

× × ×

एक सप्ताहके भीतर ही भीतर औरीतमें मंगलसूचक चँदोवे तन गये। अतिथियोंकी खातिरदारी अब और भी निकटतासे होने लगी। इस संबंधसे सब प्रसन्न थे, सब सुखी थे। कोरमके उछाहका तो अंत ही नहीं था। सारे औरीतकी कन्याएँ औरीतकी बड़ी हवेलीमें एकत्र हो गई थीं।

वृद्ध मोहिले सरदार चुपचाप अपना इंतजाम करते घूम रहे थे। उन्हें बेटीका दहेज देना था। उसके लिए उन्होंने दिनरात एक कर दिया। किंतु जब मेघराजने वह सब सामान अपनी माँके सामने रखा, तो वह नाकभौं-सिकोड़कर बोली, "बस! क्या यही सामान मेरी बेटीके दहेजमें दिया जायगा? मेघराज! मेरी तो एक ही बेटी है।"

मोहिले सरदारने कहीं पाससे ही इन वचनोंको सुना। वह सीधा खड़े हो कर बोला, "घबराती क्यों हो? देखना तो, मैं अपनी बेटीके दहेज़ में क्या-क्या दूँगा! इतना दूँगा कि आज तक किसीने नहीं दिया।"

और औरीतकी कन्याओंने कोरमदेवीको रत्नाभूषणोंसे सजा दिया। बाहुओंमें बाजूबन्द पहनाते हुए किसीने परिहास किया "कोरम, इन बाहुओंको पत्थरके गलेमें भी डालोगी, तो वह पानी हो जायगा।"

सुनकर कोरमदेवीने उन बाहुओंमें अपना मुँह छिपा लिया।

फिर एक दिन शुभ घड़ीमें बापने बेटीके हाथोंमें हलदी लगा दी। औरीतका वायुमंडल जयजयकारोंसे गूँज उठा।

ससुरालकी हवेलीसे अन्तिम विदा लेकर भाटी सरदार बाहर निकला। आगे-आगे थे मोहिले सरदार और मेघराज। बाहर निकलकर भाटी सरदार ने मुँहपरसे बनावटी फूलोंका रत्नजटित आवरण हटा दिया। तब वृद्धने कहा, "सामने देखो, कुँवर जी। यह मेरी बेटीका दहेज है।"

भाटी सरदारकी दृष्टि ऊपर उठी और वह उस दहेजको देखकर चकित रह गया। सीधी कतारोंमें लगभग दस हज़ार मोहिले नौजवान हाथोंमें नंगी तलवारे लिये खडे थे।

जमाईकी ओर बिना देखे ही मोहिले सरदार बोला, "ये दस हज़ार तलवारे तुम्हारी है, कुँवर जी। जो आदमी इन्हें लिये खड़े है ये पूगल तक इन्हें पहुँचाने जायँगे। जब मेरी बेटीका दहेज ठिकाने पर पहुँच जायगा, तब ये सब वापस आ जायँगे।"

जयतुग बिगड उठा। "यह हमारा अपमान है, सरदार साहब!"

"जो अपने जमाईका अपमान करता है उसका अपमान पहले होता है, राजा साहब," मेघराजने कहा। "हमने निश्छल भावसे यह दहेज़ दिया है। आप भी निश्छल भावसे इसे ग्रहण कीजिए।"

मोहिले सरदारने घोषित किया, "जब तक एक भी मोहिला जीवित रहेगा, मरुभूमि पर भाटियोंका रक्त नही गिर सकता। हमने भाटियोंसे अपनी बेटी व्याही है। हमने उन्हें अपना रक्तदान दिया है। अब यह लौट नही सकता।"

"हम वचन देते हैं कि हम उस रक्तकी रक्षा करेंगे," भाटी सरदारने कहा। "दहेज़ भी अस्वीकार करनेका अधिकार हमें नही है। किंतु हमारे साथ ये तलवारेही जायँगी, इन्हें ले जाने वाले नही। अभी भाटियोमें इतना दम है कि तलवारें उठा सकें।"

"कुँवरजी, इस तरह ये तलवारे कभी पूगल नही पहुँचेगी," मोहिले सरदारने चेतावनी दी।

"पहुँचेंगी, ज़रूर पहुँचेगी, सरदार साहब!" भाटी सरदारने कहा।

"आप जरा सोचिए तो । देखनेवाले कहेंगे कि दहेजमे मिली तलवारें भाटिये दूसरोके कन्धोपर रख कर चल रहे हैं । हमने विवाह किया है अपनी भुजाओ के वल पर, आपकी भुजाओके वल पर नही ।" फिर वह जयतुगकी ओर घूमकर वोला, "राजा साहव, इन तलवारोको साथ ले जानेका प्रवध कीजिए ।"

मोहिले सरदार हताश हो गया ।

अगले दिन सुवह रेगिस्तानके अतरसे आनेवाला वह काफिला औरीतसे एक और खूवसूरत साथीको अपनेमे मिलाकर जव कूच करने लगा, तो भाटी सरदारको अपनी पगडीका ध्यान आया । पगडीका नही, उस व्यक्तिका ध्यान आया, जिसने उसके व्यक्तित्वसे अनजान होते हुए भी उससे पगडी वदल ली थी । किंतु वहुत खोज करानेपर भी मेघराजका कही पता नही चला ।

औरीत दो कोस पीछे छूट गया था और भाटी सरदार कुछ दिनोके इन नवीन मववोको दिल और दिमागमें समेटे साँडनीपर वैठा जा रहा था । काफिलेके वीचमे कोरमदेवीका डोला एक ऊँटनीकी पीठपर वँधा था । और वह सुखद स्वप्नोके निश्चित चरितार्थके प्रभावसे हिलती-डुलती और सोती हुई आगे वढ रही थी । लेकिन काफिला कुछ दूर आगे चलकर रुक गया ।

सामने लगभग पचास ऊँटोकी एक पक्ति रास्ता रोके खडी दिखाई दे रही थी ।

जयतुग पास आ गया । भाटी सरदारने कहा, "कौन हो सकते है ?"

"हो सकते हैं, तो दोस्त हो सकते है । दुश्मन होगे, तो थोड़ी देर वाद ही वे ना-होत के वरावर हो जाएँगे," जयतुगने कहा ।

काफिला फिर आगे वढा । अव दिखाई देनेवाले साफ दिखाई देने लगे । अचानक भाटी सरदारके मुँहसे निकला "मेघराज ।"

मेघराजकी ऊँटनी आगे बढकर ठीक भाटी सरदारके सामने खड़ी हो गई। मेघराजने न जुहार की और न वह ऊँटनीसे उतरा।

सरदार सादू हँस पडा। "तो तुम कन्नी काटकर यहाँ आ छिपे थे। मुँह कैसा बना रखा है, जैसे लड़ने आये हो!"

"हम औरीत वापस नही जाएँगे, हमारा निश्चय है," मेघराजने कहा।

"ओह, एक कदम आगे! अच्छा, तो यहाँ बिना पानीके कब तक ठहरे रहोगे?" भाटी सरदारने पूछा।

"हम ठहरे नही रहेंगें," मेघराजने कहा। "हम साथ-साथ चलेंगे।"

"नही," जयतुगने गरजकर कहा। 'हम मोहिलोको अपने साथ नही ले जायँगे।"

मेघराज गभीरताके साथ केवल भाटी सरदारकी आँखोमें आँखें डाले चुपचाप बिना कुछ उत्तर दिये देखता रहा। उनमें कोई आग्रह नही था, कोई याचना नही थी उनमें। निश्चय था, कठोर निश्चय, जिसके सामने तर्क नही चलते।

सरदार सादूने पूछा, "तुम हमारे साथ क्यो जाना चाहते हो?"

मेघराजने कारण बताया "यहाँसे पाँच कोसकी दूरी पर, तीन दिनसे दस हजार राठौर सैनिक हाथोमे नंगी तलवारें लिये खडे हैं। हमे यह मालूम हो चुका था। इसीलिए हमने दस हजार मोहिले तैयार किये थे। लेकिन आपने नही माना। ये पचास साथी मेरे अपने हैं। इनमेंसे किसीको भी एक सैनिकका वेतन नही मिलता। ये घरसे सिर पर कफन बाँध कर चले है। अब ये औरीत वापस नही जायँगे।"

कुछ देर तक भाटिये स्तब्ध रहे। फिर सिर उठाकर भाटी सरदारने अपनी ओर निरतर ताकते हुए मेघराजसे कहा. "चलो!"

मोहिलोमें हर्षकी लहर दौड़ गई। मेघराज दौड़कर बहनके डोलेपर पहुँचा। परदा हटाकर उसने बहनको अपनी उपस्थिति जतानी चाही। किंतु वह सो रही थी। मेघराजने परदा ज्यो-का-त्यो गिरा दिया।

× × ×

काफिला आगे बढा। भाटियोके ऊँट उस ओर अविराम गतिसे चलने लगे, जहाँ दस हजार राठौर अपनी खूनकी प्यास बुझानेके लिए चौकन्ने खडे थे।

राठौरोसे एक कोसके अतर पर भाटियोने अपना पडाव डाल दिया। कई वार मेघराजने सोचा कि वहनको अपनी शक्ल दिखा दे, किंतु जयतुग और भाटी सरदारके साथ व्यूह-रचना करनेमे फिर वह इतना तन्मय हो गया कि उसे वहनका भी ध्यान नही रहा।

रात आई और सरदारने अपने साथियोको पूर्ण विश्राम लेनेके लिए कहा। दो सौ गज आगे काफिलेकी मुख्य चौकी वनाई गई, जहाँ जयतुग स्वय जाकर डट गया। व्यूहके ठीक वीचमें कोरमदेवीका डोला रखा गया।

अँधेरेने मरुभूमि पर अपना काला आवरण डाल दिया। रातके पहर अपनी करवटें लेने लगे। फिर चाँद निकला और उसकी पहली किरण के साथ ही साथ सादू अपने स्वप्नोकी रानीके डोलेके निकट पहुँच गया। उसने डोलेका परदा उठाया और वोला "अव जाग जाओ। थोडी देरमे सुवह हो जायगी।"

"मै तो जाग ही रही हूँ, कथावाचक जी," कोरमदेवीने उत्तर दिया।

"जाग रही हो! क्यो?" सादूने पूछा।

अफसोस कि नारी अपने स्नेहको कभी कवूल नही करती। सादूको भी निराश होना पडा। कोरमदेवीने उत्तर दिया, "मै दिन भर सोती जो रही हूँ। पर कथावाचक जी क्यो जाग रहे है, जरा सुनूँ तो?"

"मुझे चाँद निकलनेकी आशा थी," सादूने उत्तर दिया। "अव चाँद निकल आया है, और मै तुम्हारा मुँह चाँदके सामने करके देखना चाहता हूँ।"

"क्यो, तुलना करोगे, जैसे सव करते है?" कोरमदेवीने पूछा।

"नही," सादूने उत्तर दिया। "तुलना करने योग्य वहाँ कुछ नही है।" फिर उसका स्वर अत्यत धीमा हो गया। "मै उस स्वरकारको देखना

चाहता हूँ, जो चिकके पीछेमे वीणा बजाता था, उस स्वामिनीको देखना चाहता हूँ, जिसके सेवकोंने तलवार और ढालका उपहार दिया था—और इतना स्पष्ट देखना चाहता हूँ, जितना कि चांद दिखा सकता है।"

कोरमदेवीनें अपने अलकारोंसे भरे हाथ डोलेके बाहर कर दिये। "ये ही थे न वे सेवक ?"

चद्रमाकी किरणें हलदीसे पीले उन हाथोपर तडपकर पडी और सादू सरदारने उन्हें झटसे पकडकर चूम लिया। फिर उन्हें अपने गलेसे लगाते हुए उसकी दृष्टि ऊपर चाँदकी ओर उठी, जो वस्तु-वस्तुको शीतलता प्रदान कर रहा था। वह बोल उठा, "देवी, कोरम, नरको अधीर करके नारी कभी-कभी उसे खो बैठती हैं। मुझे अधीर न बनाओ। अपना मुँह बाहर निकालो। मैं उसे.. " सहसा सरदार सादू चौंककर उठ खड़ा हुआ।

चाँदकी ओर दृष्टि उठाते हुए उसकी नजर बालूपर दूरतक फैली हुई चाँदनीपर निमिष भरके लिए दौड गई थी। उसकी अभ्यस्त आँखोने दूर चाँदनीपर इसी ओरको बढता हुआ एक काला धब्बा देख लिया था।

अपने प्रियतमकी अधीरताको शात करनेके लिए जब कोरमदेवीने अपना मुँह बाहर चाँदनीमें निकाला, तो वह दूर जा चुका था। उसका लक्ष्य वही काला धब्बा था, जिसे उसने सशयपूर्ण दृष्टिसे देखा था।

कोरमदेवी आशकासे भ.ी डोलेसे बाहर निकलकर खड़ी हो गई। वह देखती रह गई। यहाँ तक कि उसकी आँखें विस्तृत चाँदनीमें भी अपने पतिको नहीं खोज सकी।

एक पेड़के सहारे जयतुग घोडेकी जीन बिछाये आरामसे सो रहा था। पंचकल्याण जाग्रत अवस्थामें चौकन्ना खडा था और उसकी रास जयतुङ्गके हाथोमें लिपटी हुई थी। भाटी सरदार उसे पार करके पेडकी आडमें छिप गया।

उसने आनेवालेको पहचान लिया। वह शखला महाराज थे। जयतुङ्गके पास आकर वह कुछ देर खडे हुए उसे पहचानते रहे। फिर उनका हाथ अपनी

कमरपर गया। साथ ही सरदार सादूका हाथ भी अपनी तलवारकी मूठ-पर पहुँच गया।

लेकिन फिरशखला महाराज लौट पडे। पंचकल्याणने पहले रास हिलाकर जयतुङ्गको जगाना चाहा। फिर भी जब वह कलियुगी कुभकर्ण नही जागा, तो उसने अपना खुर जयतुङ्गकी छातीपर रख दिया।

जयतुङ्ग राम-राम करता उठ खडा हुआ। "कहो, बेटा," उसने पच-कल्याणको लक्ष्य करके कहा, "क्या लडाई शुरु हो गई ?"

हिनहिनाकर पचकल्याणने अपना मुंह जाते हुए शखला महाराजकी ओर किया। किन्तु तबतक वह बहुत दूर जा चुके थे।

भाटी सरदार पेडकी आडमे निकल आया। "राजा साहब, चौकीदारी इसी तरह होती है ?"

जयतुङ्ग हडबड़ाकर उठ खडा हुआ। "और नही तो कैसे होती है ? हम विश्राम कर रहे थे और हमारा बेटा जाग रहा था।"

सरदार सादू हँस पडा। "जी हाँ, अभी आपका सोता हुआ सिर राठौरोमें पहुँच जाता।"

'आप अपना काम कीजिए, कुँवरजी," जयतुङ्गने कहा। "हम और हमारा पुत्र अपना काम खूब अच्छी तरह जानते हैं।"

लेकिन भाटी सरदार जिसे अपनी प्रतीक्षामें निहारता छोड आया था, फिर उसके पासतक नही जा सका। उसने सोते हुए भाटी वीरोको जगाया। दुश्मन सचेत हो गया है। भाटियोको अविलम्ब सचेत हो जाना था।

सुबह हो गई। राठौरोकी ओरसे एक सदेशवाहक अरिजकवलका पत्र लिये जयतुङ्गके सामने आकर साडनीसे उतरा। उस पत्रमें था " ..राठौर दस हज़ार है, भाटी सात सौ हैं। लेकिन हम सख्याका लाभ नही उठाएँगे। एक आदमी एक आदमीसे द्वद्व करेगा। जीतनेवालेको विश्रामका अवसर दिया जायगा। फिर उसे दूसरा द्वद्व लड़ना होगा। यह

सिलसिला तब समाप्त होगा, जब या तो दस हज़ार राठौर और तीन सौ गखला समाप्त हो जाएँगे या सात सौ भाटी..."

पत्र सहित दोनो हाथ हवामे उठाकर जयतुङ्गने एक लबी अँगड़ाई ली और सदेशवाहकसे कहा "अजी, जाकर अपने युवराज साहबसे कहना कि हमारा अमल ख़त्म हो गया है। थोड़ा-सा भिजवा दें, ताकि हम उनके प्रस्ताव पर अच्छी तरह अमल कर सकें।"

सदेशवाहकने नकेल फिराई और जयतुङ्गका विचित्र व निर्भीक सदेश लिये राठौरोकी ओर दौड गया।

पत्र भाटी सरदारके पास पहुँच गया। पढकर वह बुदबुदाया "अफ-सोस कि यह वीर युवराज कभी राजा नही होगा!"

राठौर युवराजने ढेर-सी अफ़ीम जयतुङ्गके पास भिजवा दी और उसे अमल करनेके लिए एक पहरका समय और दिया गया। अमल करनेके बाद दूसरा अमल करने तकके लिए पाहुओका राजा सो गया।

× × ×

दूसरे पहरकी चिलचिलाती धूपमें युद्धके लिए तत्पर भाटियो और राठौरोका द्वद्व-सग्राम आरभ हुआ। सबसे पहले वीर गखला महाराज अपना खड्ग घुमाते हुए जयतुङ्गके सामने आये। जयतुङ्गने हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

गंखला महाराजने कहा, "उस दिन मरुभूमिमें क्षणभरके लिए तुम्हें देखा था या आज देख रहा हूँ। तूफान न आ जाता, तो उसी दिन निबटारा हो जाता। क्या मालूम था कि न्यायमें समय भी अन्तर नहीं डाल सकता।"

"लेकिन तलवार डाल देती है," जयतुङ्गने न्यायके नामसे चिढकर कहा। "वार सँभालो, महाराज..." और खड्ग बज उठे।

निमिष मात्रमें गंखला महाराजका सिर सारे मान-अपमान और न्याय की भावना सजोये, बालूके कणोमें लुप्त हो गया।

जयतुङ्ग चिल्लाया . "आगे बढो, और कौन आता है?"

राठौरोकी पक्तियोमे सन्नाटा छा गया। शखलासे वढकर कोई नही था।

"अच्छा, मैं ही आता हूँ," और जवतक भाटी सरदार उसके निश्चयको समझे वह दोनो हाथोमे तलवार घुमाता हुआ राठौरोकी पक्तियोके वीचमे घँसा चला गया। उसकी कल्पनाएँ जाग उठी थी!

"आगे वढ़ो!" भाटी सरदारने अपने साथियोको ललकारा और द्वद्व युद्ध वडे पैमानेपर आरभ हो गया। एक-एक राठौर, एक-एक भाटी। एक-एक हाथमे मोहिलोके दहेजकी तलवारे और एक-एक हाथमें भाटियो-की तलवारे।

एक घड़ीके भीतर-भीतर अपने अपमानकी प्यास वुझानेके लिए आये तीन सौ शखलाओमेंसे एक भी जीवित नही वचा। एक भी भाटी विश्राम करनेके लिए नही लौट रहा था। वे वाजी जीत लेते थे और तुरत दूसरी पकड़ लेते थे।

भाटी सरदार डोलेके पास जा खडा हुआ। "कोरम!" उसका स्थितिके कारण कठोर होता हुआ स्वर निकला। "कोरम, सूरजकी रोशनीमें ही अपना मुँह दिखा दो।"

डोलेका परदा कोरमने जल्दीमे खीचकर फाड दिया। उसमेसे उसने देखा भाटी सरदार रणके सुन्दरतम वेपमें, दोनो हाथोमे एक-एक लवी तलवार सँभाले, घोडेकी पीठपर वीर मुद्रासे वैठा एकटक उसकी ओर देख रहा था।

देखते ही भाटी सरदारकी भौह आश्चर्यसे चढ गई और उसके मुँहसे वेतहाशा निकला: "सुन्दर!" साथ ही उसका घोडा उछला और सरपट राठौरोकी पक्तिकी ओर तीरकी तरह छूट गया।

कोरमदेवी दूसरी वार डोला छोड़कर वाहर निकल आई।

कुछ देरमें अपने मृत स्वामियोको पीठपर लिये घोड़े लौटने शुरू हुए। कोरमने सेवामें खडे एक भाटी सेवकको सकेत किया और वह एक घोडेको

पकड़कर अपने साथ लाया। अश्वकी पीठपर हाथ-पैर लटकाये पड़े मृत वीरकी पोशाकने ही कोरमको आकर्षित किया था। वह मोहिलोंकी पोशाक थी। सेवकने शवको उतारा और उसका मुँह ऊपर किया।

"भैया!" और कोरम एक दहाड मारकर मेघराजके शवपर गिर पड़ी।

तवतक भाटी सरदार राठौरोंकी पक्तियोंको तितर-वितर करता हुआ दूसरी ओर निकल गया था। वहाँसे उसका अश्व फिर लौटा। 'जय भवानी' के रणघोषके साथ वह एक वार फिर उन पक्तियोंके वीचमें अपनी प्रियतमाकी दिशा लक्ष्य करके वढा और वीसियो राठौरोको वाल चटाता हुआ दूसरी ओर निकल गया।

"सरदार आ रहे हैं, देवी," सेवकने झुककर अत्यत सहानुभूतिपूर्ण स्वरमें कहा, और कोरमदेवी पतिका स्वागत करनेके लिए खडी हो गई। भाटी सरदारका अश्व पास आकर रुका और उसने कोरमदेवीका हँसता आ मुँह देखा। किन्तु साथ ही उसकी दृष्टि मेघराजके शवपर पडी और उसकी आँखें कठोर होकर ऊपर उठ गई "जय भवानी!"

कोरम देख रही थी। सूरजकी किरणोंसे आँखमिचौलीका खेल खेलती हुई भाटी सरदारकी लपलपाती हुई तलवारें, तीव्रगामी रथके पहियोकी तरह घूमती हुई, फिर शत्रुके सैन्य शरीरमें धँसती चली गई और उसके देखते-देखते फिर वाहर निकल आईं।

लेकिन तवतक कोरमदेवीके सामने एक और शव आ पडा था। उस शवके पास पचकल्याण आँखोमें विषम जगत्की समस्त करुणाएँ लिये खड़ा था और उसके नेत्र गरमीके कारण लाल हो गये थे।

उसके पास ही भाटी सरदारका अश्व रुका, और कोरम इसवार गंभीर थी। वह पतिकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिये एकटक उसकी ओर देख रही थी।

सरदार साढूने एकवार पचकल्याणपर, एक वार जयतुङ्ग पर, और एक वार अपनी सवसे वडी प्रशसकपर निगाह डाली और उसकी आँखोमें

रणका खून उतर आया। वह चिल्लाया, "कोरम, इस कथाको याद रखना। जय भवानी!"

राठौरोंके सामने पहुँचकर सादूकी तलवारें उठ गईं। "बंद करो, बंद करो . बंद करो इस खूनकी होलीको।"

धीरे-धीरे करके युद्ध डूबते हुए सूरजके साथ बंद हो गया। सादूका घोडा मचल रहा था। सरदार चिल्लाया, "अब युद्धका निबटारा होगा। कहाँ है अरिनकवल?"

अरिनकवल तुरन्त सामने आ गया। हल्की-हल्की मूछें, रोबदार राजपूती चेहरा, मुश्की घोडा, भाटी सरदारने उसे देखा और जयतुङ्गकी सौम्य मूर्ति उसके सामने घूम गई। वह जयतुङ्ग, जो मृत्युसे छेडखानी करके जीना जानता था और उसी खेलमें उसने अपने जीवनको होम दिया था। वह जयतुङ्ग जो हजारोंकी सख्यामें अडे हुए शत्रुओंके बीचमें दोनों हाथोंसे तलवार चलाता हुआ कल्पनाओंके ससारमें विचरण करता था। उस जयतुङ्गकी याद करके भाटी सरदार चिल्ला उठा "अब निबटारा होगा।"

"स्वागत है," अरिनकवलने कहा। "प्रणाम भाटी, सरदार। मैं चाहता हूँ तुम थोडी देर विश्राम कर लो? हमारे हजारों जवान तुम्हारी तलवारके घाट उतर चुके हैं। तुमने अकेले ही अपने साथियोंकी सख्या पूरी कर ली है। हम थके हुए शेरको मारना नहीं चाहते।"

"जीता रहा, तो इस लोकमें, मर गया, तो स्वर्ग लोकमें मैं तुम्हारी दिलदारीकी कहानी सुनाऊँगा, युवराज। किन्तु निबटारा अभी होगा, इसी क्षण होगा। खड्ग उठाकर पहला वार करो," भाटी सरदारने कहा।

"यह नहीं होगा, भाटी सरदार। तुम थके हुए हो। यदि लडना ही चाहते हो, तो पहला वार तुम करो," अरिनकवलने कहा।

इस पहल-पहलमें वीर राठौरने भाटी सरदारको कुछ साँसोंका विश्राम दिया। इसके बाद दोनोंकी तलवारें एक साथ उठी, और बिना कुछ कहा-

पोहके एक-दूसरेके सिरोंपर विजलियाँ वनकर गिर पड़ी। भाटी सरदारकी वाहुओंमें केवल इस खेलका ही दम शेष रह गया था।

दूर खड़ी कोरम पछाड़ खाकर मरुभूमिकी रेतपर गिर पड़ी।

जब कोरमदेवीको चेतना आई, तो सब ओर शांति छा गई थी। चाँद निकल आया था और उसकी किरणें उसके अलंकृत हाथोंपर पड रही थीं। नीचे नरम बिछौना था और ऊपर वह आकाश था, जहाँ उसकी कल्पना अपने प्रिय नायकको खोज रही थी। वह तडपकर उठ बैठी। फिर खडी हो गई।

केवल पचास जीवित भाटी उसके चारो ओर हाथ बाँधे खडे थे। कराहट और दर्दके स्वर चारो ओर हवामें गूँज रहे थे। कोरमने चिल्लाकर कहा, "लाओ, एक तलवार दो!"

एक सेवकने अपनी तलवार प्रस्तुत कर दी।

कोरमने दायें हाथमें तलवार लेकर एक वार आकाशके चाँदको देखा और उसकी तलवार जैसे उस चाँदको चिढानेके लिए उठी। फिर एक किरण की तरह उसके बायें हाथ पर टूटी और वह हाथ गदीले विछौनेपर रक्त चुहचुहाता हुआ उसके शरीरके अलग होकर गिर पडा।

कोरमने धीमे किन्तु स्थिर स्वरमें कहा, "यह हाथ मेरे ससुरजीको देना, और कहना कि उनकी वधू उनके पैर छूनेके लिए पूगल नही आ सकी, लेकिन उसका चिह्न अवश्य आना था।"

फिर उसने सेवकको संकेत किया और उसने तलवार कोरमके हाथसे पकड़ ली। दूसरा हाथ आगे करके कोरमने कहा, "इसे भी, इसे भी, जल्दी!"

सेवक हक्कावक्का वना खड़ा रहा।

कोरमने कहा, "जल्दी करो! फिर मुझे मूर्च्छा आजायगी।"

और कोरमदेवीका दूसरा हाथ भी कटकर गिर पड़ा, थोड़ी देर पहले जिसका पीलापन चाँदनीके रंगको शरमा रहा था।

"यह हाथ मोहिलोके चारणको देना। उससे कहना कि उसके देशकी बेटी ऐसी थी। अब ..अब चिता लगाओ " और वह मूच्छित होकर खूनमें सने रेतके गदेले पर गिर पडी।

एक पहर बाद पतिके शवको गोदमें लेकर कोरम अग्निकी शिखाओमें खो गई, क्योकि वह एक ही साथ कुंवारी थी, वधू थी और विधवा थी, और ससार कभी इतनी विचित्रताएँ एक साथ नही सभाल पाता।

पूगलके वृद्ध रावने उसके हाथको जलवा दिया और उसके स्थानपर एक झील बनवाई, जिसका नाम कोरमदेवीकी झील है। सन् १४०७ ई० में निर्मित यह झील आज भी गरमीके मारे राजपूतोको शीतलता प्रदान करती है।

स्नेहकी शर्त

प्रसिद्ध मुगल आक्रमणकारी वावरके छक्के छुड़ा देनेवाला महावीर राणा साँगा शायद कभी इतिहासमें याद न किया जाता, शायद कभी मुग़लोंका वंश हिंदुस्तानमें न फलता-फूलता, यदि उसीकी माँ झाली रानीसे उत्पन्न पृथ्वीराज स्नेहकी एक बडी विचित्र वाजीमें अपना सर्वस्व न लुटा बैठता, तब शायद दिल्लीके पृथ्वीराज चौहानके नामको लोग पृथ्वीराज सीसोदियाके नामसे याद किया करते ।

यह वाजी सोलकी सरदार शिवरतन सिंहकी कन्या तारावाईके साथ लगी थी ।

शिवरतनसिंहके पूर्वज अन्हिलवाड़ाके प्रतापी राजा थे । मध्यभारतसे निकाले जाकर वादमें थोदा रियासतसे भी अफगान सरदार लिल्लाह द्वारा भगा दिये गये थे । थोदा शिवरतनसे छीना गया था । अव वह अपने परिवार सहित वडनौरमें आ गये थे । थोदाके छिन जानेकी कलक शिवरतन-सिंहके मनमें काँटेकी तरह चुभ रही थी ।

परिवारके सघर्षोंके वीच पली तारावाई सहजमें ही शस्त्र-सचालनमे निपुण हो गई थी । वपौतीकी कलक तारावाईके हृदयमें भी उतर आई थी । इसीलिए एक दिन सहसा राणा रायमलका तीसरा पुत्र, साँगा और पृथ्वीराजका सौतिला भाई, जयमल अपने कुछ साथियोके साथ जव वडनौर पहुँचा, और शिवरतनसिंहसे ताराके पाणिग्रहणकी माँग की, तो तारावाईने कहला भेजा था, "थोदा वापस ला दो, तारा मिल जायेगी । नही तो जो हमारा थोदा हमें वापस लाकर देगा, तारा उसे वरेगी ।"

मेवाडके राजकुमारके सामने मेवाडके शरणागतका यह साहस ! जयमलने चलते-चलते शिवरतनसिंहको चेतावनी दी, "थोदा लेनेके लिए

तुम्हें मेवाडसे भिडना पडेगा, लेकिन इससे भी पहले तारा जयमलकी अंकशायिनी बनेगी ।"

इस विकट अपमानसे शिवरत्नसिंहका अंतर झुलस गया । ताव न रोक पाकर वह बोल उठा, "पहले उसका बाप यह देखना चाहता है कि उस अंकमें कितनी गरमाई है । जो तलवार ताराको ले जायेगी उसकी चमक तो दिखाओ, नन्हें राजकुमार " और तलवारें खिंच गईं ।

कुछ ही देरकी कशमकशके बाद जयमलका शरीर भूमि पर फडफडाने लगा ।

× × ×

हफ्तों तक बाप-बेटी बुर्जपर चढे चित्तौडकी ओरसे आता हुआ पथ निहारते रहे, जैसे पकी फसलपर किसान खड़ा काले-काले मेघोका आगमन निरख रहा हो ।

वे आये । दूरसे उडते हुए रेतके कण दिखाई पड़े । बाप-बेटी जल्दी-जल्दी बुर्जसे नीचे उतरे । सारी गढी क्षणमात्रमें व्यस्त हो गई । फाटक बद कर दिये गये । थोड़ी-सी देरमें जीवनका मोह छोडकर बाँके तैयार हो गये ।

तबतक आनेवाली सेना फाटकके सामने पहुँच चुकी थी । उनमेंसे एक ने आगे बढकर बुर्जपर मुस्तैद खड़े प्रहरीसे कहा, "अरे, तुम लोग कैसे आदमी हो कि आनेवालेको देखकर दरवाज़ा बन्द कर लेते हो !"

"तुम लोग कौन हो, क्यो आये हो ?" प्रहरीने आशकित वाणीमे पूछा ।

"देखते नही हो, मेवाडके युवराज राव पृथ्वीराजजी खडे है ।"

"रावजीको हमारी जुहार । पर पहले बताओ, रावजी क्यो आये है, तब द्वार खुलेगा ?" प्रहरीने तनकर कहा ।

"क्यो आये है, कैसी बाते करते हो ? अरे, ऐसे ही आये है । अब तुम्हे क्या बताया जाये कि कैसे आये है ? बोलो, खोलते हो कि नही ?"

शिवरत्नसिंह ओटमें प्रहरीके पास ही खडे थे । प्रहरीने उनकी ओर उत्तरके लिए देखा । उन्होंने कहा, "कहो कि ऐसे ही आये है, तो अकेले गढी-में आ जायँ, सेना बाहर ही छोड दें ।"

प्रहरीने वही बात दोहरा दी।

स्वामीसे पूछकर आगन्तुकने उत्तरमें कहा, "अच्छा, अच्छा, अकेले ही आ जायेंगे। हम कोई तुम्हारी मढैयाको खा नही जायेंगे।"

पृथ्वीराज और उनके साथ उनका चारण गढीके भीतर ले लिये गये। सेनाने गढीके बाहर ही पडाव डाला।

जब तक मेवाडका यह प्रसिद्ध योद्धा स्नान-ध्यानसे छुट्टी पाकर शिवरतनसिंहकी बैठकमे न आ गया, सबके दिल धक्धक् करते रहे। आते ही शिवरतनसिंहने फलाहार अपने हाथसे प्रस्तुत करते हुए पूछा—"कहिए तो रसोई अभी उपस्थित की जाये?"

इसका अर्थ था कि यदि पृथ्वीराज रसोईको हाँ कर लेते है, तो शिवरतनका अन्न खानेको हाँ कर लेते है, और अन्न ग्रहण कर लेनेके अर्थ है कि पृथ्वीराज कम-से-कम भाईका बदला लेने नही आये है।

"रास्ते भर ये लोग हमें चराते रहे है, इसलिए अन्न तो अभी नहीं पचेगा।"

शिवरतनसिंहकी कनौतियाँ खडी हो गईं, कि अन्नका नाम अपने मुँहसे लेते ही पृथ्वीराजको कुछ भूखका अनुभव हुआ और उन्होने स्वय ही कहा, "लेकिन आपके आग्रहको टाला भी कैसे जाये? खैर, इसके बाद रसोई जीमेंगे।"

काला बादल बिल्कुल साफ हो गया था। किसान अपनी मूँछो ही मूँछोमें हँसा।

रसोई जीम लेनेके बाद बात चली। जयमलका जिक्र न तो अब तक कही आया था, और न अब आ रहा था। पृथ्वीराजने कहा, "रावजी, सुना है आप बहुत अच्छे गुरु भी हैं। हमने एकसे नही, गाँव-गाँवसे यह बात सुनी है।"

शिवरतनसिंह बातकी तह तक पहुँचकर जरा कुलमुलाये। "मैं जो

कुछ जानता हूँ अपने साथियोको सिखा देता हूँ, किन्तु अपनी प्रसिद्धिकी बात मैंने पहलेपहल ही श्रीमान्‌के मुखसे सुनी है ।"

"बहुत विनम्र हैं आप," पृथ्वीराजने ज़रा गरदन टेढी करके कहा । फिर मुसकराकर बोले—"जी तो यह चाहता है कि इस गढीमें कुछ दिन रहकर हम भी आपसे कुछ सीखें । आखिर हमारी उमर ही क्या है, यही कोई बीस वर्ष । आप .."

शिवरतनसिंह पानी-पानी हो गये । जिसने सारे मेवाडको एक सूत्रमें बाँध रखा था, जिसके नामसे मेवाडकी सरहदे काँपती थी, वह पृथ्वीराज और बडनौरके गढपतिसे कुछ सीखे, इससे बडी विडबना और क्या हो सकती थी ? शिवरतनसिंह बोले, "यदि बकरी शेरको कुछ सिखा सकती है, तो सेवक तैयार है । जो कुछ युवराज कहना चाहते है, उसे खोल कर कहनेकी कृपा की जाये, तो सेवक बडा अनुगृहीत हो ।"

पीठ शिवरतनसिंहकी ओर करते हुए महास वाणीमें पृथ्वीराजने कहा—"हमें आप यह सिखाइये कि किस प्रकारके शब्द प्रयोग करके आपसे आपकी लड़की माँगी जाये । हमने सुना है कि जो आपसे आपकी लडकी माँगता है उसकी छातीमें आपकी आधी तलवार घुस जाती है ।"

शिवरतनसिंह अचानक चौक पडे । एक क्षण सोचकर उन्होने कहा, "यही बात थी, जिसे श्रीमान्‌ने एकसे नही, गाँव-गाँवके मुँहसे सुनी है ?"

"नही ।" पृथ्वीराजने कहा, "गाँव-गाँवसे हमने सुना है कि आपने ताराबाईको तो सब कुछ सिखा दिया है । हमने सोचा कि कुछ हम भी सीखे, तो फिर बराबरकी सतह पर आकर हम वह हाथ पकडनेका दावा कर सकते हैं ।"

अब शिवरतनसिंहकी जानमें जान आई । तो अन्तमें वह विवाहका प्रस्ताव था । सारा भय दूर होते ही शिवरतनसिंहका जी चाहा कि पृथ्वीराज-को उठाकर अपनी छातीसे लगा लें । प्रकटमें उन्होने कहा, "युवराज, प्रत्येक

लड़कीके बापको अपनी लड़की किसी-न-किसी को देनी ही होती है । मुझे यह सौभाग्य प्राप्त है कि जूतोंके तले घिसनेसे पहले ही भविष्य मेरे घर आया है । माँगनेवालेकी छातीमें वह तलवार नही घुसी थी, जंगलकी भयभीत हिरणीका सींग घुसा था । जब उसे बचनेकी राह न रही, तो वह क्या करती ?"

पृथ्वीराज एकदम घूमकर खिलखिला उठे । "तब तो हमारा पक्ष प्रबल है ।"

"निश्चय ही आप हमें सबसे अधिक प्रिय हैं, युवराज । किंतु कुमारीकी एक शर्त है, और वह यह कि हमें अपनानेवाला भी हमसे उतना ही स्नेह करता है, जितना हम उससे करते हैं," शिवरतनसिंहने कहा ।

प्रसन्न होकर पृथ्वीराज बोले, "यह तो प्रकट ही है कि वह न होता, तो हम क्यों मरहदें छोड़कर बडनौर आते ।"

"ठीक है, युवराज ।" शिवरतनसिंहने कहा, "तो इस स्नेहकी गहराई का प्रमाण है थोदाकी वापसी ।"

"ओह !" पृथ्वीराज भी गंभीर हो गये । "तो आप दोनों पिता-पुत्रीने स्नेहको किसी शर्तमें भी बाँध रखा है । लेकिन हमारा चारण, जो हमारे साथ आया है, कहता है कि स्नेहकी गति और धारा तो अबाध होती है । उसे किसी विशेष नियम और बन्धनमें नहीं बाँधा जा सकता । हमारा भी यही विश्वास है । यदि हमें स्नेह होगा तो हम थोदा क्या आकाशके तारे भी आपके लिए तोड़ कर ला सकते हैं । नही तो स्नेह करनेके लिए कोई किसीको मजबूर नहीं कर सकता, चाहे विवाह हो या न हो । हमारा चारण कहता है कि स्नेहरहित विवाह व्यभिचार होता है ।"

"सेवक युवराजके विचारोंकी कद्र करते हुए नम्र निवेदन करना चाहता है कि हारा जुआरी स्नेहियोंपरसे भी अपना विश्वास खो बैठता है । श्रीमान् यदि प्रयत्न कर सकते हैं, तो दो दिन आगे या पीछे सब समान है । नहीं

तो तारावाई पहले वेटा वनकर थोदा वापस लेगी, फिर वेटी वनकर विदा होगी । उसमे इतना वल है ।"

पृथ्वीराजने कुछ क्षण स्थितिपर विचार किया । फिर सिर उठाकर उन्होने कहा, "रावजी, हम स्नेह करना जानते है । मेवाड जानता है कि हम सच्चे राजपूत है, और राजपूत जैसे अपनी शत्रुता नही भूलता, अपना स्नेह भी नही भूलता । किन्तु यदि हमारे स्नेहपात्र हमारा विश्वास नही कर सकते, तो हमारे पास उनको देनेके लिए स्नेहके अतिरिक्त और कुछ नही है । हम स्नेहकी शर्तमें नही वंधेगे, यह हमारा दृढ निश्चय है । यदि स्नेहवधन हुआ, तो इसके वाद स्थितिके ज़रा भी अनुकूल होते ही हम आपकी इच्छा अवश्य पूरी कर देगे । यदि स्थिति न हुई तो वह आपके सामने देखनेके लिए खुली होगी । तव कम-से-कम हम अपने वचनोके परितापसे स्वय ही तो न जलते रहेंगे, हमारा अतर तो दोषरहित रहेगा । आप इसपर दो घडी सोच सकते है ।"

शिवरतनसिंहको सोचते हुए छोडकर पृथ्वीराज नाहर जैसे कंधोको हिलाते हुए मस्त चालसे वैठकके वाहर चले गये । शिवरतनसिंहके लौह निश्चयको इस अपूर्व योद्धाने अपने सहज सिद्धान्तके दो ही प्रहारोंमे चलायमान कर दिया था । वादमें भीतर जानेपर पता चला कि तारावाईने भी यह समस्त वार्त्तालाप पीछेके कक्षमें वैठकर सुना था । उससे पूछनेपर तो शिवरतनसिंह और भी विस्मित हुए । न जाने क्यो और कैसे वह पृथ्वीराज की वातोस पूर्णतया सहमत हो गई थी । उसकी माँने भी इसकी हाँमें हाँ मिलाई । उसका कहना था कि कन्यापक्षकी ओरसे वहुत अधिक शर्तें लगानी अच्छी नही होती । यदि लडकीको अपने घरका ख्याल है, तो वह ससुराल जाकर भी रहेगा, और तव वह पृथ्वीराज जैसी महान् शक्तिसे कोई काम करानेके लिए अवसे कही अधिक अच्छी स्थितिमे होगी ।

आखिर जिस शर्तके कारण जयमलकी जान गई, वह इस रूपमें परिवर्तित हो गई यदि विवाहके वाद पृथ्वीराजने अपना वचन पूरा नही

किया, तो उन्हें राजपूत नहीं कहा जाएगा . और पृथ्वीराजका विवाह ताराबाईके साथ हो गया ।

पृथ्वीराजके निवास-स्थान कोमलमेरमें आ जानेके बाद बहुत दिनों तक ताराबाईको पतिदर्शन प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिला । इसका कारण था पृथ्वीराजकी राजनीतिक स्थिति । वास्तवमें वह युवराज नहीं थे । युवराज थे संग्रामसिंह या भावी राणा साँगा । राज्य किसे मिलेगा, एक दिन इसी बातपर तीनों भाइयोंमें संघर्ष हो गया था, और इसीके फलस्वरूप संग्रामसिंहकी एक आँख तीर लग जानेके कारण जाती रही थी । अपने घावोंकी पीड़ासे व्याकुल संग्रामसिंह अपने दोनों भाइयोंसे छिपे-छिपे जहाँ-तहाँ अपने दिन काट रहे थे । पृथ्वीराजसे सम्बन्धित लोग उनकी सर्वोपरि शक्तिको जानते हुए ही उन्हें युवराज कहा करते थे । इस शक्तिका मान पिताकी मृत्यु तक बनाये रखनेके लिए उन्हें रात-दिन सशस्त्र संघर्षोंमें जुटे रहना पड़ता था ।

इन सबसे एकदिन शांति पाकर जब पृथ्वीराज कोमलमेर आये, तो सबसे पहले उन्हें ताराबाईकी सुधि आई । इस व्याकुलतामें रणके वस्त्रोंसे सजे-सजाये ही पृथ्वीराज ताराबाईके महलमें पहुँचे ।

पतिका आगमन सुनकर ताराबाई स्वयं महलसे बाहर आ गई । द्वारपर ही उसने उनके पग छुए । पृथ्वीराजने उसे कंधोंसे पकड़कर उठा लिया, फिर उसकी ठोढ़ीको ऊपर उठाकर पूछा, "अच्छी तो हो रानी ?" कितना सुदीर्घ विरह था और कितना पराया-सा प्रश्न था !

ताराबाई लज्जाके मारे चुप रही, और वह आगे-आगे उन्हें स्वयं ही महलमें लिवा ले गयी । दासियाँ सब खड़ी मुँह ही ताकती रही । राजा-रानीके दृष्टिसे ओझल होते ही उनमेंसे कई मुँहमें पल्ला दबाकर हँसीं—रानी रँगीली है !

पलगपर बैठाकर ताराबाईने स्वयं ही उनके लिए जल प्रस्तुत किया । पृथ्वीराजने सब मुसकराते हुए ग्रहण किया । फल और बीड़े खाये, और तब

उन्होने वातचीत आरभ की . "तुम सोचती होगी, हम वडे लापरवाह है । सोची हो न ?"

"अभी तक तो नही सोचा," तारावाईने सलज्ज और नटखट उत्तर दिया ।

"ऐ, अव तक नही सोचा ?" पृथ्वीराजने वनावटी आश्चर्यके साथ पूछा, "खैर, तो धीरे-धीरे सोचने लगोगी ।"

"मुझे आपसे ऐसी आशा नही है," रानीने कहा । "मेरा विचार है, आप कभी किसी चीजको नही भूलते ।"

पृथ्वीराजको हँसी आई । "यह तो तुम्हारी वहुत अधिक आशा है हमसे । भूल ही तो मनुष्यका जीवन है । न भूले, तो इतनी शत्रुताएँ इकट्ठी हो जायँ कि जन्म भर पिंड न छूटे, और इतना प्रेम एकत्र हो जाये कि उसके वोझसे मनुष्य दव जाए ।"

तारावाई भी हँसी । लेकिन न जाने क्यो उसके मनमें यह वात सुनकर कुछ वहुत उल्लास उत्पन्न नही हुआ । फिर भी उसने दवी ज़वानसे कहा, "किन्तु आप तो राजपूत है ?"

"सो तो हम है," पृथ्वीराजने अपने स्वभावके अनुसार उसी सहास मुद्रामे कहा—"लो, तुमने राजपूतकी वात याद दिला दी । सिरोहीके सरदार प्रभुसिंह राव हमारे वहनोई है । वह भी अपनेको राजपूत कहते है । लेकिन जानती हो वह हमारी वहनसे कितना वुरा सलूक करते है ? राजा होकर भी उन्होने भीलोको मात कर रखा है । वह उसे गालियाँ देते है । हम कन्या-पक्षसे है, नही तो, हमें दी गई एक गालीका मूल्य एक सिर होता है । कभी हमारे वंशमें इसीलिए लडकियाँ होते ही दफ़न कर दी जाती थी ।"

वातके सिलसिलेमे दवी हुई इच्छाके प्रसगपर न आ पानेके कारण तारावाईने ज़वरदस्ती इसीमे रस लिया । "फिर आपने क्या किया ?"

"हमने अपनी बहनको ही समझाया कि स्त्रीका परमेश्वर उसका पति ही होता है। यदि वह अत्याचार करता है, तो उसे सह लेना होता है। नही तो राजरानी और साधारण कोल-भीलोमें कोई अंतर ”

पतिकी बातको अंतिम सिरेके निकट ही काटकर ताराबाईने कहा, "आपको भीलोंसे इतना द्वेष क्यों है? वे भी अच्छे आदमी होते हैं। उनकी स्त्रियाँ अपने स्वामीके सभी कामोमें हाथ बँटाती हैं। यहाँ तक कि लडाइयो आदिमें भी वह बराबरकी मेहनत करती हैं। मैंने उन लोगोका जीवन निकटसे देखा है।"

पृथ्वीराजने दो क्षण रानीको आँखोमें देखा। "तुम चाहती हो कि मेरे साथ तुम भी लडाइयोपर जाया करो?"

"मैंने लड़ाइयाँ लडी हैं। मैं सदा अपने पिताका दाहिना हाथ रही हूँ। आप भी ले जायेंगे तो पीछे नही रहूँगी," ताराबाईने कहा।

"तब तो लगता है कि तुम्हें निकट रखे बिना काम ही नही चलेगा?" कहते हुए पृथ्वीराजने ताराबाईका हाथ पकडकर निकट खीचा, किन्तु कुछ निकट आकर उसने हाथ छुडा लिया।

"आप तो राजपूत है," उसने तनिक गंभीर स्वरमें कहा, "और राजपूतोको अपना वचन याद रहता है।"

दो बार राजपूत होनेकी चेतावनी पाकर पृथ्वीराजकी चेतना सजग हो गई। कुछ देर बातकी तहतक पहुँचनेमें लगाकर उन्होने हाथ छातीपर बाँध लिये।

"रानी!" पृथ्वीराजने कहा, "तुमने फूलकी ओर बढते हुए हमारे हाथमें काँटा चुभा दिया है। बडा सुरक्षित रख रखा था तुमने यह काँटा! हमने उस बातको याद रखनेका वचन दिया था, लेकिन इसलिए नही कि तुम कभी उलाहना देनेके लिए उसका उपयोग करो। हमे अपना वचन याद था, और याद है, किन्तु हमने तुम्हारे पितासे यह भी कहा था कि हम स्नेहके व्यापारमें किसी प्रकारकी शर्त उचित नही समझते।"

किन्तु रानी साधारण महलोकी रानी नही थी, जो इतनी आसानीसे दव जाती। वह जगलकी हिरणी थी, निर्वन्ध और मुक्त। जब तक मनकी कलक नही मिटेगी वह सभी तरहके विलाससे वचित रहेगी। यही उसका निश्चय था। उसने कहा :

"मैं आपके पाँव पडती हूँ। जब तक थोदा वापस नही मिलेगा, तब तक मेरे मनका चैन मुझे नही मिलेगा। किसी और चिन्तासे ग्रस्त मन कभी स्वस्थ स्नेह प्रदान नही कर सकता। इसीलिए मैंने इतनी वडी धृष्टता की थी—" और रानीकी आँखोमे जल दिखाई देने लगा।

पृथ्वीराज एक फीकी-सी हँसी हँसे। "मन अस्वस्थ है, क्योकि मनमें पहले पति-प्रेम नही है, पहले थोदा है। विवाहसे पहलेकी शर्त अभी ज्यो-की-त्यो है। केवल उसका रूप वदल गया है। पहले हमारी इच्छा थी कि हम वन्धनमें वँधे या न वँधे। विवाह करके हमारा वह मार्ग भी वन्द कर दिया गया है। हम पहले थोदा विजय करे, तो तारा हमारी है, नही तो दूर आकाशमें टिमटिमाते हुए तारेमे और हमारे तारेमे कोई अन्तर नही है। रानी, हमने आजतक जो कुछ चाहा हे, वह नही हुआ, तो उसे हमने अपने वाहुवलसे प्राप्त कर लिया है। हम वन्धनसे घृणा करते हैं। शर्त हारका पहला चिह्न है। तुम्हारे लिए हम अपने वाहुवलका प्रयोग नही कर सकते। हम तुम्हारी शर्त भी पूरी करेंगे, लेकिन उसके वादकी अवस्था शायद तुम सहन न कर सको।"

पतिके मनम क्या है इसका तुरन्त अनुमान न कर सकनेके कारण तारावाई आशकासे काँप गई। पृथ्वीराज उठ गये। तारावाईने उनका हाथ पकड लिया।

"मेरे मनकी दुर्वलता पर इतना क्रोध!" और उसकी वडी-वडी आँखें वडे ही करुण व दीन भावसे पतिके मुखपर जम गईं।

"क्रोध?" पृथ्वीराज फिर वही फीकी मुसकराहट चेहरेपर ले आये। "नही-नही, रानी, तुमने अपने मनकी वात कही है, और हमने अपने मन

की। तुम जीत गई। हम तो हारे हुए खिलाडी है। हम इसी समय थोदाके लिए प्रस्थान करेंगे।"

एक युगसे सचित अभिलापाकी अकस्मात् पूर्ति! रानीका सारा दीन भाव, सारी करुणा, और भविष्यकी सारी चिंता, इस एक घोपणासे क्षणमात्र में तिरोहित हो गये। प्रसन्नताके उद्वेगसे उसका समस्त मुख लाल हो गया। मुँहसे निकला, "सच ?"

एक लम्बी साँस लेकर पृथ्वीराजने केवल द्वारकी ओर देखते हुए कहा, "हाँ, सच ही।"

अनजानेमें ही रानीके हाथोंसे पृथ्वीराजका हाथ छूट गया था। वह तुरन्त रानीके कक्षसे बाहर हो गये।

× × ×

थोडी ही देरमें कोमलमेर सैनिक पदचापोंसे मुखरित हो गया। पृथ्वी-राजके रणके वस्त्र जैसे उनके वदनपर पसीनेसे चिपके हुए थे, वैसेके वैसे ही चिपके रहे।

विशेप रूपसे पतिकी अनुमति मँगाकर ताराबाई भी मरदाने वस्त्रोंमे सज गई। कोमलमेरसे पृथ्वीराजकी रणवाहिनी थोदा पर आक्रमण करनेके लिए रवाना हो गई।

जिस दिन पाँचसौ जवानोका यह काफिला थोदा पहुँचा, वह मुहर्रमका दिन था। थोदाके निकट ही शेप साथियोको छोड़कर पृथ्वीराज और तारा-बाई गढके भीतर पहुँच गये। बीच चौकमे अली भाइयोके ताजिये उठ रहे थे।

"लोग जब धार्मिक जोशमे होते है, तब सबसे अधिक बेवकूफ होते हैं," पृथ्वीराजने ताराबाईके अश्वके साथ अपना अश्व भिडाते हुए कहा। "पीछे की ओरसे आकर तुम इस भीडमे मिल जाओ। फिर मैं आता हूँ।"

तारावाईका अश्व पीछेकी ओर दौड़ गया। तभी हसन-हुसैनके मातमके नारोंके साथ ताजिये उठे और अफगान सरदारके निवास-स्थानकी ओर चले। अटारी पर खडा अफगान जलूसमे शामिल होनेके लिए भडकदार वस्त्र पहन रहा था। उसने आते हुए जलूसके साथ दो सूरतें विलकुल अलग-अलग-सी देखी। निश्चित होनेके लिए वह ठहर गया। कुछ ही देरमें जलूस अटारीके नीचे आ गया, और अफगान सरदारने चिल्लाकर पास ही खडे वजीरसे पूछा, "कौन है वे लोग ?"

लेकिन सरदारको उसका उत्तर कभी नही मिला। नीची अटारीके सामने आते ही पृथ्वीराजने अपना नेजा सीधा करके तेजीके साथ अफगानकी ओर फेंका। तारावाईका तीर और पृथ्वीराजका नेजा एक साथ अफ़गान सरदार लिल्लाहकी छातीमें पेवस्त हो गये। एक चीख भी उसके मुंहसे न निकल सकी।

जवतक लोग चौंकें, दोनो घोडे वेतहाशा सदर दरवाजेकी ओर दौडे। चारण सदर दरवाजेके आसपास घूम रहा था। दोनो अश्वोंको आते देखकर वह पहले ही दरवाजेकी राह वाहर हो गया। तुरही वज उठी, और पृथ्वीराजके गिने-चुने पाँचसौ जवान गढ़में पिल पडे।

तारावाईको भागनेका पहला अवसर मिला था। वह आगे-आगे थी। लेकिन द्वारके निकट ही अफगानका हाथी भी जलूसमे शरीक होनेके लिए मौजूद था। फीलवानने जव इस तरह दोनोंको इसी ओर आते और उनके पीछे अफगानोंको भागते देखा, तो उसने अकलका प्रयोग करके हाथीको ठेल दिया, और वह जीवित पर्वत ठीक सदर दरवाजेके आगे आकर खड़ा हो गया।

हाथीके निकट आकर तारावाईका अश्व एक क्षणके लिए रुकता-सा प्रतीत हुआ, किन्तु तुरन्त ही वह उछला और उसके हाथके नेजेने हाथीकी सूडके दो टुकड़े कर दिये। वह विशालकाय जानवर चिंघाड़ता हुआ एक ओरको भागा, और साथ ही वे राजपूत सेनापति अपने सैनिकोंसे मिल गये।

कुछ ही घटोमें थोदा अफगानोंसे साफ हो गया ।

लडाई खत्म होते ही ताराबाईने इधर-उधर दृष्टि दौडाई । कभी उसे पृथ्वीराजका सफेद घोडा इधर-उधर दौडता प्रतीत होता, और कभी आँखोंसे ओझल हो जाता । पृथ्वीराज गढको लाशोंसे साफ करा रहे थे, और इसी प्रबन्धमे उस दिन वह ताराबाईसे नही मिल सके । उसी दिन उन्होंने वडनौर समाचार भेजा, और रात होते न होते शिवरतनसिंह थोदा आ गये । आते ही उन्होंने पूछा, "कहाँ है रावजी ?"

चारणने इस प्रश्नका उत्तर दिया, "बलवेकी आशकाका समाचार पाकर राव पृथ्वीराजजी रात ही कोमलमेरके लिए दौड गये थे ।"

पिताकी अगवानीके लिए आती हुई ताराबाईने यह हाल सुना । सुनकर वह सन्न रह गई । क्या वह अब इस योग्य भी नही रही कि उसका योद्धा पति कही जाये और उसे बताकर भी न जाये ?

पिताको भलीभाँति गढ थोदामे प्रतिष्ठित करके दोपहरसे पहले ही चारण और उसके साथियोके साथ ताराबाई कोमलमेरके लिए चल दी । वहाँ पहुँचने पर पता चला कि कोमलमेरमें कोई बलवा नही हुआ था, और पृथ्वीराज अपने बागी काका सूरजमलके पीछे-पीछे सरहदकी ओर जगलोमे निकल गये है ।

ताराबाई एकात कक्षमे जाकर अपना सिर हाथोमे पकडकर बैठ गई । उसे याद आने लगे इसी कक्षमें पृथ्वीराजके वे अन्तिम शब्द, 'हम तुम्हारी शर्त्त पूरी करेंगे, किन्तु उसके बादकी अवस्था शायद तुम सहन न कर सको ।' कही उस अवस्थाका आरम्भ तो नही हो गया ।

ताराबाई सही अनुमान पर पहुँची थी, लेकिन पानी सिरसे गुजर जानेके बाद । आगे आये हुए दो साल तक राजपूत पृथ्वीराजको अपने बागी चाचासे फुरसत न मिली । दोनो योद्धा थे, और दोनो हँसोड थे । जब कभी

थोडा-सा विश्राम लेने पृथ्वीराज कोमलमेर आते, तो रानीको पता लगते न लगते फिर वापस लौट जाते ।

तारावाईने ये लम्वे ढाई साल सुहागके वैधव्यमे काटे ।

⊠ ⊠ ⊠

लेकिन पृथ्वीराजको भी इस वीच चैन नही मिला । उन्हे अपनी हार पर क्षोभ था । लेकिन कभी-कभी मन विद्रोही हो उठता । इसी प्रकारके एक प्रवल विद्रोहसे प्रेरित होकर वह एक दिन लम्बे समयके लिए कोमलमेर मे रहनेका इरादा करके आये, और इस वार मैकेसे तारावाईके साथ आई दासीने उन्हे दीवानखानेमे पकड लिया ।

"रानीजी कहती है कि पिंजरेमे वन्द मैनाको इस प्रकार घुला-घुलाकर क्यो मारते है ? एक दाना जहरसे वुझा हुआ भेज दें कि मैना तडपना छोड-कर आरामसे सो जाये ।"

पृथ्वीराजने शातिके साथ रानीका भिजवाया उलाहना सुना । फिर मसनदसे उठकर उन्होने उत्तर दिया, "रानीसे जाकर कह कि मैना तो जीत गई है । उसे सोनेकी जरुरत क्या है ? हाँ स्नेह हारा हुआ सुग्गा अपना दर्द छिपा सके, वह जगह रानी वता सके, तो सुग्गा अपने दिन ज्यो-त्यो करके काट तो लेगा ।"

दासीने जाकर पृथ्वीराजकी वात जैसीकी तैसी तारावाईको सुना दी । सुनकर तारावाई पहले तो खूव रोई फिर उसने दासीसे कहलवाया, "जा, उनसे कहना कि उस दर्दको छिपानेकी जगह तो वेचारी मैनाके मनमें है । पर सुग्गाकी सूरत भी देखनेको न मिले, तो गरीव मैना अपना सिर पिंजरेकी तीलियोमे ही मार-मार कर जान दे देगी । उनसे पूछना कि जव स्नेहमे शर्त्त नही होती, तो हार-जीत कैसे होती है ?"

इस वार जव दासी उत्तर लेकर गई, चारण सूरजमलका पता न लगने-का समाचार लेकर पृथ्वीराजके पास आ वैठा था । दासीने उसीके सामने रानीकी वात कह सुनाई ।

चारण पहले बोला, "मैं कुछ कहूँ, अन्नदाता ?"

"कहो," पृथ्वीराजने भौंह ऊँची करके कहा।

चारण बिना हिचक बोला, "रानीजी सच कहती हैं। जो व्यक्ति स्नेहमें शर्त्त स्वीकार नही करता, वह हार-जीत भी नहीं मानता। स्नेह सदा एक पवित्र धारा है, जो मनकी वायुसे टकरा-टकराकर स्वच्छन्द और अबाध गतिसे बहती है। जब उसकी गति रुक जाती है, या जबरदस्ती रोक दी जाती है, तो स्नेहका निर्मल जल सडने लगता है, और वह दोनो पक्षोमें से किसीको भी लाभ नही पहुँचा सकता।"

"ठीक है," पृथ्वीराजने कक्षकी कड़ियोंकी ओर देखते हुए मानो अपना अतीत झाँककर कहा, "हम तुम्हारे इस कथनको मानते थे। लेकिन लोगोंने हमें मानने नही दिया। हमे शर्त्त स्वीकार करनी पडी, क्योंकि हम बँध चुके थे। लेकिन एक राजपूत अपने विश्वासका हनन होते कैसे देखे ? हम सयम साध कर अपने मनको सात्वना दे रहे हैं।"

"लेकिन वह नही मिल रही है" चारण तुरन्त बोल उठा। "न मिल सकती है, अन्नदाता। जिस समयका कोई सुखद उद्देश्य नही होता, वह स्वय साधनेवालेको भस्म कर देता है। आप भी इसमे भस्म हो रहे हैं।"

मुँह लगे चारणके सिद्धान्तका कोई उत्तर पृथ्वीराजके पास नही था। उसने पृथ्वीराजकी मानसिक स्थितिका सही दिग्दर्शन किया था। उनकी ओर अपलक दृष्टिसे निहारती हुई दासी किसी सुखद सवादकी प्रतीक्षामें सीधी खड़ी थी। नीची गरदन किये पृथ्वीराजने सरल और सीधे शब्दोमें कहा, "चारण, तुम हमारे मनके भावको नही समझते। हमे चोट खानेकी आदत नही है....किंतु हम आज रानीके मंदिरमें जायँगे।"

सुनते ही दासीने शीश नवाया, और नौ-दोग्यारह हो गई। चारण भी उठ गया, "अब मुझे आज्ञा हो, अन्नदाता। आपने सही औषधि निश्चित कर ली है। उसके परिणाम पर मुझे पूरा-पूरा विश्वास है।"

"जाओ," पृथ्वीराजने उसे अनुमति दे दी। जब तक उसकी पीठ दिखाई देती रही, वह उसे देखते रहे। उसकी पीठपर मानो उनके मन के द्वंद्वके अमिट अक्षर लिखे हुए थे।

दासीके मुखसे पृथ्वीराजका निश्चय सुनकर तारावाई हर्षसे नाच उठी। आज उसके विछुडे हुए कत आयेगे। उसने सेविकाओको एकत्र किया। "मेरा सिंगार करो। नई चूडियाँ पहनाओ। महावर लगाओ। मुझे सजा दो। ऐसी सजा दो कि फिर चाँद तारेको छोडकर अँधेरा न कर जाये।"

लेकिन भावीका विधान तारावाईके लिए कुछ और लेकर आ रहा था। सध्या समय जव दीपक जल उठे, और तारावाई प्रज्वलित और निर्धूम तारा बनी ड्योढ़ी पर प्रतीक्षामें जाकर खडी हुई, चारण दिखाई दिया।

उसके निकट आते ही रानीने पूछा, "तुम! युवराज कहाँ है?"

"युवराज?" चारण खोया-खोया-सा बोला। फिर आँखें नीचे भूमि पर टिकाकर उसने स्वय ही अपने खोये-से प्रश्नका उत्तर दिया, "मनकी लडाईके दूसरे पक्षको सहारा देनेके लिए एक कुमुक आ गई, और वह उन्हें ले गई। आज वह नही आयेगे।"

"आज वह नही आयेंगे!" रानी आश्चर्य और शोकसे अभिभूत होकर चिल्लाई। "क्या कह रहे हो? कौन आया, कौन ले गया? साफ-साफ़ क्यो नही कहते?"

"सिरोहीसे रानी वहनकी एक वडी दर्द भरी चिट्ठी आई थी। सरदार साहवने उनपर इतना जुल्म ढाया है कि मुँहसे कहा नही जा सकता। वह कुसुम्वा पीकर उन्हे मारते-पीटते हैं। उन्हे पलगके नीचे फर्शपर सोनेके लिए विवश करते है। वह रात-दिन उन्हे यह भुलानेकी कोशिश करते रहते है कि वह राव पृथ्वीराजकी वहन है। रावजी सरदार प्रभुराव को सीख देनेके लिए उतावले हो उठे थे।"

सुनकर तारावाई जहाँकी तहाँ, स्थिर जडकी तरह खडी रह गई। उसकी आँखें अन्तरिक्षमें स्थिर हो गई। चारणने वह दशा नही देखी।

चुपचाप भूमि पर दृष्टि गडाये वह फिर बोला, "जानेको तो रावजी सुबह जा सकते थे, किंतु हारको बहुत अधिक अनुभव करने वाला भावुक खिलाड़ी जरा-सा बहाना पाते ही मैदानमें भाग लेता है।"

"चारण!" सहसा रानी चिल्लाई। चारण चौंक गया। नजरें ऊपर उठा कर उसने देखा कि रानी रोती हुई पीछे मुडी और महलके अतरीय भागकी ओर भाग चली। ओटसे भी कितने ही क्षणों तक रानीकी दूर होती हुई रुदन-ध्वनि सुनाई पडती रही।

× × ×

दूसरा पक्ष सहारा पाकर पृथ्वीराजको प्रेयसी पत्नीसे होनेवाले प्रथम मिलनसे सहसा दूर खींच कर तो ले गया, किंतु स्नेहकी भावनासे ओतप्रोत पहला पक्ष भी उनके पार्थिव मनमें बैठा-बैठा साथ-साथ गया। इससे जो क्षोभ और क्रोध उदय हुआ वह तीव्र और अपूर्व था। शेर और झुंझलाया हुआ! तीरकी तरह पृथ्वीराज बहनोईके दरबारमें पहुँचे, और जाते ही चित्तौडी तलवार उसके गलेसे लगा दी।

पतिके संभावित अन्तकी सूचना पाते ही बहन दरबारकी ओर दौडी, पति-प्रेम फिर आडे आया, और वह भाईके चरणोंपर गिर पडी। उसके सुहागकी रक्षा हो।

बाधापर बाधासे क्षुब्ध पृथ्वीराजने कहा, "दुष्ट, यह चित्तौडकी साध्वी ललना है। इसके जूते अपने सिर पर रख और इसके पैरोंपर गिरकर गिडगिडा। तेरे प्राण बच जायेंगे।"

और सिरोहीके अभिमानी सरदार प्रभुरावने अपनी जीवनरक्षाके लिए यह भी किया। पृथ्वीराजने उसे क्षमा कर दिया।

स्नेहके अभिमानी पृथ्वीराजके सम्मुख इस बुरी तरह एक विरोधीके झुक जानेके कारण मन तनिक हलका हो गया, और उनके मुँह पर तबतक हास्य छाया रहा, जब तक कि वह सिरोहीमें ठहरे रहे। पाँच दिन तक वह बहनोईके सम्मानित, गले-मिले, अतिथि रहे। पाँचवें दिन जब वह चलने

लगे, तो वहनोईने उन्हें प्रीतिभोज दिया, अपने अपराधोकी फिर क्षमा चाही, और आग्रह करके खिलाया-पिलाया। उसे अभयदान देकर पृथ्वीराज सिरोहीसे अपने स्नेह-मिलनकी यात्रा और तीव्र आकाक्षा पूरी करनेके लिए तेज घोडेपर सवार होकर कोमलमेरकी ओर उड चले।

किन्तु मामादेवीकी समाधिसे आगे उनके पग न वढ सके। आग्रह करके खिलाये-पिलाये प्रीतिभोजमें दिया गया विष इतना तीव्र था कि पृथ्वीराज अश्वसे गिर पड़े। दीवानने उठाकर वृक्षकी छायामे लेटाया। "क्या वात है, अन्नदाता ?"

धीमे स्वरमें पृथ्वीराजने कहा, "प्रभुरावने विष दिया है। देर न करो। कोमलमेर जाओ, तुरन्त तेजीसे   रानीसे कहना   "

विना आगेकी वात सुने, घवराये सैनिकोके हाथो पृथ्वीराजको सौंप कर दीवान उन्हींके अश्वपर चढकर हवाकी तरह कोमलमेर पहुँचा। समाचार सुनते ही अभागिनी मूर्च्छित हो गई।

वृद्ध राजवैद्यको घोडेपर चढा और रानीको उनकी कमरमे वँधवाकर दीवान और चारण आशंकित हृदय लिये हुए वापस समाधि पर पहुँचे। हवा लगनेसे रानी राहमें ही चेतन हो गई थी। किन्तु इतने अन्तरमें उसके नेत्रो से अपार जल वह चुका था।

डुपट्टेका वन्द खुलते ही तारावाई दौड़कर पतिके चरणोपर गिर पडी। कराहते हुए पृथ्वीराजने कहा, "वहाँ नही, यहाँ।"

रानी तुरन्त उठकर उनके मुँहके पास जाकर एकटकसे उन्हे करुण दृष्टिसे निहारने लगी। राजवैद्य जो नाडी पकड़कर वैठा, तो फिर वैठाका वैठा ही रह गया था। उसकी ओर एक क्षण देखकर कष्टसे पृथ्वीराजने मुँह तारावाईकी ओर किया और हल्की आभासे मुसकराये, "रानी, इस शर्तमें तो हम दोनो ही हार गये   ,"

लेकिन रानी न कुछ सुन सकती न कह सकती थी। वह तो मानो निपट जड हो गई थी।

सन्ध्या समय एक चिता मामादेवीकी समाधिके पास और जल उठी, जिसमें ताराबाई, पतिका सिर गोदीमें लिये, अपना पावन तन और विरही मन फूँक रही थी।

सिरोहीसे कोमलमेर वाली राह पर, मामादेवीकी समाधिके बिलकुल निकट, राजस्थानके पथिक आज भी एक छोटी-सी आडम्बरहीन समाधि देखते हुए गुजर जाते हैं।

—:०:—

हाथियोंकी चोरी

अपने देशवासियोंसे करारी हार खाकर वावर हिंदुस्तान आया। पानीपतकी रणस्थलीमें उसने लाखों आदमियोंको शहीद बनाकर, उनकी शहादतके फलस्वरूप अपने आप गाजीका पद ग्रहण किया और सुलतानकी जगह वादशाह कहलानेकी व्यवस्था दी। लेकिन उसे हिंदुस्तान किसी भी ओरसे अच्छा न लगा।

"यहाँकी नदियोमे वे मौजे नही है, यहाँके वागोमें वह वहार नही है, यहाँके पहाड़ोमे वह रग नही है, जिसके लिए कावुल मशहूर है। यहाँके आदमी कलावत नही हैं," लाशोके ढेरके वीचसे गुज़रते हुए वावरने शाही सेनापति उस्तादअलीसे कहा।

"जी, जहाँपनाह! लेकिन यहाँके आदमी अपने देशको प्यार करते हैं। उन्हें भी अपनी नदियो और पहाडोंसे प्रेम है। वे अपने मनोरजनके लिए वाग़ लगाते है, और यहाँकी मिट्टी सोना उगलती है। लोग कहते है कि हिन्दुस्तान जादूका देश है। खुदा आपकी हकूमतको हिन्दुस्तान पर वनाये रखे, आनेवाली शाही पीढियाँ शायद जहाँपनाहसे सहमत न हो सके।"

वावर उपेक्षासे हँसा। उसी दिन उसने अपने सस्मरणोमें अपनी उस कीमती रायको टाँक दिया। तभी चोवदारने उपस्थित होकर विनय की, "हाथियोका एक सौदागर हुजूर जहाँपनाहकी कदमवोसी चाहता है।"

"दरवारमें हाज़िर किया जाय!" आज्ञा हुई।

दोपहरको दरवार लगा। सौदागरने आगे वढ़कर झुकते हुए कहा, "श्रीमान्की प्रतिभा दिनदूनी रात-चौगुनी वढे।"

"क्या अर्ज़ है?" वजीरने पूछा।

"श्रीमान्," सौदागरने कहा, "यह अकिंचन हाथियोका व्यापारी है। श्रीमान्की इस दीन प्रजाके पास दो हाथी ऐसे है, जिनकी तुलना केवल इद्रके ऐरावतसे की जा सकती है, जिसकी प्रशसा बहुतोने सुनी है, देखा किसीने नही है। इस तुच्छ दासकी इच्छा है कि वे दोनो हाथी शाही हाथीखानेको सुशोभित करे।"

वज़ीरने कहा, "जहाँपनाह उन्हें देखना चाहेगे।"

"दासके सिर आँखोपर। सेवक प्रस्तुत है," हाथियोके सौदागरने स्वीकारोक्तिमे विनय की।

"शामके समय दोनो हाथी दरबारके सामनेवाले मैदानमे पेश किये जायँ।" वज़ीरने आज्ञा दी।

"यह अधम क्षमा चाहता है," व्यापारीने नमते हुए फिर विनय की। "सेवकने कहा है कि इद्रके ऐरावतको आज तक किसीने देखा नही है। दासने ऐरावतके साथ उन हाथियोकी तुलना अक्षर-अक्षर सही की है। नाशवान् मनुष्यमें इतनी शक्ति नही है कि वह उन्हें देख सके। यह किंकर भी जब उनके पास जाता है तो आँखोपर पट्टी बाँधकर जाता है। उन्हें केवल वही देख सकता है, जो पादशाह हो और गाज़ी हो। सेवक अपनी धृष्टताकी फिर क्षमा चाहता है।"

इस पर सारे दरबारमें सन्नाटा छा गया। ऐसा आजतक न किसीने देखा था, न सुना था। गर्वसे बाबरका हाथ अपनी मूँछ और दाढीपर फिर गया। वह पादशाह था और गाज़ी था। एकमात्र उसीमें इतनी क्षमता थी कि जिस वस्तुको ससार देखनेकी शक्ति नही रखता था, उसे वह और केवल वह देख सकता था।

आज्ञा हुई कि सध्या समय बादशाह सलामतका सम्मानित व्यक्तित्व स्वय उन हाथियोका निरीक्षण करेगा।

सध्या हुई, दीपक जल उठे। अहकार और उल्लाससे भरा बाबर केवल वज़ीरको साथ लेकर अपने गाज़ी और पादशाह होनेके दैवी

प्रमाणको निरखने चला। नगरसे बाहर निकलकर सौदागरका विशाल तबू दृष्टिगोचर हुआ, जिसके पीछे सौदागरने व्यापारके लिए एक-से-एक बढिया नसलके हाथी रख छोडे होगे।

तंबूके निकट पहुँचकर सौदागर वजीरकी ओर देखता हुआ खडा रह गया। बादशाहने इशारा किया और वजीर दो कदम पीछे हट गया। बादशाह और सौदागर अकेले तबूकी ओर चले।

इसी बीच सौदागरने अपने मालकी प्रशसाकी झडी लगा दी "उन हाथियोकी सूडे इतनी लबी है कि वे एक साधारण हाथीको अपनेमे पूरा लपेट सकती है। उनका कद पर्वतके समान है। उनकी सूडोसे हर समय साँसोके साथ एक अद्भुत सुगध निकलकर चारो ओर छाई रहती है। उनके साँस लेनेकी हलकी-हलकी ध्वनि ऐसी लगती है जैसे दूरपर सुहावने ढोल बज रहे हो। उनकी पीठ इतनी चौडी है कि उनपर दो-दो घोडे आसानीसे बैठ सकते है।"

बाबर हैरतमे आगे बढता चला गया। तभी उसके दिमागमे एक अनोखी खुशबू भरनी आरभ हो गई। कानोमे ढोलका एक ऐसा राग सुनाई देने लगा जो उसने कभी काबुलमे स्वप्नमे भी नही सुना था। अभी वह इसका आनद ले ही रहा था और उसका मस्तिष्क तथाकथित हाथियोका नक्शा खीचनेमे मस्त था कि सौदागरने तबूके सामनेका परदा खीचकर अलग कर दिया और अपनी आँखोपर पट्टी बाँध ली।

आँख फाडकर बादशाहने हाथियोके झुण्डपर दृष्टि दौडाई।

सौदागरने कहा, "जहाँपनाह, गाजी, पादशाह बाबर; उधर कोनेमे, वे दो हाथी जिनकी सूँडे इतनी लबी है "

बाबर उछल पडा। उसके सामने दो हाथी, ऐन सौदागरके वर्णनके अनुसार इस तरह किलोलें कर रहे थे जैसे उनमे कुछ भी भार न हो। सुगधसे उनका दिमाग तर हो चला था और कानोमें उनकी साँसोकी मद्धिम ध्वनि गूँज रही थी। बादशाह विभोर हो गये। पूछा, "इनकी कीमत ?"

"सेवकको शाही महावतकी पदवी और नकद एक करोड सोनेकी दीनारें।"

"मंजूर है," बाबरने प्रसन्नतासे कहा।

नये शाही महावतने दोनो हाथी शाही हाथीखानेमे बंद होनेकी सूचना दी। नित्यप्रति अनिश्चित परिमाणमें घी और आटा हाथियोकी खूराकके लिए भंडारसे जाने लगा। शाही हाथीखानेके फाटक प्रत्येक ऐरेग़ैरेके लिए बंद कर दिये गये।

कुछ दिनोतक बादशाह बाबर रोज़ झरोखेसे उन हाथियोको देखने जाते और उस नैसर्गिक सुगंध और रागका रस लेते, जो उन हाथियोसे उत्पन्न होती थी। हाथियोको देखना ही सौ तमाशे देखनेके बराबर था, और सबसे बड़ा संतोष यह था कि गाज़ी और पादशाह होनेके नाते केवल उन्हें ही यह अधिकार था कि वह उस स्वर्गीय छटाका उपभोग कर सकें।

× × ×

एक दिन बादशाह दरबारमें उन हाथियोका रूप वर्णन कर रहे थे कि दरबानने सूचना दी, "जहाँपनाह, एक चोर श्रीमान्‌के सम्मुख उपस्थित होना चाहता है।"

"उपस्थित किया जाय!" वज़ीरने आज्ञा दी।

चोरने आते ही जयकारसे दरबारको गुंजा दिया और बोला, "श्रीमान्‌की राजव्यवस्था इतनी उच्चकोटिकी है कि चोरोको चोरी करनेकी आवश्यकता नही रह गई है। किन्तु चोरोके प्रदेशमें इस बातसे बहुत चिंता फैल गई है कि उनकी कला यो ही बिना प्रदर्शनके छटपटा कर मर जायगी।"

बादशाह और दूसरे दरबारियोको इससे बहुत आश्चर्य हुआ। काबुलमें चोरीको घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता था। बाबरने वज़ीरसे पूछा, "क्या हिंदुस्तानमें चोरीको भी एक कला समझा जाता है? हमारा विचार है कि यह कायरोकी वृत्ति है।"

वज़ीरने कहा, "जहाँपनाहने फरमाया था कि हिंदुस्तानमें कलाकार नही हैं। शायद यह व्यक्ति इसी चीज़को कलाके रूपमें प्रस्तुत करे।"

पूछा गया कि चोर क्या चाहता है ।

उस व्यक्तिने कहा, "मै अपनी कलाका प्रदर्शन चाहता हूँ । श्रीमान्‌के राज्यमे जो वस्तुएँ सबसे अधिक मूल्यवान् समझी जाती हैं, यह कलाकार उनकी भी चोरी कर सकता है ।"

स्पष्टत. उसका सकेत हाथियोकी ओर था । यह कैसे सभव था कि कोई व्यक्ति हाथियोको चुरा सके ? वे जेबमें नही डाले जा सकते थे कि कोई उठाये और लेकर भाग जाय । उन्हें पादशाह और गाजीके अतिरिक्त साधारण मनुष्य देख भी नही सकता था । फिर भी, यदि कोई इसका दम भरता है, तो यह बडी अद्‌भुत चोरी होगी । लेकिन क्या इतनी कीमती और अनोखी वस्तु चोरी करने दी जाय ? सारी असभावनाओके होते हुए भी हो सकता है यह व्यक्ति सफल हो जाय । यह हिन्दुस्तान बडा अद्‌भुत और मनोरजक प्रतीत होता जा रहा है । यहाँ जब ऐसे हाथी हो सकते है, तो ऐसे चोर भी हो सकते हैं ।

बाबरने कहा, "अच्छी बात है, नौजवान, तुम्हे एक शाही हाथी चुरानेकी इजाजत है ।"

तुरत फरमान जारी हो गया "हाथीखानेके चारो ओर सेनाका पहरा लगा दिया जाय । उसका मजबूत लोहेका फाटक तालेबद कर दिया जाय ।"

यह सब प्रबध देखकर नया शाही महावत ठट्ठे मारकर हँसा । उसके हाथियोको मनुष्य नही चुरा सकता, क्योकि वे ऐसी जगह रहते थे, जहाँ किसीकी पहुँच असभव है ।

सारी रात पेडका पत्ता तक नही खड़का । चोरके लिए यह रात कयामतकी रात थी । एक सिपाहीका वेश धरकर वह पहरेदारोमें मिल गया । एक चक्कर लगाता और फाटकमें लगी एक हिलती हुई कीलको एक झटका दे देता । बारह बजे घडियाल बजने लगा और उसके हाथकी नन्ही हथौडीकी ग्यारह चोटें कीलपर पड़ी—कील उखडकर अलग जा पडी ।

एक कील निकल जानेसे फाटकमे हुए सूराखकी राह उसने भीतर देखा ।

हाथियोंकी स्थिति देखनी आवश्यक थी। उसी क्षण वह चकराकर भूमिपर बैठ गया। "यह क्या! यह भारी सेना किसकी रक्षा कर रही है? क्यों इतना कष्ट उठाया जा रहा है?" उसने अपना निश्चय बदल दिया और हँसता हुआ नया प्रबंध करनेके लिए चला गया।

सेनानायकने दरबारमें सूचना दी, "सारी रात एक चिड़ियाने भी पर नहीं मारे। एक कुत्ता तक सेनाके भीतर नहीं घुसा। किसीने कोई मक्कारी साधनेकी चेष्टा नहीं की। श्रीमान्, चोरी नहीं की गई।"

उसके पीछे आकर उपस्थित हुए चोरने विनय की, "श्रीमान्, दासने एक हाथी चोरी कर लिया है।"

सेनानायक, दरबारी और स्वयं बाबर चोरका मुँह ताकते रह गये। शाही महावतको बुलाकर वास्तविकता पूछी गई। उसने कहा, "यह व्यक्ति झूठ बोलता है। हाथीखानेमें दोनों हाथी ज्यों-के-त्यों हैं।"

चोरने सिर झुकाया, "सेवकका काम केवल चोरी करना है। चोरीका काम निबटानेके बीचमें मैंने अवश्य कई बार झूठ बोला है, लेकिन चोरी कर चुकने पर मैं न आजतक पकड़ा गया और न झूठ बोला।"

बादशाह बहुत बिगड़े। "हम स्वयं हाथीखानेका निरीक्षण करेंगे।"

चोरने कहा, "दासकी विनय है कि निरीक्षणके समय यह महावत श्रीमान्‌के साथ न रहे, बल्कि सेवकको यह अधिकार प्रदान किया जाय।"

महावतके विरोध प्रकट करनेसे पहले ही बाबरने कहा, "स्वीकार है।"

अमीर-उमराओंको एक स्थानपर छोड़कर बादशाह चोरके साथ हाथीखानेको देखनेके लिए झरोखेकी ओर चले। चोर विनय करता चला, "देखिए, श्रीमान्, शाही महावतने कितना बड़ा झूठ बोला था! पचास लाख सोनेकी दीनारोंका वह सुन्दर हाथी गायब हो गया और अभी वह इतनी बड़ी हानिको अभावमें डाल रहा था। उसने कलाका अपमान करना चाहा था। वह तो कहिए कि हाथीको कलाकारने श्रीमान्‌की अनुमतिसे

चोरी किया था, नही तो यदि और कोई कलापारगत उसे उडा लेता तो क्या होता ।"

उसके वर्णनका ढग और कलापर अधिकारके अहकारकी अभिव्यक्ति इतनी दृढ थी कि बादशाहको अनुभव हुआ कि एक हाथी चला गया है । और इस अनूठे कलाकारकी बातोमे कुछ वजन है ।

सहसा तुरही और ताकतवर ढपडोकी आवाजे कानोमे पडनी आरभ हुई । इनमें हाथियोकी साँसोकी मधुर ध्वनि लुप्त होकर सुनाई नही पड रही थी । केवल सुगध अपनी मस्ती बिखेर रही थी ।

चिलमन हटा दी गई । उत्सुकतापूर्ण दृष्टि सीधी हाथियोपर पडी । वहाँ केवल एक हाथी गुमसुम खडा था । वह न हिलता था, न डुलता था । मालूम होता था कि साथीके चले जानेसे क्षुब्ध है ।

बादशाहने चोरको शाबाशी दी, "सचमुच तुम कलाकार हो ।" उसने रत्नोका हार गलेसे उतारकर कलाकारके गलेमें पहना दिया । "आज दरबारमें तुम्हे सम्मानित किया जायगा ।"

बादशाह चले गये और कुछ देर पीछे, झरोखेकी राह बद करता हुआ, चोर कलाकार बाहर निकला । दरवाजेपर महावत तनकर खडा हुआ था और उसके मुखपर तीव्र घृणाका भाव प्रस्फुटित हो रहा था । चोरको देखते ही उसने होठ सिकोडकर कहा, "देशद्रोही ।"

चोरने शान्तिसे कहा, "मैं देशद्रोही ?" आगेकी आवाज बहलीकी खडखडमें विलीन हो गई ।

× × ×

उसी दिन दरबार लगा । शाही महावतको झूठ बोलनेके अपराधमे कठघरेमें खडा किया गया । उसकी आँखे आत्मविश्वाससे चमक रही थी । उसके गुरुभाईने स्वार्थके वशीभूत होकर अपने देश और बधुसे दगा की थी । लेकिन वह उसे भेद नही खोलने देगा । यदि उसने ऐसा किया तो उसकी मृत्यु निश्चित है । अभियोगके उत्तरमे उसने कहा, "यदि वह चोर चुराये

हुए हाथीको वापस उसी रास्तेसे ले आये, जहाँसे ले गया था, तो इस शूरकी मजाक़में मैं अपनी एक करोड़ दीनारें हार जानेके लिए तैयार हूँ।"

चोर घबराया। उसकी विद्या अधूरी थी। वह हाथीको वापस नहीं ला सकता था। महावतने यही समझकर यह बेढब शर्त रखी थी। उसने सफ़ाई दी, "चुराई हुई चीज़पर चोरोंकी बिरादरी अपना हक़ समझती है।"

बाबर चिल्लाया, "लेकिन यह शाही इजाज़तसे केवल प्रदर्शनके लिए चुराने दिया गया था। तुम्हें तुम्हारा इनाम मिल चुका है। शाही हाथी वापस किया जाय।"

महावतकी आँखें एक बार चमकीं। चोरके मुखपर स्वेदकण चमक उठे। उसने हाथ जोड़कर बहाना किया "श्रीमान्, सेवक अपनी कलामें पारंगत है, किन्तु वह अपनी बिरादरीके रीति-रिवाज तोड़नेमें असमर्थ है। दास एक तुच्छ चमत्कार फिर दिखा सकता है यदि उसे हाथी माफ़ कर दिया जाय। यह कलाकार दूसरा हाथी बादशाह सलामतकी नज़रोंके सामनेसे उड़ानेके लिए तैयार ..."

सहसा उसकी दृष्टि महावतकी दृष्टिसे मिली और उसने काँपकर अपने नेत्र बंद कर लिये।

उसकी बात सुनकर सबकी बोलती बंद हो गई। वास्तवमें यह कलाकी पराकाष्ठा थी। जोरसे बाबर चिल्लाया, "ख़ुदाकी क़सम, हम इस कलाकारकी क़द्र करते हैं। हमें यह प्रस्ताव भी स्वीकार है।"

उपर्युक्त समयपर चोर बादशाहको उसी झरोखेतक ले गया। तुरही और ढपड़ोंकी तेज़ आवाज़ें आ रही थीं। सुगंध मस्त थी। चोरने चिलमन हटा दी। हाथी उसी मुद्रामें खड़ा था, जैसे एक निश्चल शिखर हो।

बाबरने कहा, "ठीक है, हम देख रहे हैं। तुम्हें शायद बहुत कुछ करना होगा। तुम अपना काम शुरू करो।"

"बहुत कुछ नहीं, श्रीमान्।" चोरने कुछ कोयले सुलगाये। जेबसे एक पुड़िया निकाली और उसका मसाला जलते हुए कोयलेपर छोड़ दिया।

हाथीकी तथाकथित साँसकी सुगंधपर एक नई सुगंध छानी आरंभ हो गई। ज्यों-ज्यों पहली सुगंध लोप होती रही, बादशाहके सामनेसे हाथी का आकार लोप होता रहा और अंतमें जहाँ इतना दीर्घाकार हाथी खड़ा था, वहाँ अदृश्य वायुके अतिरिक्त और कुछ शेष न रहा।

बादशाह भौंचक्का-सा खड़ा रह गया। आश्चर्यसे उसकी चीख निकल गई। हाथ गलेके दूसरे कंठेपर पहुँचा और मुँहसे निकला, "कमाल ! यह क्या माजरा है ?"

चोरने बादशाहके हाथोंसे दूसरा रत्नोंका कंठा सँभालते हुए बतलाया, "ये हाथी काल्पनिक थे। आपके दिमागमें पहलेसे ही इनकी सूरत-शकल बैठा दी गई थी। सुगंध और ढोलके रागने आपके मस्तिष्कको बहकनेसे रोक दिया। तुरही और ढपड़ोंने ढोलके रागको दबा दिया और इस मसाले की गंधने उस पहली सुगंधपर विजय पा ली। कल्पना विचारमें बदल गई और तर्कके परिणामने सत्यको प्रकट कर दिया। यह नजरबन्दीका एक छोटा-सा चमत्कार था।"

× × ×

कुछ दिनों बाद ही बाबरने राणा पर चढ़ाई की। अपार धन-जनकी हानि देखकर बाबर चकित हो गया। उसने राणाकी शक्तिका गलत अनुमान लगाया था। उसे आश्चर्य था कि इतनी रसद और इतने आदमियोंकी भरती करनेके लिए राणाके पास इतना धन कहाँसे आया !

पानीपतकी भूमि रक्तसे प्लावित हो उठी। बाबरको बहुतसे अनूठे चेहरे देखनेको मिले। उनमें सबसे अनूठा जो था, वह उसकी तलवारका वार रोकते हुए उसे दिखाई पड़ा, और वह विस्मयसे चिल्ला उठा "महावत !"

एक करोड़ सोनेकी दीनारें, रसद—उसके सामने सैकड़ों ख्याली हाथी झूलने लगे।

शतरंजकी बाज़ी

मुग़ल-शासनके प्रवर्त्तक बाबरका काल समाप्त हो चुका था, उसका उत्तराधिकारी हुमायूँ एक-एक करके अपने राज्यके प्रदेश हारे हुए खिलाड़ी की तरह खोता जा रहा था। लगता था कि चुगताई वंशका वैभव नष्ट हो चला है।

हिन्दुस्तानकी भूमि शतरंजकी एक बड़ी बिसातकी तरह थी, जिसपर निगाह जमाकर चलनेमें बाबरका वह उदार वंशज अपनेको असमर्थ पा रहा था और जंगलोंकी खाक छानता फिर रहा था।

चपानीर राज्यके एक छोटेसे गाँवमें भूतपूर्व मुग़ल-सम्राट् बाबरके शाही शातिर, वृद्ध उस्ताद हसनअली एक कच्चे-पक्के घरमें, अपनी विगत प्रतिष्ठाके सुख-स्वप्नोंके साथ अपनी तत्कालीन दीनताका समन्वय करनेकी चेष्टा करते हुए दिन काट रहे थे।

रस्सी जल चुकी थी, लेकिन उसके बल नहीं खुले थे। मीनाकारी-के साथ सोनेके पक्के झोलके मोहरे अभी शेष थे, काली कड़ियोंकी छतमें पुराना विशाल झाड-फानूस अब भी टँगा हुआ था, किन्तु क्रमशः दर्शकोंकी संख्या घट जानेके कारण उसकी सफाईकी खबरदारी भी धीरे-धीरे घट गई थी और वह घरकी स्थितिके साथ अपने रूपको एकाकार कर रहा था।

चपानीर राज्य प्रौढायु बहादुरशाहके हाथोंमें था। अरसा हुआ वह हुमायूँको खिराज भेजना बन्द कर चुका था। दक्षिणमें एकमात्र वही मुग़लोंके विनाशका सबसे बड़ा उत्तरदायी था। इस राजनीतिक अवस्थासे भली प्रकार अवगत, बूढ़ा उस्ताद शातिर अपने गत सौरभको लौटा लेनेके लिए चारों ओर ताकता था और उसे मिलती थी निराशा और विषम परिस्थितियोंका सघन अन्धकार।

उन्ही दिनो जाडेकी एक सन्ध्याको घोडेपर चढा हुआ एक युवक उस्ताद हसनअलीके घरका पता पूछता हुआ उनके द्वारपर आया। मिचमिचाई आँखोसे उसे घूरते हुए वृद्धने उस गतवैभव घरके दरवाजेके बाहर सिर निकालते हुए एक साथ दो प्रश्न पूछे—"कौन है ? क्या चाहता है ?"

"क्या यही उस्ताद हसनअलीका मकान है, जो शतरजके खेलमे अपना सानी नही रखते ?" युवकने घोडे पर चढे-चढे पूछा।

युवकके पूछनेके ढगसे उस्तादके चेहरेपर दीनताके पिटे हुए गुरुत्वकी भावना आज फिर अपना रग ले आई। "आओ बेटा," वृद्धने कहा। "कहाँसे आ रहे हो ?"

"मै अहमदनगरसे चला आ रहा हूँ," युवक घोडेसे उतरते हुए बोला। 'बड़े भाग्यसे आपके दर्शन हुए !" वह भावावेगमे वृद्धके पैर छूनेके लिए आगे बढा।

"हँ, हँ !" करते हुए वृद्धने अपने पैर पीछे हटा लिये। बड प्रेमसे उन्होने नवागन्तुकके घोडेकी रास पकडी और घरकी दुवारीमे बॉध आये।

युवकको आरामसे टूटे तख्तपर नई दरी बिछाकर बैठाते हुए उन्होने कहा, "क्या नाम है तुम्हारा, बेटा ?"

"मेरा नाम जयवर्मा है," युवकने कहा। "अहमदनगरसे ही यह तमन्ना लेकर चला हूँ कि उस्तादसे शतरज सीखूँगा और उनका नाम जहानमे रोशन करूँगा।"

"हँ, हँ, हँ !" बूढा हँसा। "वह जमाने गये, बेटा, जब इस चीजकी कदर थी। अब तो धरती खुद बिसात बन गई है, जहाँ अपने मोहरोको टिकाना तो दरकिनार, खुद टिकना मुश्किल हो रहा है। आजकल तो शतरज-जैसे शाही खेलमे वही पड सकता है, जिसके आगे-पीछे कबीलेदारी न हो।"

"उस्ताद !" इस बार युवकने सचमुच वृद्धके पैर पकड लिये। "मै इन्कार सुनने नही आया हूँ।"

वृद्ध अपने शिष्यत्व-कालके सस्मरण याद करके विभोर हो उठा।

उसने युवकको उठाकर छातीसे लगा लिया। "जो कुछ मुझे आता है उसे सिखानेमें कोई कसर उठा न रखूँगा," वृद्धने कहा।

अन्दर घरमें जानेके लिए बैठकमें जो खिड़की थी, बन्द हो गई और बैठकमें ही बाजियाँ जमने लगीं। वृद्धने देखा कि युवक पहलेसे ही शतरंजमें निकला हुआ था। उन्होंने उसे नक़्शोंके सहारे खेलना सिखाया।

दुनियाकी सभी बातोंसे विलग होकर जयवर्मा नामके उस युवकने छ. मास जमकर शतरंजके दाँव-पेंच सीखे। उसे पता नहीं रहा कि आज उसने रूखी खाई कि तर, खाई भी कि नहीं खाई, और यदि खिलाई तो किसने।

अब बाजियाँ जमतीं, किन्तु शिष्य और गुरुकी भावनासे नहीं, दो प्रबल विरोधियोंकी भावनासे। बिसातसे हटकर शिष्यके मनमें सेवा-भाव आ जाता और गुरुके मनमें पितृ-भावना।

इस बीचमें यद्यपि जयवर्माने एक भी बाजी नहीं जीती, किन्तु धीरे-धीरे उसपर प्रकट होने लगा कि किसी दिन उसका बाजी जीतना गुरु और शिष्यके बीचका कोमल तार टूक-टूक कर देगा। बहुत नाजुक मौक़े आ पड़ने पर उस्तादका मुँह क्यों पीला पड जाता है! उस समय वह उसकी ओर विचित्र दृष्टिसे क्यों देखने लगते हैं! इस प्रकार कि जैसे कोई विशाल भवन खड़ा करके उस परसे अपने स्वामित्वका अधिकार खो रहा हो।

बहुत दिनों बाद एक दिन उस्ताद हसनअलीकी बाजी इसी तरह फँस गई। वृद्धने उस्तादी नुकता छोड़ा—"घोडे पिटवाकर मात देना, तारीफ़ तो सभी है।"

"मैं भी घोडे नहीं रखूँगा," युवकने वृद्धके पिटे हुए घोडोंके पास अपने घोडे रख दिये।

जयवर्मा अब भी जबर था। कितनी देर बीत गई, वृद्धको इसका पता नहीं चला। 'चाल चलो' कहनेकी मनाही थी। शतरंज मस्तिष्कका खेल है और मस्तिष्कके अनुकूल तन्तु न जाने कितनी देरमें आकर एकत्र हों।

जयवर्माकी बाजी निश्चित थी, इसलिए जबसे उसने शतरंज सीखनी

आरम्भ की थी, आज उसे पहला अवसर मिला था कि वह अपने वातावरण-मे इधर-उधर दृष्टि पसार सके, सन्तोष और इतमीनानके साथ।

उस्तादके पीछे जो बन्द खिडकी थी, उसकी दरारपर अचानक उसकी नज़र जा पहुँची और वहीपर अटक गई। जिस राह पर भीतरके प्रकाशकी एक रेखा दीख पडनी चाहिए थी, वहीसे किन्ही सुन्दर नेत्रोकी अतृप्त दृष्टि न जाने कितनी देरमे, न जाने कितने दिनोंसे, एकपक्षीय भावनाओका भार लिये अपनी प्यास बुझानेका प्रयत्न कर रही थी।

यदि आँखोंसे स्नेह परिलक्षित हो सकता है, तो जयवर्माने उसे लक्ष्य किया। बहुत कालसे अपने ध्येयकी पूर्तिमें रत उसका सुप्त युवक हृदय आज अँगडाई लेकर उठ बैठा और उसकी दृष्टि फिर-फिराकर फिर उसी ओर जा टिकी।

उस समय वृद्ध शायद काबुलमें घोडे बेच रहा था। उसके मुँहसे अनायास ही एक बडबडाहट निकलनी आरम्भ हो गई "प्यादे वज़ीर बन गये, बादशाहतें मिटकर फिरसे बन गईं। ज़माना एक-सा किसीका नहीं रहा " वृद्धका मस्तिष्क अन्दर ही अन्दर पेच-ताव खा रहा था। " कभी न कभी दिन फिरेंगे। फिर एक दिन वैसे ही शाही कालीनोपर मसनदके सहारे शतरज खिलेगी। चारो ओर प्यादेपल्टन दौडते फिरेंगे और सम्मानमें तोपोकी सलामियाँ दग रही होगी " क्या-क्या बकता जा रहा है, वृद्धने सहसा ही इसका भान करके, अपनी सुप्त भावनाओके इस प्रकार प्रदर्शित होनेसे लज्जित होकर जयवर्माकी ओर ताका।

अचानक ही वृद्धकी भौह सकुचित हो गई। उसने जयवर्माकी ओर तीव्र दृष्टिसे देखा, पीछे फिरकर खिडकीकी ओर देखा और दृढ निश्चयके साथ उठकर खिडकी और जयवर्माके बीच जा खडा हुआ।

इस अचानक व्याघातसे चौंककर जयवर्मा तुरन्त प्रकृतिस्थ हो गया।

"अब यह बाज़ी फिर कभी खिलेगी," "बूढेने व्यग्यसे कहा। "इसके दो नक्शे बना लो। एक तुम्हारे पास रहे और एक मेरे। जब हम और तुम

'एकचित्त' होंगे, तब फिर यह बाजी खिलेगी। शतरंजमें वक्तका बंदिश नहीं होती।"

गुरु और शिष्यके बीच तनाव उत्पन्न हो गया। जयवर्माने मनमें कहा कि यह बाजीकी स्थितिमें उत्पन्न खीझ है, लेकिन उसके भीतरसे ही किसीने उसे झुठला दिया।

फिर उसने सोचा कि कौन हो सकता है खिड़कीपर ? उस्तादकी पत्नी नहीं थी। वह कई बार चर्चा कर चुके थे। लेकिन कभी उस्तादने इस बातकी चर्चा नहीं की कि उनके कोई लड़की भी है। छः मास घरमें रखकर भी उन्होंने उसे जनानखानेकी हवा न लगने दी थी।

उस रात जयवर्मा पड़ोसीके घरमें सोया। रात ही रातमें उसने कुछ निश्चय किया और सुबह उठते ही नहा-धोकर वह उस्तादके पैर छूनेके लिए पहुँचा। बैठकमें प्रवेश करते ही उसने देखा कि सामने खिड़कीके किवाड़में जो दरारें थीं, उन्हें बड़े अटपटे तरीकेसे रातमें बूढ़ेने लगकर गारे मिट्टीसे बन्द कर दिया था।

करुणाके आवेशमें गुरुकी ओर देखकर वह उनके चरणोंपर गिर पड़ा। वृद्धने शान्त भावसे उसे आशीर्वाद दिया। किसीने उसकी राह नहीं रोकी, किसीने उससे जानेका सबब नहीं पूछा। कुछ काल पहले जिस प्रकार वह अज्ञात युवक इस गाँवमें घोड़ेपर चढ़कर आया था, उसी प्रकार छः मास बाद पीठ मोड़कर गाँवसे विदा हो गया। अन्तर था, तो केवल इतना कि जिस मुखपर आते समय कुछ सीखनेकी चाह, कुछ कर गुजरनेकी महत्त्वाकांक्षा थी, आज उसपर कुछ जान लेनेकी गम्भीरता और प्रताड़ित हृदयकी उत्तेजना थी।

समयके प्रभावसे तिनके छिटक-छिटककर न जाने कहाँके कहाँ पहुँचते हैं। नई-नई चिड़ियाँएँ नये-नये घोंसले उनसे बनाती हैं।

× × ×

इस घटनासे कुछ समय बादकी बात है। दो महीनेसे हुमायूँ चम्पानीरका घेरा डाले पड़ा था। बाहरसे रसद-पानी जाना उसने बन्द कर दिया था

और अनुमान था कि भीतरके लोग अधिक दिनो तक इस अवरोधका सामना नही कर पायेगे। आज पूरी आशा थी कि या तो वहादुरशाह आत्म-समर्पण कर देगा या किलेके निवासी जीवन-मरणकी आखिरी वाज़ी लगाने के लिए किलेका द्वार खोलकर वाहर आ जायेंगे।

तभी किलेके फाटकमे वनी छोटी राहसे एक अश्वारोही वाहर निक-लता दिखाई दिया। उसके हाथमें सफेद झण्डी थी, जिससे प्रतीत होता था कि वह या तो सन्देशवाहक है या वहादुरशाहकी ओरसे आत्मसमर्पण करनेका प्रस्ताव लेकर आ रहा है।

शाही खेमेमे उसने एक फरमान हुमायूँके सामने पेश किया। लेकिन उसके भीतर जो सन्देश था उसे सुनकर हुमायूँके प्रमुख सेनानायक वडे ज़ोरोंसे ठठाकर हँस पडे।

फरमानमे हुमायूँकी ओरसे वडी आशा वाँधी गई थी। वहादुरशाह-की तरफसे उसके नाम शतरज खेलनेका निमत्रण था। शतरजमे हारने पर हुमायूँके लिए शर्त थी कि वह किलेका घेरा उठाकर वापस लौट जाये और उसके जीतनेपर वहादुरशाह उसके लिए किला खाली कर देगा।

भीषण अट्टहासोके वीच जव इस अद्भुत प्रस्तावके कारण उत्पन्न हास्य कुछ धीमा पडा, तो वहादुरशाहके दूतने गम्भीरताके साथ फरमान-को एक वार फिर पढा और वोला, "व्यर्थके रक्तपातको रोकनेके लिए यह अपूर्व अवसर है। आख़िर वास्तविक युद्ध भी तो वहुत कुछ भाग्यपर निर्भर करता है। अन्तर इतना ही है कि यह युद्ध द्वद्वयुद्ध न होकर वुद्धि-युद्ध होगा।"

एक सेनानायकने आगे वढकर निवेदन किया, "यह मौका और वक्त हासिल करनेकी एक चाल है।"

दूतने कहा, "हम लोग भूखसे निढाल हो रहे है, आप जीते हुए है। मौका और वक्त हासिल करके भी हमारी और आपकी स्थिति वही रहेगी। यदि आप इस प्रस्तावको नही मानेगे,तो हम सिरोपर कफन वाँधकर मरने-

के लिए बाहर निकल पड़ेंगे और जब हम मरेंगे, तो मारेंगे भी। क्या आप लोगोंको अपने सिपाहियोंकी जानें क़ीमती मालूम नहीं होतीं ?"

हुमायूँके बगलमें खड़े एक युवकने उसके कानमें कुछ कहा। हुमायूँ-ने आज्ञा दी, "युद्ध बन्द कर दिया जाय। यह खेल हमारी थकी हुई सेनाका मनोरंजन करेगा।"

सारी फौजोंमें इस अपूर्व अनहोनीपर कहकहे लगने लगे। युद्धका बड़ा मोर्चा सिमटकर हुमायूँके खेमेमें एक बड़ी चौकीपर केन्द्रित हो गया। उस युद्धका सबसे बड़ा सिपहसालार था हुमायूँका सहचर वह युवक।

नई-नई और अपूर्व चालोंके नक्शे रेशमी थैलियोंमें बन्द होकर एकके बाद एक किलेसे खेमे और खेमेसे किलेमें जाने लगे। तत्कालीन राज-नीतिक इतिहासमें शतरंजकी यह बाज़ी अपूर्व भी थी और असाधारण भी थी, जिसकी चालोंके नक्शे पूरी-पूरी बाज़ी खेलकर परिणाम देख लेने-पर विरोधीके पास भेजे जाते थे।

हुमायूँ इस बाज़ीको शान्त मुखमुद्रा और उथल-पुथलयुक्त हृदयसे निरख रहा था। वह अपने जीवनमें अब और अधिक जुआ खेलना नहीं चाहता था। अन्तमें उसने एक चाल सोची।

तीसरी चाल लेकर पहुँचा हुआ हुमायूँका क़ासिद वापस लौटकर नहीं आया। बहादुरशाहके दरबारमें नक़्शा सौंपकर बाहर आते ही उसके पैरोंमें अचानक बड़े ज़ोरका दर्द उठा और थोड़ी सी ही देरमें उसके पैर सूज-कर हाथीके पैरोंके बराबर हो गये। वह भूमिपर गिर पड़ा और पीड़ाके मारे लोटने लगा। तत्काल दरबारमें सूचना दी गई। नई चालमें उलझे बहादुरशाहने उसे शाही हकीमकी रक्षामें सौंप देनेकी आज्ञा दी और हुमायूँको इस दुर्घटनाकी सूचना भेज दी गई।

यदि सिलसिला यहीं टूट जाता, तो भी कोई बात नहीं थी। लेकिन इस घटनाके बाद कोई भी सन्देशवाहक अपना काम समाप्त करके वापस नहीं लौटा। किसीकी आँखें इतनी सूज गईं कि उसे दिखाई ही देना बन्द

हो गया, तो किसीके हाथोकी उँगलियाँ मोटी होकर कलाईके बराबर हो गईं।

नियमानुसार हुमायूँकी ओरसे शिकायत की गई कि क्या कारण है कि दूत वापस नही आ रहे है ? बहादुरशाहके लिए यह अब चिंताका विषय बन गया। मालूम होता था कि कोई प्रकाड राजभक्त गुप्त रूपसे हुमायूँके दूतोको विष दे रहा था। लेकिन उसे सामने आना चाहिए था।

हुमायूँका नौजवान शातिर निर्णायक चाले लेकर दो सन्देशवाहकोके साथ स्वय दरबारमें आया। इन लोगोको शाही शातिरके घरपर ठहरनेकी आज्ञा दी गई।

तीनो आदमी बैठकमें बैठे आपसमें सलाहमशवरा कर रहे थे। "अगर यह चाल सफल हो जाय तो किला हाथमें आया समझो," कहते-कहते युवक शातिरने दरवाज़ेपर एक परछाई देखी और उसकी नजरे ऊपर उठी। दरवाज़ेके बीचोबीच एक वृद्ध सीना ताने खडा था।

"उस्ताद!" युवक आश्चर्यसे चिल्लाया।

"अच्छा, तो तुम हो, जयवर्मा!" वृद्ध हसनअलीने भौह चढाकर कहा। "मुझे भी ताज्जुब था कि ये अनूठी चाले कौन चल रहा है!"

युवक उसके पैर छूनेके लिए आगे बढा। वृद्धने कोई हीलहुज्जत नही की। उसने शान्त भावसे कहा, "बेटा, तुम्हारी यह आख़िरी चाल सफल नही होगी। बहादुरशाहका शाही हकीम और कोई नही, खुद मसीह-उल-मुल्क रहमत इलाही साहब है, जो सम्राट् बाबरके साथ-साथ हिन्दुस्तानमें वैद्यकका अध्ययन करनेके लिए आये थे। उन्होने बताया है कि भिलावेकी सूइयाँ चुभो-चुभोकर बदनको जगह-जगहसे सुजा लेना, आँखोमे चोटली घिसकर लगा लेना भारतीय अपराधियोकी बहुत पुरानी चाले है। तुम्हारे सभी सन्देशवाहक पहचान लिये गये है। किलेके अन्दर तोडफोड करके हुमायूँको भीतरसे रास्ता देनेके लिए उसने अपने सेनानायकोको सन्देशवाहकोके रूपमें भीतर भेजा है। अब आप लोग अपनेको कैद समझे।"

पासा पलट चुका था। युवक जयवर्माने स्थिति भली प्रकार समझ ली। वह साधारण बातों पर आता हुआ बोला, "लेकिन, उस्ताद, आप बहादुरशाहके यहाँ कैसे ?"

प्रसन्न मुद्रामें बूढ़ेने गर्दन हिलाते हुए कहा, "अब दिन फिर चुके हैं। खुद बहादुरशाहने हमारा दामाद बनना कबूल किया है।"

जयवर्माके हृदयपर जैसे किसीने सौ मनका पत्थर रख दिया हो। फिर भी वह बोला, "उस्ताद, धोखा न खाना।"

"जब तुमसे धोखा नही खाया, तो किसीसे भी नही खाऊँगा," वृद्धने व्यंग्यके साथ कहा।

जयवर्मा तिलमिला गया। उसकी तिलमिलाहटमें योग देते हुए बैठक-की मज़बूत जोड़ी चरमराकर खटाक्से बन्द हो गई।

धीरे-धीरे रात बीतती जा रही थी। बड़ी उत्कण्ठासे जयवर्मा घड़ियालके घण्टे सुन रहा था। अर्द्धरात्रितक उसके वापस न लौटनेकी सूरतमें हुमायूँने जो कार्यक्रम निश्चित किया था, उसके अनुसार जब घड़ियालने बारहकी सूचना दी, उसी समय हुमायूँकी एक तोपने आग उगली और उसके बाद तोपोकी गड़गड़ाहटने किलेको हिला दिया।

जयवर्मा खुशीके मारे साथियोके कंधे झिझोड़कर चिल्ला उठा—"अहा, हमारी फौजोने धावा बोल दिया है।" उसने आवेगमे आकर किवाड़ पीट डाले।

अकस्मात् आश्चर्यसे तीनो व्यक्ति मुँह बाये रह गये। धक्के लगनेसे किवाड़ोकी जोड़ी ऐसे खुल गई, जैसे बन्द ही न हो। जयवर्माने कहा, "मालूम होता है किसीने चुपचाप इसे बाहरसे खोला और सूचना देनेका अवसर न पा सका।" उस्तादके घरमें ऐसा कौन हो सकता है? सहसा उसे किसीकी आँखोका स्मरण हो आया।

बाहरसे ज़ोरका हल्ला सुनाई दे रहा था। हाथियोके माथे लहूलुहान हुए किलेके फाटकसे बँधी जजीरो पर अपने जोर आजमा रहे थे। चारो ओर चीख-चिल्लाहट मची हुई थी।

तीनो व्यक्ति तेजीके साथ महलकी ओर दौडे । अचानक बीच रास्तेमें खडे होकर जयवर्मा अपने साथियोंसे बोला, "तुम लोग कैदखानेकी ओर जाओ । होशियारीसे जाना । बहादुरशाह पकडे जानेके लिए किलेमे नही ठहरेगा । वह चोर रास्तेसे भागेगा । मै इस किलेके भूत-पूर्व सूबेदारके साथ वह राह देख चुका हूँ । मे उसे रोकूँगा ।"

समय खोनेका अवसर नही था । साथियोको कैदखानेकी ओर लपकता छोडकर वह तीव्र गतिसे दूसरी राहपर दौड गया ।

× × ×

कुछ समय बाद बल-पूर्वक एक लडकीको घसीटते हुए बहादुरशाह और उसके तीन-चार अनुचर गुप्त मार्ग तय कर रहे थे । सिरे पर पहुँचकर वह अचानक ठिठक गया । द्वाररक्षक मुर्दा पडा था और उसकी कमरसे चावियोका गुच्छा गायब था । पिंजरेमें फँसे पक्षीकी तरह सहमकर बहादुरशाहने अपने अनुचरोकी ओर देखा ।

ऊपरके रोशनदानसे एक हँसीकी आवाज सुनाई पडी । उन्होने ऊपर देखा । जयवर्मा चाबी उन्हें दिखा-दिखाकर चिढाते हुए कह रहा था, "अरे, तुम लोग कहाँ जा रहे हो ? शहशाहे हिन्द हुमायूँकी फौजें तुम्हारी मेहमान बनकर आ रही हैं, और मेज़बान दुम दबाकर भागा जा रहा है खूब, बहुत खूब ।"

तभी भयत्रस्त लडकीकी बन्द आँखे खुली और वह जयवर्माकी ओर देखकर चिल्ला उठी । जयवर्माने उन आँखोकी ओर देखा और उसका स्मृतिचक्र तेजीके साथ पीछेकी ओर घूम गया ।

बहादुरशाहकी अनुभवी आँखे उन लोगोकी नजरोको बडी बारीकीसे नाप रही थी । यह माजरा देखकर वह बडे जोरसे हँसा । "अरे, लडके, तू शायद इस लडकीको पहलेसे ही जानता है "फिर उसने अपने अनुचरो को आज्ञा दी—"इस लड़कीके सीनेसे खजर पार कर दो ।"

लड़की चिल्लाई, "हाँ, हाँ, कर दो । मैं अब मर जाना ही चाहती हूँ ।"

जयवर्माकी ओर लक्ष्य करके बहादुरशाहने कहा, "तुम चाबी फेंकते हो या नही ? अगर इस लडकीको बचाना चाहते हो, तो "

"होशकी दवा करो," जयवर्माने कहा, "तुम्हारी जान खुद खतरेमें है।"

"बहादुरशाहके मरनेसे भी यह लडकी जिन्दा नही हो सकती। क्या इतनी कमसिनीमें ही यह मर जाने लायक हो गई!" उसने लडकीकी चोटी पकडकर उसका मुँह ऊपरकी ओर उठा दिया।

"अच्छी बात है," जयवर्माने कहा। "मै चाबी धीरे-धीरे नीचे लटकाता हूँ। तुम इस लडकीको उस पिछले दरवाजेके पार पहुँचाकर वापस आओ, ताकि वह उसके भीतर जाकर उसे बन्द कर ले। उसके तुम लोगोंसे सुरक्षित होते ही चाबी भी तुम्हारे पास पहुँच जायेगी।"

बहादुरशाहने विलास और प्राणोके चुनावमे प्राणोको चुना और उसने अपने अनुचरोको जयवर्माके कथनके अनुसार कार्य करनेकी आज्ञा दी।

धीरे-धीरे उतरती हुई चाबीकी डोरको देखते हुए अनुचर पिछले द्वारकी ओर लडकीको लेकर चले और जयवर्माकी डोरीमे बँधी गुप्त द्वारकी चाबी उसी गतिसे नीचे उतरती रही। जयवर्माने चेतावनी दी—"ध्यान रखना, अगर जरा भी धोखा हुआ, तो जितनी आहिस्तासे चाबी नीचे जा रही है, उतनी ही तेजीसे ऊपर आ जायेगी।"

अनुचर बिना किसी ओर निगाह किये आगे बढते गये और उन्होने झल्लाकर लडकीको द्वारके बाहर धकेल दिया। तभी बहादुरशाह चिल्लाया "रुक जाओ! वापस ले आओ, चाबी मिल गई!"

उसी क्षण पिछला द्वार दोनो अनुचरोके शीघ्रतासे आगे बढे हुए मस्तकोंसे टकराता हुआ बन्द हो गया। ऊपरसे जयवर्माकी हँसी बहादुरशाह-को सुनाई दी।

जिस समय सँकरे मार्गसे दोनो अपने-अपने भविष्यके स्वप्न सँजोते बाहर निकले, उनके सामने बाधा सशरीर खड़ी थी।

द्वारके बीच खडा बूढा हसनअली रोषके साथ चिल्लाया—"नरीना! जयवर्मा!"

भौंचक्के बने दोनोंके दोनों खडे रह गये। हसनअलीने कहा, "नरीना दुनियामे सिर्फ उसके पास जा सकती है, जो पहले हसनअलीको फतह कर ले।" फिर उसने क्रोधसे काँपते हुए हाथोंसे तलवार खींच ली।

जयवर्मा कुछ क्षणों अवाक् खडा रहा। बूढा फिर चिल्लाया, "निकालो तलवार।"

युवकने अपनी मिरजईके भीतरी खोलमेंसे एक कागजका पुर्जा बाहर निकाला। "ठहरो, उस्ताद," उसने कहा। "अभी तुम्हारी और हमारी एक बाजी अधूरी है। पहले उसे पूरी हो जाने दो।" उसने कागजका पुर्जा उनके सामने करके खोल दिया। यह वही नक्शा था, जिसकी एक नकल अभी तक बूढेके कपडोंमे सुरक्षित थी। वह उसे देखकर चौंक पडा।

वृद्धने तलवार म्यानमे कर ली। असतोष और आशका मिश्रित दृष्टिसे उसने कहा, "अच्छा।"

कालीनपर अब भी सोनेके मीनाकारीवाले मोहरे बिसातपर जमे थे। दोनों विरोधी आमने-सामने डट गये और नरीना द्वार पर खडी हो गई।

एक-दो चालके बाद बूढेको तन्मय देखकर युवक सुराहीसे पानी पीनेके लिए उठा। पानीसे भरा चाँदीका गिलास मुँहसे लगाकर उसने कहना आरम्भ किया—"अब उस्तादके दिन फिर गये है। फिर वैसे ही शाही कालीनोपर मसनदके सहारे उठगकर शतरज खेल रहीं है! चारो तरफ प्यादापलटन दौडती फिर रही है। और तोपोकी सलामियाँ दग रही है।"

इसपर भी बूढेका ध्यान बँटता न देखकर युवकने नरीनाकी कलाई पकडकर सकेत किया और दोनों चुपकेसे वहाँसे खिसक गये।

किलेका फाटक चरमराकर टूट गया और हुमायूँकी विजयी सेना नारे लगाती हुई अदर घुस पडी।

दाँई ओर नरीना और जयवर्माको लिये बहुत देर बाद हुमायूँने किलेके महलमें प्रवेश किया। वह खुश था। अपनी विजित वस्तुओकी शान

निरखता हुआ वह बारहखानेमें आया, किंतु वहाँ पहुँचकर वह ठिठककर खड़ा हो गया।

सामने ही मसनदका सहारा लिये, कालीनके ऊपर रखी चौकीपर बिछी बिसातपर मोहरें लगे थे और बूढ़ा उस्ताद हसनअली चिंताकी मुद्रामें आँखें बिसातपर जमाये, हथेलीपर ठोडी रखे स्थिर हुआ ज्यों-का-त्यों बैठा था।

शतरंजके इस अद्भुत और विचित्र शौक़ीनको देखकर हुमायूँने उसे पहचाननेकी चेष्टा की और जिज्ञासासे जयवर्माकी ओर देखा।

हँसते हुए जयवर्माने परिचय दिया—"ज़िल्ले-सुभानी मरहूमके दरबारके लासानी और मशहूर शातिर उस्ताद हसनअली खाँ।" फिर वह उस्तादकी ओर मुड़ा। "अब खतम भी करो, उस्ताद। यह ज़िंदगी खुद एक खेल है और इसमें हार जीत दोनों ही आती हैं।"

नरीनाने पिताका कंधा पकड़कर हिलाया और वह चीख उठी। उस्ताद मिट्टीके पुतलेकी भाँति ढह पड़े। उनके प्राण इस कायाके पिंजरेको छोड़कर अनंतकी ओर उड़ चुके थे।

—×—

उलझन

मुग़ल सम्राट् अकबरके धायपरिवारकी एक अच्छी खासी पलटन थी। माहम अनग उनमे सर्वोपरि थी। बीस वर्षका, नया नया सिंहासन पर बैठा, अकबर उसके स्नेहपाशमे पूर्णरूपसे बँधा हुआ था।

कालग्रसित हुमायूँके जिस कुशल सेनानायक बैरमखाँने उसका साथ दीनता व दुर्भाग्यमें परछाईंकी तरह दिया था, जिसने उसके पुत्र अकबरके लिए साहसी वणिक् सेनापति हेमूसे दिल्ली छीनी थी, वही बैरमखाँ इस सीधीसादी वृद्धा नारीकी महत्त्वाकाक्षाओके मार्गमे पडकर, राज्यकी बिसातसे शतरजके मोहरेकी तरह उठा लिया गया। माहम अनगकी ये महत्त्वाकाक्षाएँ उसके एक मात्र पुत्र आदमखाँके लिए थीं, जो उस समयके भारतीय इतिहासमें प्रथम पक्तिका खलनायक गिना जाता है।

उस समय अकबरकी दिनचर्या सैरशिकार और साहसी खेलो तक ही सीमित थी। उसके भीतर राजनीतिक रूपसे केवल एक भावना थी कि वह एक विस्तृत और विशाल भारतीय भूभागका स्वामी था और उसका यह स्वामित्व उसके पूर्वजोके स्वप्नका सफल और साकार रूप था। बैरमखाँके विरुद्ध उसके पतनमें माहम अनग और उससे सबधित अन्य व्यक्तियो द्वारा यही स्वामित्वकी भावना कोंच-कोंचकर हरी की गई थी।

किंतु माहम अनगके कारण ही जो भावना अकबरके मनपर उभर चुकी थी, वही उसके पुत्रकी राहका काँटा बनकर खडी हो गई। राजकीय मामलोमें माहमके सबलसे सचालित आदमखाँकी स्वेच्छाचारिता अकबरको असह्नीय लगने लगी। बेहिसाब खर्च, रिश्वत, अत्याचारसे भरी आदमखाँकी चेष्टाओके कितने ही समाचार उसे नित्यप्रति सुननेको मिलते, किंतु दूसरी ओर माहम थी, जो अपने स्नेह और सौजन्यके कारण एक उलझन बनकर अकबरके मानसके चारो ओर लिपट गई थी।

आदमखाँको नज़रोंसे दूर करनेका प्रयत्न किया गया। उसे एक विशाल सेनाका सेनापति बनाकर मालवापर चढ़ाई करनेके लिए भेजा गया। वह भी स्वयं बहुत दिनोंसे किसी ऐसे ही अवसरकी खोजमें था। आज्ञा सुनकर उसके पैर धरतीपर सीधे नहीं पड़े।

उसका आकर्षण थी मालवाके सुलतान बाज़बहादुरकी प्रधान बेगम रूपमती, जो अपने रूपके कारण आसपासके लोकगीतोंकी नायिका बनी हुई थी। भावी तानसेनका गुरुभाई, सुलतान बाज़बहादुर स्वयं भी प्रसिद्ध संगीतज्ञ और रसिक था। बाज़बहादुर और रूपमतीकी प्रेम-कथाएँ उस समयके जनकवियोंके लिए चुनेचुनाये विषय थे। आदमखाँने उन दो प्रेमियोंके सुनहले स्वप्नोंकी यह दुनिया उजाड़ दी। भीषण युद्धके पश्चात् बाज़बहादुरको हारकर भाग जाना पड़ा।

आदमखाँ उत्साह और हर्षके साथ पराजित सुलतानके हरममें घुसा। वहाँ उसका स्वागत हुआ बेगमोंकी सिसकती हुई लाशोंसे—बाज़बहादुर अनिवार्य पराजयके लिए युद्धमें जाते समय जिनके लिए आत्महत्याकी व्यवस्था कर गया था।

"रूपमती!" आदमखाँ रौद्र स्वरमें चिल्लाया, "रूपमती कहाँ है?"

उत्तर देनेके लिए हरममें कोई शेष नहीं था, केवल रूपमती ही थी, कटार खानेके बाद भी जो आनेवाली मृत्युकी बाट जोह रही थी। यह घाव-की वेदनासे तड़पती हुई हरमके एक वीरान कोनेमें मिली। उसमें केवल एक चेतना शेष थी कि आदमखाँको प्रसन्नता और लालचभरी दृष्टिसे अपनी ओर बढ़ते देखकर अपनी अँगूठीका हीरा निगल सके। उसने यही किया और वह भी आदमखाँके हाथों-ही-हाथोंमें ठंढी हो गई।

कमदके इस प्रकार अंतिम हाथपर टूटनेसे आदमखाँ बौखला गया। "मारो, जो सामने आये!" उसने चिल्लाकर सैनिकोंको आज्ञा दी, "बची हुई बेगमोंको कैद कर लो। बस्तीकी एक-एक ईंटको उखाड़कर उस पर आदमखाँका नाम लिख दो, ताकि यादगार रहे।"

और विनाशमें निर्माणकी अपेक्षा बहुत कम समय लगता है।

× × ×

कुछ दिनों बाद शाहंशाह अकबरकी सेवामें मालवा-विजयकी भेंट पराजित सुलतानके कुछ सैनिकोंके हाथों भेजी गई।

भेंटको ग्रहण करनेके लिए दीवानखासमें भारी दरबार लगा। तख्तपर शानसे बैठे अकबरके सामने आदमखांके दूत उपस्थित किये गये।

"भेट नज़रसानीके लिए शाही हुजूरमें पेश की जाय!" अकबरने आज्ञा दी।

वजीर सिटपिटाया। उसने बताया कि भेंटमें केवल कुछ हाथी थे, जिन्हे दीवानखासमे नही लाया जा सकता।

"यह क्या मज़ाक है!" अकबरने क्रुद्ध होकर संदेशवाहकोंकी ओर देखा—"इतनी बड़ी मालवा-विजयमें सिर्फ कुछ हाथी ही मिले हैं! घटनाएँ खोलकर बयान की जायें।"

दूत चुप रहे। शहंशाहके सब्रका प्याला भरता जा रहा था। कड़े स्वरमें अकबरने पुन. कहा, "माबदौलतके सवालका जवाब दिया जाय!"

फटी-सी आँखोंसे कासिद तख्तको घूरते रहे।

अकबर कुपित होकर खड़ा हो गया। "आखिर तुम लोग बोलते क्यों नही?"

सारा दरबार काँप गया। सहमकर संबोधित व्यक्तियोंने अपने-अपने मुंह खोल दिये। सब लोग विस्मय और आतंकसे स्तंभित हो गये।

बाज़बहादुरके आदमखाँ द्वारा भेजे हुए उन सैनिकोंकी जबानें कटी हुई थीं। उन्होंने बिना बोले ही अपनी कहानी कह दी।

अकबरका मुख क्रोधसे तमतमा गया। "अंगरक्षकोंका दस्ता तैयार कराया जाये। हम इसी वक्त मालवाको कूच करेंगे।"

किसीको इस रोषके सामने बोलनेका साहस नही था। तुरंत आज्ञाका

पालन हुआ। बिना हरममराकी ओर मुख किये ही, एक छोटेसे अश्वारोही सैनिकदलके साथ अकबर किलेसे निकल गया।

शहंशाहका आकस्मिक आगमन देखकर आदमखाँके हाथोंके तोते उड गये। अकबरके घोडेकी रकाब चूमकर वह हक्काबक्का बना हाथ बाँधकर खडा हो गया।

हाँफते हुए, तीव्र स्वरमे अकबरने आज्ञा दी "फौरन शाही डेरेमें हाजिर हो जाओ।"

आदमखाँ अपने अपराधोंके प्रति सचेत था। यदि उसकी पीठपर माहम अनगका हाथ न होता, तो उसके लिए यह समझना और भी सरल हो जाता कि अकबर धीरे-धीरे बच्चेसे बडा होता जा रहा था और वे हाथी इतने मूल्यवान खिलौने नही थे जो उसे बहला देते।

किंतु आकस्मिक विपत्तिके साथ आकस्मिक बल भी मिला। आदमखाँ एक ऐसा कवच पहनकर अकबरके सामने गया, जिसपर उसे वार करनेका साहस ही नही था।

विस्मयके साथ अकबरने देखा कि आदमखाँके साथ माहम अनग भी थी, जो विपत्तिका आभास मिलते ही अकबरके पीछे-पीछे आगरेसे अपने पुत्रको बचानेके लिए चल पडी थी।

"दा अम्मी, आप कैसे आई ?" आश्चर्यसे अकबरने पूछा।

माहमने इस प्रश्नका उत्तर नही दिया। समयसे पहुँच जानेपर उसके फूले हुए नथुनोंसे एक गहरी नि श्वास निकली। उसने शहशाहको शाही रीतिरिवाजके अनुसार अभिवादन किया : "अल्लाहो अकबर !" अर्थात् ईश्वर महान् है।

अकबरके चौडे नथुनोंसे भी एक नि श्वास निकली। यह नि श्वास उस मजबूरीकी थी, जो एक शहंशाहको न्यायके प्रयोगसे बाध्य करके वंचित कर रही थी। उसकी स्वच्छंद प्रवृत्ति अपनी सत्ता और महत्ताके सम्मुख बाधा

देखकर भीतर-ही-भीतर छटपटा रही थी। माहम अब उसके लिए समस्या हो उठी थी। विमूढतासे नेत्र स्थिर करके उसने माहमके अभिवादनका उत्तर दिया "जल्ला जलालहू !"—उसकी महत्ता महानतर हो।

आदमखाँने आगे बढकर निवेदन किया, "मै अपने गुनाहोकी माफी चाहता हूँ।"

"हूँ।" कहते हुए अकबरने आगेका कार्यक्रम शात वाणीमे बताया : "कल सुबह हम मालवासे कूच कर देंगे। दा अम्मी भी और तुम भी, आदमखाँ। सुलतानकी बदी बेगमें हमारे साथ जायेगी।"

× × ⊠

अकबरके हृदयका उत्ताप इस प्रकार दबा, जैसे दावानल भीतर-ही-भीतर घुट गया हो। अगले दिन राजधानीके लिए कूच बोल दिया गया। उसे अब भारी थकान अनुभव हो रही थी। अपने दो विश्वासी अगरक्षकोके साथ वह थकानसे चूर, घोडेकी पीठपर बैठा, सब सेनाओके ीछे चल रहा था।

सुबहकी मद वायु चल रही थी। कही हरियाली, कही बिलकुल ऊसर, किसी योद्धाके फैले हुए घावोकी तरह चारो ओर दृष्टिगोचर होते थे। यही भूमि थी जो इतने दु खात ढगसे विजय की गई थी। हरियालीके हिलने-जुलने और मालवाके पठारपर घोडोकी टापोकी टपटपसे उत्पन्न ध्वनिके अतिरिक्त कही कोई आवाज सुनाई नही पड रही थी।

दूर किसीके कठमे मालवाका मीठा लोकगीत उठा। अन्यमनस्क अकबर ने सिर उठाकर इधर-उधर देखा। किंतु आवाज सेनाओकी ओरसे नही आ रही थी। उसने फिर सिर नीचा कर लिया।

कुछ क्षण पश्चात् गीतमें भरा दर्द और स्पष्ट हो उठा।

"कौन गा रहा है ?" अकबरने साथ चलते हुए अग-रक्षकोमेसे एक से पूछा।

"शायद मालवाका कोई किसान जनगीत अलाप रहा है, जहाँपनाह," उत्तर मिला।

अकबरने रस लेना शुरू किया। "गीतका क्या अर्थ है ?"

अगरक्षकने टालनेकी चेष्टा की। "कुछ समझमे नही आ रहा है।"

"हमारा ख्याल था तुम कही इसी तरफके रहनेवाले हो।" अकबर की स्मरणशक्ति अद्भुत थी।

सैनिककी समझ जाग्रत हो गई। "वह जहाँपनाहके सुनने योग्य नही है।"

"इसका निर्णय हम करेंगे," अकबरने कहा। "इसका मतलब बयान करो।"

अगरक्षक मजबूर हो गया। "इसका अर्थ है देखो तो रूपकी शक्ति! पक्षियोका शिकार और मासका आहार छोडकर बाज़ भी अब रूपके चारो ओर मँडराने लगा है। अब बाज़ केवल रूपकी उपासना करने लगा है। अरे, रूपके आकर्षणमे कौन बच सकता है! परंतु देखो तो विधनाका विधान। गिद्धोके राजाने ईर्ष्या और द्वेषसे पागल होकर रूपका मास नोच-नोचकर खा लिया। अरे, गिद्धोका राजा रूपकी महिमाको क्या जाने! वह तो घृणित मासका पेटू है। बाज़ तो मोहके पाशमे बँधा हुआ नि शक्त और अचेत पडा था। नही तो गिद्धोके राजाकी क्या मजाल थी कि उसकी ओर ताक भी लेता। हाय! देखो तो बेचारा बाज किस प्रकार प्रेमका परिणाम भुगत रहा है। न जाने वह कहाँ मारा-मारा फिरता होगा।"

अकबर सुनते-सुनते बेचैन हो गया। तेज़ीसे उसका घोडा उछला और सेनाओकी पंक्तियोके बराबर सरपट दौडता हुआ सबसे आगे पहुँचा। अगरक्षक पीछे-पीछे घोडे दौडाते हुए गये। अकबरने आदमखाँको आज्ञा दी।

"सेनाओको तीव्र वेगसे चलनेका हुक्म दिया जाये। मावदौलत कल शामसे पहले राजधानी पहुँचना चाहते हैं।"

तुरही जोरसे बज उठी। वेगने वेगको दबा लिया।

× × ×

शाही सुरक्षामें आई पराजित सुलतानकी शेष बेगमें अकबरके हरमको सौंप दी गईं। किंतु यहाँ भी आदमखाँ अजेय रहा। खानसामाने शाहशाह-की सेवामें समाचार पहुँचाया "सूचीके अनुसार उनमेंसे दो महिलाएँ कम हैं।"

आज्ञा हुई "आदमखाँको हाज़िर किया जाये।"

आज्ञापालनमें थोड़ा-सा सकारण विलंब हुआ। अकबर क्रोधी स्वभाव-का नहीं था, किंतु कई दिनोंसे एक ही पात्रको लेकर ऐसे ही कारण उपस्थित हो रहे थे। इतनी देरमें उसका कभी-कभी भीषण रूपसे भड़क उठनेवाला क्रोध तीव्र हो चुका था।

आदमखाँ उपस्थित हुआ। शाही सम्मानमें फरश चूमनेके लिए उसके लंबे-चौड़े शरीरके झुकनेसे उसके पीछे आकर खड़ी हुई माहम अनगका आकार दृष्टिगोचर हुआ।

"आप!" अकबर चिहुँका। साथ ही उसने तीव्र स्वरमें आदमखाँको संबोधित किया, "आदमखाँ, मालवासे आई महिलाओंमें दो बेगमें कम हैं। वे कहाँ हैं?"

"उम्मीद है जहाँपनाह इसमें भी इस दासका कोई बुरा इरादा नहीं समझेंगे," उसका उत्तर था।

"हम तुम्हारी ओरसे बुरे इरादे समझनेके लिए उधार खाये नहीं बैठे हैं।" अकबरका स्वर और भी कड़ा हुआ। जैसे वह अपने पास माहम तथा खानसामाकी उपस्थितिको भूल गया हो। "शाही सुरक्षामें आये बंदियोंकी जिम्मेदारी तुम्हारे सिर पर थी। यदि सूर्यास्तसे पहले दोनों खोई हुई रमणियाँ प्रकाशमें न आईं तो, आदमखाँ, तुमने कभी आकाशमें, बाँसके ऊपर वज़न तौलते हुए नटको धरती पर गिरते देखा है?"

तभी खानसामाको लक्ष्य करके माहमका प्रताड़ित स्वर सुन पड़ा "आप खड़े-खड़े क्या देख रहे हैं? यहाँसे चले जाइये।"

स्पष्ट था कि शाही परिवारके सबसे उच्च व्यक्तिका अपमान एक निम्नतर पदाधिकारीके सम्मुख होना सर्वोच्च अधिकारसुख भोगती आई माहमके लिए नितांत अवाञ्छनीय था।

खानखाना चले गये। पीछे अकबरने आदमखाँको भी आज्ञा दी, "तुम भी जाओ!" और वह भी वहाँसे प्रस्थान कर गया।

अब अकबरकी दृष्टि माहमकी ओर गई। वह अपनी श्वेत ओढनीके पल्लेमें नेत्रोंमें आये आँसुओंकी दो बूँदें पोंछ रही थी। उसने तनिक भींगे हुए स्वरसे कहा :

"दासी शहंशाहकी सेवामें इसलिए उपस्थित हुई है कि उसे मक्का शरीफ भेजनेकी कृपा की जाये।"

माहमके हस्तक्षेपकी उपरोक्त छोटी-सी घटनाने अकबरके क्रोधमें पानी-का काम किया था। वैसे भी वह अब जिस स्त्रीके सम्मुख था वह उसके हृदयमें प्रज्वलित स्नेह और सम्मानकी जीवित प्रतिमा थी। मक्का शरीफ जानेका आग्रह माहमकी ओरसे अकबरके लिए सबसे बडी धमकी थी। इसके पीछे विगत, विशाल व्यक्तित्व, बैरमखाँको लिखे गये कृतघ्नताभरे पत्रके वे शब्द छिपे थे 'मक्का शरीफ चले जाइये, जिसके लिए आप इतने दिनोंसे लालायित थे!'

अकबर विचलित हो उठा। "क्यों, दा अम्मी, क्या हमारी वजहसे? हमसे भूलें भी हो जाती हैं, और जब भी वे होती हैं, हम उन्हें स्वीकार करनेमें अपना गौरव समझते हैं।"

"जब प्रजासे भूल हो जाती है, उसे बादशाहसे दंड मिलता है, और भूलका परिमार्जन हो जाता है," माहमने दुखित मुद्रामें उत्तर दिया। "लेकिन जब बादशाहोंसे भूलें हो जाती हैं, उनका परिमार्जन नहीं होता, कुछ व्यक्तित्व लोप हो जाते हैं और लिखे जानेवाले इतिहासके लेख बदल जाते हैं। जो सदा जन्नतनशीन हजरत हुमायूँकी स्नेहभाजन रही है, अपनी गोदीमें खिलाये उन्हींके उत्तराधिकारीकी ओरसे इस प्रकारकी भूलें उसे

इतिहासके पृष्ठोपर काला बनाकर खड़ा कर देगी। पैगंबरके स्थानपर बैठकर हम सदा उन सेवको और गुलामोकी नजरोंसे दूर रहेंगे, जिनके सामने हमेशा अपमानित होनेका भय बना रहता है। माहमको मक्का शरीफकी यात्रा करनेकी अनुमति दी जाये।"

माहम बारीक किंतु दृढ सोनेके तारकी तरह अकबरके चारो ओर कसती जा रही थी। उसने केवल इतना कहा, "दा अम्मी, हमे सोचनेका अवसर दे।"

माहमने निम्नतर दासीकी तरह झुककर दूसरी ओर निहारते हुए अकबरको अभिवादन किया और धीमे पगोंसे वहाँसे चली गई।

× × ×

खोई हुई बेगमें शाम तक मिल गई, किंतु उस अवस्थामे जिसमे वे अपराधीको इंगित करके बोल नही सकती थी। विष-द्वारा उनके शरीरोंसे प्राण खीच लिये गये थे।

अकबरके पास जब यह समाचार पहुँचा वह अपने हृदयके द्वंद्वसे पीडित हुआ, जमनाकिनारे शाही मनोरंजनके लिए विशेषरूपसे आयोजित हाथियोंका युद्ध देख रहा था। माहम मानो उसके मानसमें बैठी उसे कोंच रही थी।

क्षुब्ध अकबर उसी समय शाही हरमसरामें वापस लौट गया।

वजीर कुछ जरूरी कागजोपर शाही हस्ताक्षर करानेके लिए शहंशाहके वापस लौटनेकी राह देख रहा था। अकबरसे बालाखानेमें भेट होते ही उसने प आगे बढा दिये। देखकर अकबरने पूछा

"क्या है ?"

स्वरका चढाव लक्ष्य करके वजीर चौंका। "नित्यका साधारण क्रम है," उसने विनयसे कहा। "शाही दस्तखतोके लिए कुछ दस्तावेज है।"

"दस्तखत आदमखाँसे कराओ!" अकबर झल्लाते हुए बोला। "वही असली बादशाह है। शतरंज वही खेलता है। हम तो बिसातके

शाह हूँ !" अपनी नैतिक विवशताके प्रति उसकी सचित भावना भड़क उठी थी।

वज़ीरने तुरत कागज़ समेट लिये। "शायद जहाँपनाहके दुश्मनोंकी तबीअत ठीक नहीं है।"

"नहीं !" अकबर चिल्लाया। "हमारी तबीअत ज़रा भी खराब नहीं है। हम आजसे ताज नहीं पहनेंगे। टकसालको शाही फरमान पहुँचाओ आजसे सिक्का आदमखाँके नामसे लना शुरू होगा। प्रजामें शाही मनादी कराई जाये अकबरने सल्तनतकी बागडोर नहीं मानोंमें हाथमें आनेसे पहले ही उनसे हाथ खींच लिया है। आदमखाँ इस राज्यका सर्वेसर्वा है।"

वज़ीर एक क्षण स्तम्भित खड़ा रह गया। विपुल सत्ता और असीम शक्तिके अधिकारी शहंशाह अकबरसे इस प्रकारकी बातें सुनना असाधारण था। वज़ीर केवल तना जानता था कि शहंशाहको जब गुस्सा आता है वह किसीके सिर पर गाज बनकर गिर पड़ता है। आज अकबरको गुस्सा आया था। रोषका पात्र भी पहुँचके भीतर था। किंतु उसके मस्तिष्ककी आँच स्वय उसे ही फूँक रही थी।

जिस प्रकारकी आज्ञाएँ अकबरके विशृंखलित मस्तिष्कसे निकली थी उनका पालन करना सकटको स्वय बुलावा देना था, न करनेसे भी अनिष्ट-की सभावना कम न थी। इस अवसर पर वज़ीरकी तुरतबुद्धिने समस्या की एक बहुत उपयुक्त पूर्त्ति ढूँढ निकाली। आदरसहित पीछे हटता हुआ वज़ीर शहशाहके सामनेसे चला गया।

उसने सारा उत्तरदायित्व राजमाता हमीदाबानो बेगमके ऊपर डाल दिया। खानसामाके द्वारा समाचार विस्तृत रूपसे हरमसरामें पहुँचाया गया।

बेगमकी सवारी किलेके अदर-ही-अदर अकबरकी तत्कालीन उपस्थिति-के स्थान तक पहुँची। साथमे माहम अनग भी थी। उसके मुखपर दुबधाके

भाव स्पष्ट रूपसे परिलक्षित हो रहे थे । उसे देखते ही अकबरने होठोको प्रसन्नताकी मुद्रामें फैलाते हुए कहा, "दा अम्मी, आपको खुश होना चाहिए । हमने स्वेच्छा और हर्षके साथ आदमखाँको तख्त सौंप दिया है । अब आपकी मक्का शरीफ जानेकी जरूरत बिलकुल नही रह गई है । आपकी ओर जो भी आँखे उठाकर देखेगा, आदमखाँ उसकी आँखे निकाल देंगे ।"

अकबरने व्यग्य नही किया था, किंतु माहम करुणासे विजडित हो गई । इन अदृश्य तीरोको रोकनेके लिए उसकी जबानसे केवल इतना निकला "जहाँपनाह !"

उसकी ओर देखता हुआ अकबर निश्चल खडा हो गया । "कौन कहता है कि हम जहाँपनाह है ? हम अपनी जिम प्रजाको पनाह देना चाहते है, वह बच नही सकती । उसकी हत्या कर दी जाती है । इसके लिए जो अपराधी है, हम उसे जानते हुए भी सज़ा नही दे सकते, क्योंकि उससे हमारी दा अम्मी-का अपमान होता है ! हम किसीका अनादर नही करना चाहते, किसीको तकलीफ देना नही चाहते । हम तो खुद उस बेइज्ज़ती और तकलीफ़से बचना चाहते है, जो हमें शिकारीके पीछे दौडनेमे मिल रही है । हमे किसीसे ईर्ष्या या द्वेष नही है, दा अम्मी । जब आपका बेटा तख्त पर बैठेगा, हम खुशी और ईमानदारीसे तालियाँ बजायेंगे ।"

साहसी और सबल अकबरका चेहरा आत्मगौरवसे खिल उठा ।

स्त्री होनेके नाते बेगम हमीदाबानो ही माहमकी स्थितिको समझ सकी। माहमके आगे आकर उन्होने कहा, "तलवारोसे जीता हुआ खेल भावनाओसे नही हारा जाता, जलाल । पालेपर खेलनेवाले खिलाडीको बीचमे और बीचमें खेलने वाले खिलाडीको पालेपर खडाकर देनेसे घोडे बहक जाते है । आदमखाँका व्यक्तित्व महत्त्वपूर्ण है, इससे आँखे नही मीची जा सकती । लेकिन वह पालेपर नही खेल सकता । सारे अमीरउमरा व ओहदेदार बिगड खडे होगे ।"

"हम भी पाले पर खडे-खडे उकता गये है, अम्मीजान," अकबर चहल-

कदमी करते हुए बोला। एक गहरी सांस खींचते हुए उसने कहा, 'हम तक नींद ही नही आती।"

विचलित माहमने फिर कुछ कहना चाहा, "लेकिन शहनशाह जलालुद्दीन "

अकबर झरोखेके पास जाकर खड़ा हो गया था। ऊपरसे क़िलेके बाहर एक ओर फैली हुई आगरेकी विस्तृत बस्ती तथा दूसरी ओर हरेभरे मैदानोंमें सांपकी तरह बल खाती हुई जमनाकी काली रेखा दृष्टिगोचर हो रही थी। महलके बाहर अकबरके प्रिय कबूतरोंकी अटारी थी और ऊपर आकाशमें एक स्वच्छंद विहग पंख फैलाये उड़ा चला जा रहा था। उस ओर ध्यानसे देखते हुए अकबरने माहमकी बात बीचमें ही काट दी

"हमारा निश्चय अटल है। उसको केवल खुदा ही बदल सकता है। उसके अतिरिक्त हम किसीपर विश्वास नही करते। हम शांति और एकांत चाहते हैं।"

माहम अनग और हमीदाबानो एक साथ कक्षसे बाहर हो गई।

× × ×

उत्सुक वज़ीर नीचेकी बारहदरीमें अपने हृदयकी गतिके अनुकूल, दोनों सम्मानित महिलाओंकी प्रतीक्षामें, जल्दी-जल्दी चहलकदमी कर रहा था। इतनी जल्दी उन्हे नीचे आते देखकर उसने विस्मयसे पूछा, "क्या हुआ?"

बेगमने निराशासे सिर हिलाया।

"आज्ञा हो तो कुछ निवेदन करूँ?" पीछे-पीछे चलते हुए वज़ीरने कहा। आज्ञा मिल गई।

वज़ीरने एक नवीन प्रस्ताव रखा "शहशाहको हाथियोंका युद्ध देखना बहुत प्रिय है। शाही हाथी हवाई और रणबाघके युद्धकी व्यवस्था करनेपर संभव है शहशाहका ध्यान बँटाया जा सके।"

हवाई पराजित व हत सेनापति हेमूकी सवारीमें था। संभव है उसके रणकौशलसे अकबरको उस गौरवपूर्ण और खूँख्वार युद्धका स्मरण हो आये, जिसे जीतकर ही उसने अपने पूर्वजोंका स्वप्न पूर्ण किया था। आज वही साम्राज्य वह अपनी भावनाओंसे लुटाने जा रहा था। प्रस्तावका सहर्ष स्वागत हुआ।

इससे पहले कि अकबर अपनी दी गई आज्ञाओंके बारेमें सचेत हो, महावतोंको युद्धका प्रबंध तुरंत करनेकी आज्ञा दी गई। हाथी किसी भी प्रकार युद्धसे मुँह न मोड़ें, स्थितिकी जटिलताके अनुसार यह चेतावनी भी उन्हें दे दी गई।

कुछ समय बाद अकबरको सूचना दी गई "हवाई मतवाला होकर अपने आप रणबाघसे लड़नेके लिए युद्धके घेरेमें पहुँच गया है।"

दोनों हाथी प्रसिद्ध व प्रकाण्ड योद्धा थे। उन्होंने अपनी इच्छासे ही युद्ध ठान लिया है, यह सु-समाचार कम उत्साहप्रद नहीं था। वह तेज़ीसे जीना उतरा और मंचकी दिशामें दौड़ा। राहमें ही उसे रोककर वज़ीरने अपना घोड़ा पेश किया।

लेकिन जोशसे भरा अकबर जिस समय मंच तक पहुँचा वहाँ और ही गुल खिला हुआ था। मंच ख़ाली था, भयानक शोर मचा हुआ था और कोई हाथीका बच्चा भी दिखाई नहीं पड़ रहा था।

चारों ओर देखकर अकबर चिल्लाया, "यहाँ क्या हो रहा है?"

घबराया हुआ शाही महावत बादशाहके निकट आया। "जहाँपनाह, गज़ब हो गया! हवाई भीषण रूपसे रणबाघका पीछा करता हुआ बस्तीमें घुस गया है।"

यह ख़बर सच थी। जो चीज़ छिपा ली गई थी वह यह कि महावतोंने, असफल हो जानेके भयसे, हाथियोंको मात्रासे बहुत अधिक मद्यपान करा दिया था।

सबके देखते-देखते अकबरका घोडा आगरा शहरकी ओर ओझल हो गया। सेवक और सैनिक, घुडसवार व दर्शक, बेतहाशा नगरकी ओर दौड़ पड़े।

वहाँकी दशा देखते ही लोगोंके प्राण कंठमें अटक गये। एक सैनिक हरमसराकी ओर समाचार लेकर दौडा। अकबर भयानक रूपसे नशेमें पागल रणबाघपर चढ गया था, और जो सामने आता उसे तोडता-फोडता हवाई हवाकी तेज़ीसे रणबाघका पीछा करता हुआ, बस्तीसे निकलकर जमना की ओर भागा जा रहा था।

जमनाके नावोंके बने कच्चे पुलपर दोनों मस्त हाथी आगे-पीछे दौड़ रहे थे। पुल टूटनेके लिए बुरी तरह झोंके खा रहा था। इधर-उधर सैकडों सैनिक आवश्यकता पडनेपर सहायताके लिए तेजीसे तैरकर धारा पार कर रहे थे। बहुत पीछेकी ओर भागती हुई, भीडके व्यक्तियोंकी ओटमें, शाही हरमसराकी चमकदार पीनसें झिलमला रही थीं।

फिर भारी शोर मचा। कोई चिल्लाया "हा! शाहंशाह रणबाघकी पीठपर से हवाईके माथेपर कूद गये हैं!"

स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि अकबर अपने प्राणोंपर खेल रहा था। वज़ीरका चेहरा फक पडा हुआ था। जिस उद्देश्यको लेकर इस अपूर्व रंजन-का आयोजन हुआ था, वह उसे कभीका भूल चुका था। अब क्या होगा—केवल यही एक बात उसके मस्तिष्कमें कौंध रही थी। तभी उसने आश्चर्य और प्रसन्नतासे उत्पन्न चीख बडे ज़ोरोंसे गलेसे बाहर निकालते हुए देखा कि संकट टल गया था।

हवाई काबूमें आ गया था और रणबाघको नशेमें भागनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझ रहा था।

शांत होकर स्थिर खडे हाथीके पास जाकर वज़ीरने शहंशाहसे प्रार्थना की कि अब वह नीचे उतर आएँ। प्रसन्न मनसे अकबर मस्त होता हुआ बोला

"खुदाने हमें बचा लिया !"

"जहाँपनाहने तो हम सबको बरबाद करनेमें कोई कसर नही छोडी थी !" वज़ीरने नम्रतासे उलाहना दिया।

"ओह !" अकबरने कहा, "हमने यह साहसिक चेष्टा इसलिए की थी कि खुदा अगर नही चाहता कि हम जीवित रहे, तो वह हमारे जीवनका अत कर दे। लेकिन खुदा वह नही चाहता, जो हम चाहते थे।"

वार्तालापसे अकबर फिर अपनी पूर्व मानसिक स्थितिकी ओर लौटता प्रतीत हो रहा था कि बुद्धिमान व्यक्तिने अवसर पकडा, "इसीलिए कि खुदा ज़िंदगीसे भागनेवालेको पनाह नही देता। समस्याओको दृढतासे हल करना ही व्यक्तिका कर्त्तव्य है। खुदा इसलिए जहाँपनाहकी जान लेना नही चाहता कि उसकी इच्छा कम-से-कम आधी सदी तक शहशाह सलामतकी हुकूमत हिंदुस्तानपर बरक़रार रखनेकी है।"

"शावाश ! तुम ठीक कहते हो।" अकबर जैसे समस्त द्वद्वसे छुटकारा पाते हुए उठा। वह लौटा, किंतु दीनताकी ओर नही, दृढताकी ओर। "लेकिन दा अम्मी ? आदमखाँ ?" केवल ये ही प्रश्न शेष थे जो उसके मुँहसे अनायास ही निकल पडे।

वज़ीरने शावाशी ग्रहण करनेके लिए गरदन झुकाई। "राजनीति वैयक्तिक भावनाओका खेल नही है, जहाँपनाह। व्यक्तियोका आकर चले जाना ही राजनीतिके लिए शुभ है।"

"अल्लाहो अकबर !" शाहशाहने प्रसन्नतासे नाद किया। "आदमखाँ-के लिए दी गई सभी शाही आज्ञाएँ वापस ले ली जाएँ। वह और दा माहम वैभव और विलासके साथ रहें। सल्तनतके उच्छृखल घोड़ेकी लगाम मावदौलत अपने हाथोमें लेंगे और तुम ऐ अक्लमद आदमी !" अकबर उस व्यक्तिकी ओर देखकर मुसकराया। "उस घोड़ेका सईस तुम्हे मुकर्रर किया जाता है।"

वज़ीरका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा। उसने झुककर विनय की, "जहाँपनाहकी जैसी इच्छा।"

आदमखाँने सवधिन आज्ञाएँ अभी आगे बढ़ाई ही नहीं गई थी। आज्ञाकारी सेवककी भाँति वह यह समाचार सुनानेके लिए पीछे निकटतर होती हुई पीनसोंकी ओर घोड़ा मोड़कर दौड़ गया।

इतिहासमें काबुलसे नये-नये आये इस व्यक्तिका परिचय शम्सुद्दीन खान अतगके नामसे दिया जाता है, जिसने अकबरके उपरोक्त निश्चयके बाद राजनीति, राजस्व तथा सेनाके विभाग, सर्वोच्च अधिकारी सदर-ए-सदरके पदसे, अपने हाथोंमे लिये।

× × ×

इसके बाद आदमखाँके पतनकी कहानी बहुत संक्षिप्त है।

अकबर द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री शम्सुद्दीन अतग अपने पदारोहणके पश्चात् लगभग सात महीने जीवित रहा। अपने अपमान और पतनसे क्षुब्ध आदमखाँ एक दिन अपने सैनिक लिये उसके विशाल कार्यालयमें घुस पड़ा और उसके आदरपूर्वक शुभागमन करते हुये शब्दोंकी परवा न करके उसने दो अनुचरोंको निश्चित इशारा किया। वह बचनेके लिए भागा और हत्या पर उतारू आदमखाँके सैनिक उसके पीछे दौड़े। बाहर दालानमे उन्होंने उस निरीह और शांत व्यक्तिके टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

अभी इससे भी बड़ी हत्या पर उतारू आदमखाँ साथ ही सटे हुए उस कक्षकी ओर बढ़ा, जहाँ अकबर सो रहा था।

अंगरक्षक प्रहरीने संकटका पूर्वाभास पाकर, अंदर घुसकर द्वारका मूसला ठोक लिया। शहंशाहको सोतेसे जगाकर दुर्घटनाकी विस्तृत सूचना दे दी गई।

दूसरे द्वारसे अकबर हाथमें तलवार लिये बाहर निकला। आदमखाँ नंगा खड्ग लिये हुए खड़ा था।

"यह क्या बदमाशी है !" अकबर चिल्लाया। "दा अम्मी क्या कहेगी, आदमखाँ ! छि छि ! इतना नीच कर्म ! हाथसे हथियार छोड़ दो।"

इस बार आदमखाँ अपने अब तक किये समस्त दुष्कृत्योंकी सीमा पार कर गया। उसने आगे बढ़कर अकबरका दायाँ हाथ थाम लिया।

मनमें छाई अगाध भूलभुलैयोंसे निकलनेके लिए किसी भारी विस्फोट की ज़रूरत होती है। अकबरने आगबबूला होकर अपने बाये हाथका घूँसा आदमखाँके मुँह पर मारा। वह अचेत होकर भूमि पर लोट गया।

"इस आदमीको अभी बाँधकर अटारीसे नीचे गिरा दो!" उसने चिल्लाकर पास खड़े सैनिकोंको आज्ञा दी।

सैनिक आदमखाँके साथ आये थे। उन्होने ठिठकते हुए आदमखाँको उठाया कि फिर शहशाहकी गरज सुनाई पड़ी "जल्दी करो!"

आदमखाँको बाँधकर अटारीसे नीचे फेक दिया गया। निश्चिन्त होनेके लिए अकबरने उसे उठवाकर मँगवाया। सेवकोंकी हिचकिचाहटके कारण वह अभी तक सिसक रहा था।

"दोबारा गिराओ!" अकबरने आज्ञा दी। "इस बार सिर नीचेकी ओर करके—जल्दी करो!"

और इस बार आदमखाँका भेजा टुकडे-टुकडे होकर छितरा गया।

अपनी आँखोंमे आदमखाँका सपूर्ण अत देखकर अकबर अपने मानसमे बच रही शेष हलचलकी पात्रीके सम्मुख उपस्थित होनेके लिए हरमसराकी ओर चला। धीमे पगोंसे जाकर वह त्रस्त व रोगिणी माहमके छपरखटके निकट अपराधीकी मुद्रामे खडा हो गया।

माहम तक पहले ही कुछ भनक पहुँच चुकी थी। उसने अकबरकी आँखोमें अपनी बुझीसी आँखें डालते हुए पूछा, "क्या बात हुई? आदमखाँ-ने कुछ किया है?"

अस्पष्ट भावसे अकबरने बताया, "कुछ नहीं, दा अम्मी—आदमखाँने हमारे एक मंत्रीको मार डाला है। हमने उसे सज़ा दे दी।"

"आपने ठीक किया" माहम कराहती हुई बोली।

बादमें माहमके सिरपर उस समय हज़ारों घूँसोंकी चोट लगी, जब उसे दुर्घटनाका पूर्ण वृत्तान्त ज्ञात हुआ। "कैसे ?" वह चिल्लाई। "अरे, आदमखाँ कैसे मर गया ?" उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसका लंबातड़गा युवा पुत्र, हिंदुस्तानके शहंशाह अकबरका धाय-भाई, अकाल मृत्युका भागी बन सकता था।

"हमें पता नहीं, बेगम साहबा," सूचना देने वालोंने कहा। "किंतु उसका मुँह किसी मुग्दरकी चोटसे सूजा हुआ था।" यह निशान अकबरके घूँसेका था, जिसका पता माहमको कभी नहीं चल सका। जाँच पड़ताल करनेकी शक्ति उसमें शेष नहीं थी।

वह ऊपरसे शांत हो गई, किंतु उसके हृदयकी अग्निने उसे फिर केवल चालीस दिन जीनेकी अनुमति दी। इसके बाद अकबर इस अतीव दृढ मानुषिक उलझनसे सदैवके लिए स्वतंत्र हो गया।

कुतुबमीनारके सामने एक भव्य भवन बनवाकर माहम अनगको उसके पुत्रके पास दफ़ना दिया गया। इस इमारतका अस्तित्व आज भी अकबरके मनकी उस महती उलझनकी कहानी बड़े मार्मिक ढंगसे सुना रहा है।



पानका ग़ुलाम

व्यक्ति कभी-कभी अपनी छायासे भी डरने लगता है। इसे केवल कायरता कहनेसे काम नही चल सकता। अवसर आते हैं जब वह मजबूर हो जाता है, भागता है, किन्तु छाया कही पीछा छोडती है।

आगरेके किलेके शाही बुर्जपर एक सुन्दर स्तंभके सहारे खडा अकबर यमुनाका सुन्दर दृश्य देख रहा था। अकेला अविश्रांत अकबर, उसके गत जीवनकी उथल-पुथल मानो यमुनाके जलमे प्रतिबिंबित हो रही थी। दूर-दूरतक शाही महलोकी मीनारें दिखाई दे रही थी। शाही मस्जिदका ऊँचा गुम्बद, स्थिर और चुपचाप, अपना सिर विजेताकी भाँति उठाये खडा था और उसका सौंदर्य उसकी गोल चिकनाई पर चाँदनीकी आभा के साथ रह-रहकर फिसला पड़ता था। अकबरसे दूर, पीछेकी ओर, गुलाम भाला कंधेपर रखे आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहा था।

अकबरने पुकारा, "पान!"

गुलामने एक और गुलामको मुंहपर अँगुलियाँ ले जाकर इशारा किया।

थोड़ी देरमें सोनेकी तश्तरी दोनो हाथोंपर रखकर गुलामने प्रस्तुत की। ढक्कन उलटकर अकबरने एकबार बीडेकी ओर देखा, फिर गुलामके मुँहकी ओर।

सहमकर गुलामने विनय की, "जहाँपनाह, पानके गुलामका देहांत हो जानेके कारण प्रधान बेगमने यह बीडा स्वयं अपने हाथो बनाया है।"

अकबरने बीड़ा ले लिया। आज्ञा हुई, "पानका गुलाम जल्दी नियुक्त किया जाय।"

गुलामने सिर झुका लिया और आदरसे पीछे हट गया।

× × ×

खानसामाने चाल चलनेके लिए पत्ता ऊपर उठाया। गुलाम सादिकने चेतावनी दी, "खबरदार, खानसामा, बादशाहको कष्ट न दीजिए, मैं इक्का मारूँगा।"

घड़ियाँ गुज़र गई थी। दस्तरखानका भारी काम खतम हो चुका था और दास-दासियाँ निश्चिंत होकर आमोद-प्रमोदमें लीन थे। अकबरके शयनकक्षसे एक आवाज़के फासलेपर, तिदरीमें बैठे, खाने-पीने और घरेलू कामकाजके प्रधान दारोगा, खानसामा, अपने नीचे काम करनेवाले गुलाम सादिकके साथ गंजीफा खेल रहे थे।

गुलाम सादिकने अपनी चेतावनीके प्रमाणस्वरूप पानका इक्का उलटकर खानसामाको दिखा दिया। खानसामाने कहा, "अबे, तेरे बापदादोंने भी कभी गंजीफा खेला है? दुश्मनको पहले ही खबरदार करता है!"

गुलाम सादिक हँसा। "खानसामा, मेरा बाप पनवाड़ी था। लोग पान खाने आते थे, तो उसे गंजीफेकी अजीब चाल चलते देख वहींपर ठहर जाते थे। 'गंजीफेका राजा' उसका नाम मशहूर हो चुका था। चाहता तो बिना पान ढोये भी वह ऐश करता और लोग शागिर्द बन-बनकर उसके दरवाज़ेपर अपनी क़ब्रें खुदवा लेते आपने क्या चला?"

"और बेटा ऐसा कि पहले ही खबर दे रहा है—'बादशाह न चलिए, मेरे पास इक्का है!'" खानसामाने पत्ता चला।

"उस्ताद, बादशाह खुदाका प्रतिनिधि होता है। उसकी पदवी पवित्र है। यह बात दिमागमें रखते हुए भी मेरा बाप गंजीफ़ेमें उस्तादोंके छक्के छुड़ा देता था अरे, आपने आखिर बादशाह ही चला!" सादिकने इक्का दे मारा।

खानसामा एक बार चौंके। "अबे, तेरा बाप तो पनवाड़ी था!"

"और मैं आपसे इतनी देरसे कह क्या रहा था?" सादिकने कहा।

"तो तू पान बनाना जानता होगा?" खानसामाने पूछा।

"अमीरोंके बीड़े अब्बा मुझसे ही लगवाते थे . और यह रहा पानका गुलाम। तुरुप सब निकल चुकी हैं, बेगम मेरे पास है। गुलाम बेश है।" सादिकने पानका गुलाम सामने रख दिया।

"जियो !" खानसामाने कहा, "हम तुम्हे वादशाह सलामतके खास-उल-खास पानके गुलामकी जगह नियत करते है ।"

अकवरके शयनकक्षके वाहरसे प्रहरीकी पुकार हुई, "पान !"

खानसामाने कहा, "फौरन वीडा ले जाओ, सादिक । इस वक्त जहाँपनाह एकातमें है । कुछ न मरोगे ।"

पानका वीडा वनाकर, सादिक सोनेकी तश्तरी लेकर चला गया । लौटकर आया, तो उसके हाथमे चमचमाते सोनेकी एक अशरफी थी । उसने खानसामाको आह्लादसे वह अशरफी दिखाई ।

खानसामाने कहा, "मुवारक हो ! वैठो, मैं चाल चलता हूँ ।" पानके गुलामके ऊपर खानसामाने तुरपका इक्का चल दिया ।

सादिक आँखे फाडे उसे देखता रह गया । घटना वहुत साधारण थी । लेकिन उसका वाप इन्ही चालोसे सट्टेके हिदसे वता दिया करता था । पानके गुलामके ऊपर खानसामाका तुरपका इक्का ! कही यह साधारण घटना सत्यमें परिवर्तित न हो जाए !

उसने वने हुए हाथोकी गड्डीकी ओर देखा । वह ठीक मालूम हो रही थी । खानसामाके ऊपर सदेहात्मक दृष्टि डाली । उनकी आँखे चमक रही थी । सादिक वहुत देरतक इसे केवल वहम समझकर टालनेका प्रयत्न करता रहा । उसके मनमे भय वैठता जा रहा था । उसकी नई नियुक्तिका यह प्रारभ किसी प्रकार भी शुभ नही था ।

× × ×

"दीनेइलाही—हूँ !" आगरेके माने हुए वडे मौलवी, जिनके नामका भी वहुतोको पता नही था, मस्जिदकी वारहदरीमे चहकते हुए घूम रहे थे । उनके सामने एक तरफ खानसामा मृत-प्राय से वैठे थे । मौलवी साहवने फिर कहा, "शहशाहका दिमाग खराव हो गया है । इतने वडे पापीको नरकमें भी जगह मिल सकेगी मुझे इसमें सदेह है । इस पापको खतम करना ही खुदाके हुजूरमें सवसे वड़ा पुण्य है ।"

"मुझे जो आज्ञा हो ?" खानसामाने मन-ही-मन अल्लाहको याद किया ।

मौलवी साहबने अभी और गह दी, "जानते हो क्या होगा ? मस्जिदों-को आनेवाली भारी शाही खैरात बंद हो जायगी। मौलवी और विद्वान् खुदाकी पूजासे विरक्त होकर सड़कोंकी धूल चाटा करेंगे। ज़रा कल्पनासे काम लो। स्वार्थी होकर यह पवित्र व्यक्ति पूजाके लिए नियत खुदाके पवित्र नामका वास्ता देकर भीख माँगा करेंगे। ओह, मैं तो इसका विचार तक नहीं कर सकता।"

खानसामाके रोंगटे खड़े हो गये। वह फिर विनयसे बोले, "मुझे जो आज्ञा हो .."

बीचमें ही बात काटकर मौलवी साहबने नुस्खा छाँट दिया, "सिर्फ एक इलाज है—किसी भी सूरतसे पापीको ज़हर .."

खानसामा सिहर गये। "लेकिन यह मैं कैसे कर सकता हूँ! ड्योढ़ी-वान एक-एक चीज़ चीखकर बावरचीखानेमें जाने देता है। घुसनेसे पहले हर छोटे-बड़ेकी तलाशी होती है। शाही दस्तरखान तैयार होनेपर मेरी ज़िम्मेदारी है कि मैं उसकी एक-एक चीज़ पहले अपनी ज़बानपर रखूँ और तबतक उसका पहरा देता रहूँ जबतक कि जहाँपनाह सैंकड़ों दरबारियोंके साथ तशरीफ लाकर उसे हज़्म तक नहीं कर लेते? कुछ भी होनेसे पहले स्वयं मेरी जानको खतरा है। जब मैं ही मर जाऊँगा, तो आप ही बताएँ, खुदावंद, मैं पुण्य किसके लिए कमाऊँ?"

"पानके बीड़ोंपर जो गुलाम नियत किया हुआ था, सुना है उसका देहांत हो गया?" मौलवी साहबने अर्थपूर्ण दृष्टिसे खानसामाको ताकते हुए पूछा।

"जी, हाँ," खानसामाने उत्तर दिया। "उसकी जगह जो दूसरा नियत हुआ है, वह कमबख्त गजीफे तकके बादशाहको खुदाका प्रतिनिधि समझता है।"

"क्या बकते हो!" मौलवी साहबने चहल-क़दमी छोड़कर गरजते हुए कहा। "ख़ुदाके प्रतिनिधि हम हैं कि वह नाशवान् दुनियाका नाचीज़ बादशाह? ऐ दो दुनियाके मालिक, मुझे पापको सुननेकी शक्ति दे।"

खानसामाने फिर हाथ जोडकर झुकते हुए कहा, "हजरत, मुझे आपकी पदवीसे आपत्ति नही है। मैं उस पापीका भीतरी हुलिया बयान कर रहा हूँ।"

मौलवी साहब कुछ देरतक चहल-कदमी करते रहे। फिर उन्होने धीमेसे कहा, "सुनो, हकीम साहबने हमे यह चूर्ण प्रदान किया है। तुम इसे चखकर देखो।"

खानसामा उनके पैरोपर गिर पडे। मौलवी साहब हँसे। "नही, नही, इस समय यह बिलकुल निर्दोष है। यह हमारे पवित्र हाथोंसे छुआ गया है।"

खानसामाने डरते हुए उसकी एक चुटकी चखी। फिर बोले, "चूना है, लेकिन मुँह नही काटता।"

"हूँ! यह हलाहल विष है," मौलवी साहबने कहा। "इतनी-सी देरमें तो यह दस आदमियोको शैतानके घर भेज देता, अगर इसमे मोतियोका चूरा भी मिला होता। तुम इसे महलमें ले जा सकते हो। ड्योढीवान इसे पहचानेगा भी नही। पकडा जानेपर भी यह जहर साबित नही होगा। अवसर मिलनेपर चुपकेसे वहाँ तुम इसमें मोतियोका चूरा मिला देना।"

इस चमत्कारके आगे खानसामाने घुटने टेक दिये।

× × ×

दीनेइलाहीके प्रवर्त्तकके पानोके लिए मोती पीसे जा रहे थे। सादिकने पीसते-पीसते इस ओर ध्यानसे देखते हुए खानसामासे कहा, "खानसामा, क्या अजीब चीज़ है! पहले-पहल जब अब्बाने कहा था कि शाही पानोमें चूनेकी जगह मोती इस्तेमाल होते हैं, तो यकीन तक न हुआ था। लेकिन बादमें नवाबोके लिए मैंने ऐसे कितने ही बीडे बनाये थे। एक बार किसीने मोतियोमे ज़हर मिला दिया। लेकिन, उस्ताद, कसमसे कहता हूँ कि मोती सब ज़हर खुद पी गये और खानेवालेको आँच तक न आई। ए लो, बादशाह सलामतकी पुकार हुई! खानसामा, ज़रा देखते रहिए। मैं अभी आया।"

खानसामा हँसे। सादिक चला गया। खानसामाने उसके छोड़े हुए कामको ज़रा देखा ही नहीं, कुछ किया भी।

दोपहरको दस्तरखानपर कुछ रत्नोंके साथ बैठे बादशाह अकबरने निवाला चबाते-चबाते अब्बुलफ़ज़लकी ओर मुँह करके अपनी आदतके अनुसार बात छेड़ी, "हमारा विचार है, फज़ल साहब, धर्मसे उकताये हुए लोग बहुत जल्दी इस नई विचार-धारा दीनेइलाहीका स्वागत करेंगे।"

अब्बुलफज़लने हाथ रोककर विनय की, "धृष्टता क्षमा करें, जहाँपनाह। वास्तवमें बात यह है कि कभी-कभी दूसरोंके विचारोंमें हम अपने विचारोंकी छाया देखने लगते हैं। विचार केवल एक दर्पण है, जहाँ अपनी इच्छाके अनुसार अच्छाई या बुराई दिखाई देती है। संभव है, आलीजाहकी इच्छाएँ दूसरोंके विचारोंमें अपने ही विचारोंकी छाया देख रही हों।"

अकबर उछल पड़ा। "अभी बिलकुल ठीक-ठीक नहीं समझ सके हम। मगर फज़ल साहब, आपने कोई गहरी बात कही है। मावदौलत इसपर गौर करेंगे। बीरबल साहब क्या कहते हैं?"

बीरबल साहब आज बेमौके पकड़े गये थे। शाही दस्तरख़ानके गोश्त और हड्डियोंमें ब्राह्मणके पूतके लिए कोई रस नहीं था और उन्हें बेमतलब दूसरोंका खानापीना देखकर अंदर-ही-अंदर दाँत पीसने पड़ रहे थे। जले-भुने तो थे ही और कबाब हो गये। बोले, "जी हाँ, यह अकिंचन भी देख रहा है कि इस समय जहाँपनाहके विचारोंमें फज़ल साहब अपने विचारोंका रूप नहीं देख रहे हैं और मुझ नाचीज़का विचार तो आलीजाह के विचारके एकदम प्रतिरूप है।"

बीरबलने यह प्रकट नहीं किया कि उसका विचार अकबरके पहले विचार के प्रतिरूप है या फज़ल साहबको दाद देनेके विचारके। बीरबलको तो दुरंगी बात कहनेकी आदत थी। अब्बुलफज़ल इसे समझकर कुढ़ गये और बादशाह खिल उठे। "बहुत खूब! वाह! क्या 'रूप' का प्रयोग किया है! क्या शिष्ट और दोहरी चोट दी है! बीरबल साहब पुरस्कारके पात्र हैं।"

इंगित पाते ही मीरखज़ानाने हज़ार अशरफ़ी बीरबलको भेंट की। वास्तविक पात्र अब्बुलफ़जल थे। इसलिए वह खिसिया कर हँस दिये। उनके हास्यका तात्पर्य समझकर बादशाहने फिर मीरखजानाको संकेत किया।

इसी बीच एक कांड हो गया। पानका गुलाम देरसे पानोंकी तश्तरी लिये मानो एक पैरसे खड़ा था। दस्तरख़ान करीब-करीब उठ चुका था कि एक लौंडी दौड़ती हुई आई और खानसामाके कानमें धीरेसे बोली, "प्रधान बेगमने फरमाया है कि मोतियोंके चूरेको दो चींटियाँ सूँघकर मर गईं। उन्हें चूनेपर शक है।"

खानसामा चिहुँके। एकबार उन्होंने कड़ी दृष्टिसे लौंडीकी ओर देखा, लेकिन तुरन्त ही खानेखानमका ध्यान आते ही उन्होंने स्थितिकी गंभीरताको समझ लिया। विपत्ति उनके ऊपर घहराया ही चाहती थी। गुलाम सादिक अपने बचावके लिए बहुत कुछ कहेगा और प्रकट था कि वह अपनी बुद्धिपर भी ज़ोर देगा।

पानके गुलामको जिस तुरपके इक्केसे आशंका हुई थी, वह गंजीफेमें बंद हो गया था। लेकिन अब जो तुरपका इक्का खानसामाने फेंका, वह उसे न देख सका।

खानसामाने चिल्लाकर कहा, "ऐ पानके गुलाम, मैं तुझे हुक्म देता हूँ कि जो बीड़ा तू बादशाह सलामतके लिए अपने हाथों बनाकर लाया है, उसे खुद खाकर दिखा।"

गुलामने इसका मतलब न समझकर, एकदम चौंकते हुए, पहले क्रोधसे लाल हुए खानसामाकी ओर देखा, फिर भौंचक्केसे खड़े हुए बादशाह, अब्बुलफज़ल और बीरबलकी ओर। एकाएक किसीके बोलनेसे पहले फिर खानसामाकी आवाज़ गूंजी, "फौरन हुक्म पूरा कर।"

बीरबल चिल्लाये, "मुझे इसमें आपत्ति है।" लेकिन इससे पहले ही गुलाम बीड़ा चबा चुका था। उसने इस आज्ञाका मर्म कुछ-कुछ समझते हुए एक बार बादशाह की ओर करुण और जिज्ञासाभरी दृष्टिसे ताका।

तत्क्षण ही उसका वदन ऐंठने लगा। उसकी शून्य दृष्टि फिर खानसामाकी दृष्टिसे मिली और उसके मुँहसे सहसा निकला, "तुरपका इक्का!"

"यह क्या बदतमीजी है!" बादशाहने खानसामाकी तरफ देखकर पूछा और गुलामके नजदीक आ गये। गुलाम सादिककी वहीं दृष्टि बादशाहकी दृष्टिसे मिली और उसने करुणाकी सजीव मूर्ति बने अंतिम बार केवल इतना कहा, "अपराधीको एक बार सफाईका मौका भी न दिया!"

पानका गुलाम तुरपके इक्केसे सदाके लिए मिट चुका था।

× × ×

हल्दी घाटीकी विभीषिकाको गुजरे बहुत दिन नहीं हुए थे और अकबर के सामने कलम और तूलिकासे चित्रित उसके सैकड़ो चित्र अबतक पेश हो चुके थे। वह बादशाह, जिसके आदेशपर लाखो जानें सदा टगी रहती थीं, आज एक अदना गुलामके इन अंतिम शब्दोंसे मर्माहत हो उठा था 'अपराधीको एक बार सफाईका मौका भी न दिया!'

दूसरी ओर, मरते हुए गुलामके मुँहसे निकले पहले शब्दो 'तुरपका इक्का' को लेकर बीरबलने उसके सामने एक काफी लंबा-चौडा ख्याली महल खडा कर दिया था। उसका कहना था कि जरूर इस तुरपके इक्केमे कुछ रहस्य है—खानसामाको क्या हक था कि उन्होंने अपने-आप गुलामका कसूर मानकर, बादशाहके सामने ही, उसकी मौतका परवाना दे दिया? न्याय करना काजी और बादशाहका काम है, न कि एक खानगी ओहदेदार का।

बीरबलकी उक्तिपर अकबरने कहा, "मावदौलत यह कैसे स्वीकार कर लें कि जो इतने दिनोसे मावदौलतको इतने लजीज खाने चखा रहा है, ऐसा करनेमें उसका कोई बुरा इरादा था? बिना बात साफ हुए इस तरह गुलामके मर जानेका हमें बेहद अफसोस है! खासकर उसके अंतिम शब्दोंने तो जैसे हमारे दिलपर घूँसा मारा हो। खुदा जानता है कि मावदौलत इस दुर्घटनाको बहुत दिनोंतक नहीं भूल सकेंगे। लेकिन

खानसामाने जो कुछ किया, हमारी वफादारीके पक्षमे । इतने लज़ीज़ खाने बनानेवाला विश्वासपात्र व्यक्ति जल्दी नही मिलता ।"

अकबरके ऊपर बीरबलने आखिरी नुकता कसा, "मालूम होता है, फज़ल साहबने ठीक ही कहा था ।"

बादशाह हँसे । "बीरबल साहब, हम तुम्हारे इस नुकतेकी कद्र करते है । लेकिन इस बात पर क्योकि हमारा ग़ौर-ओ-खोज चल रहा है, इसलिए निर्णय तक तुम्हारा यह नुकता मावदौलतकी नज़रमें रहेगा । सदेहका लाभ हमारे खानसामाको पहुँचेगा ।"

× × ×

अकबरका गुण था कि वह जब एक बातके पीछे पड़ जाता था, उसको इधर या उधर किये बिना न छोड़ता था । अब्बुलफज़लकी बात उसके मनमें गहरी बैठ गई थी "कभी-कभी दूसरोके विचारोमे हम अपने विचारोकी छाया देखने लगते है । विचार केवल एक दर्पण है, जहाँ अपनी इच्छाके अनुसार अच्छाई या बुराई दिखाई देती है ।" ऐसा न हो कि अकबर लोगोके विचारोमे अपने विचारोका प्रतिबिंब देख रहा हो, और जो उसकी इच्छा है उसे ही लोगोकी इच्छा समझकर वह दीनेइलाहीको उनके ऊपर थोप दे । ऐसा दर्शन मुरदा होगा या अपने चलानेवालेसे पहले ही मर जायगा ।

अकबर वेश बदलकर, रात-बिरात बाहर निकलकर रिआयामे उठता-बैठता, नौकरो-चाकरोमे घूमता और उनसे उसे अजीब-अजीब बाते सुननेको मिलती ।

खानसामा अलग चक्करमें थे । वह जानते थे कि अकबर बडा रहस्य-मय व्यक्ति है । भला, कमबख्तको बीरबलके इस नुकतेको आगे सोचनेके लिए उठा रखनेकी क्या आवश्यकता थी ? दूसरे शब्दोमे बीरबलने साफ कह दिया था कि आप क्योकि खानसामाके बनाये खानोकी सुगधिके प्रभावमे है और आपकी इच्छा यह है कि खानसामाको निरपराध होना ही चाहिए, इसलिए—अब्बुलफज़लके विचारके अनुसार—आपकी इच्छा उसके अपराधी

होनेके विचार पर छाई रहती है। बादशाह इस बातको ज्यों-की-त्यों समझ चुके हैं और आजकल जो इतनी महत्त्वपूर्ण घटना पर कोई भेदिया काम नहीं कर रहा है, इसका अवश्य कोई कारण है। हो न हो, इस तरह वह बीरबलके नुकते को ही सोचते रहते हैं। बुरा हो इन दार्शनिकोंका, जो केवल एक बातसे वातावरणको एकदम बदल देते हैं-।

इसके बाद खानसामा प्राय कुछ सोचतेसे बैठे रह जाते। उन्हे बार-बार अकबरके पास रहनेवाली उस मशहूर और मनहूस सदूकचीका ध्यान आ जाता, जिसमे एक तरफ हलाहल ज़हरभरी, बादाम और शहदकी बनी मीठी गोलियाँ और दूसरी ओर सादी सुगंधिसे तर मिठाई रखी रहती है। जिसपर वह बहुत प्रसन्न होता है उसके सामने सादी ओरसे मिठाई प्रस्तुत करता है, और वह अकबरकी असीम कृपाका पात्र हो जाता है। जल्दी ही ऐसे व्यक्तिका रुतबा पंचहज़ारीतक बढ़ जानेकी उम्मीद होती है। जिसपर वह नाराज़ होता है उसे वह दूसरी तरफसे वही सदूकची पेश करता है, और क्योंकि वह अकबरकी पेश की हुई मिठाईको ग्रहण करनेसे इनकार नहीं कर सकता, इसलिए, तत्क्षण ही उसका मुँह खुशबू और झागोंसे भर जाता है। खानसामाने ऐसे कितने ही व्यक्तियोंको घर जाकर, शाही लिबास उतारते-न-उतारते, बुरी तरह तड़प-तड़पकर मरते देखा था। जब-जब उन्हें अकबरके सामने जानेका इत्तफाक होता, उनकी निगाह अदबदाकर उस संदूकचीकी ओर उठ जाती, जिसमें मौत और ज़िन्दगी एक साथ बैठी हँसती रहती है।

ओफ! अकबर उसकी तरफ कैसे देखता है! दस्तरखानकी आधी चीज़ें आजकल उसकी लापरवाहीसे बिना चखे पहुँच जाती है। खाना चखते-चखते बादशाह सलामत कई बार असाधारण रूपसे उसकी तरफ नज़रें फेंककर नापसंद चीज़ें एक तरफ सरका चुके हैं। उनकी नज़रोंमें क्या होता है? मानो कह रही हो, 'हम सब समझते हैं! हम अब्बुलफज़लके विचारके महत्त्वको भी जान चुके हैं। हमने बीरबलके नुकतेकी गहराईको भी नाप लिया है। हम जल्दी ही उस सदूकचीसे तुम्हें मिठाई पेश क गे!

इसके बाद बादशाह निवाला हाथमे लिये, किसी मुसाहबकी बातोपर हँस पड़ते और खानसामाको अनुभव होता मानो वह उनके सामने वही सदूकची खोलते हुए यह सोच कर हँस रहे है कि शायद खानसामाको यह खुशफ़हमी हो कि जल्दी ही उन्हें पचहज़ारीका बड़ा रुतबा मिलनेवाला है। शायद इन्हे यह पता नही कि इस सदूकचीमे से मौतका शैतान उठकर इनका गला दबोच लेगा और अपने गुनाहके कारण उस वक्त इनमे इतनी ताकत भी न होगी कि यह उसकी कसती हुई उंगलियोको हटानेके लिए अपने गुनहगार हाथोको ज़रा जुम्बिश भी दे सके।

वह सिहरकर चौंक उठते और कभी-कभी ऐसा तब भी होता, जबकि बादशाह कुछ हुक्म दे चुके होते और वह उसे पूरा करना तो दूर, सुन तक न पाते। अकबर पूछता, "क्या पानके गुलामके मरनेका तुम्हें भी इतना ही रज है? क्या तुम्हारे दिलपर भी उसके अतिम शब्दोने कुछ असर किया है? कोई बात नही, यह कुदरती भी है।"

ओह! अकबरकी ये बाते दुरगी है। आजतक क्या कोई अकबरके दिलको समझ सका है? वह मीठी छुरी मारता है। अभी पिछले दिनो मेहरुन्निसाके मामलेमें सलीमको कैसा छकाया! फिर खानसामा किस गिनतीमें है!

बावरचीखानेका मुलाहज़ा करते वक्त बादशाह कभी-कभी पूछ बैठते, "पानके गुलामकी जगहके लिए कोई विश्वसनीय आदमी मिला?" कभी घूमते-घूमते वहाँ रुक जाते, जहाँ गुलाम मरकर गिरा था और खानसामाकी आँखोमें आँखे डालकर पूछते, "क्यो, खानसामा, कैसी बेगुनाही उस गरीबकी आँखोंसे झलक रही थी! लेकिन सवाल उठता है कि आखिर किसने यह काम किया और कैसे?" कभी चलते-चलते पूछ बैठते, "क्यो, खानसामा, नौकरो और गुलामोको तग करना तो बेमाने होगा?"

खानसामा इस उत्तर देनेकी ज़िल्लतसे तग आ गये थे। आखिर यह

मक्कार वादशाह साफ-साफ क्यों नहीं कह देता कि 'पानके गुलामके हत्यारे तुम और सिर्फ तुम हो ! तुमने मावदौलतको जहरसे हलाक करनेकी कोशिश की थी ।' फिर अपनी सदूकची खोलते हुए कह दे कि 'मावदौलत नहीं चाहते कि खानसामाका यह शरमनाक गुनाह दुनियाके सामने खुले, इसलिए तुम इसमेसे एक मिठाई उठाकर उसका लुत्फ लो !'

खाना चखते समय वह कितनी ही बार लौंडियों द्वारा झकझोर कर चेतन किये जा चुके हैं "खानसामा, दस्तरखानको देर हो रही है।"

कुछ दिनोंमें ही खानसामा झटक गये । अकबरने उन्हें देखकर कहा, "खानसामा, तुम्हारा चेहरा पीला पड़ गया है । कुछ बीमार मालूम पड़ते हो । तुम्हें फुरसतकी जरूरत है । " और खानसामाने सुना, "कुछ तैयार मालूम पड़ते हो । तुम्हे इस दुनियासे रुखसतकी ज़रूरत है !"

वह वेवकूफ छोकरा मरते-मरते भी तुरपका इक्का न भूला । अकवर आजकल असाधारण तौरसे वावरचीखानेमें कभी भी टपक पडता है । मन वहलानेके लिए गजीफा खेलते हुए खानसामा यह जान भी न पाते कि कव दास-दासियाँ आदरसे दम-ब-खुद हो जाती हैं और खानसामाके पीछेसे अकवर कह उठता है, "खानसामा, वुरे फँसे ! तुम्हारा तुरपका इक्का कहाँ गया ?"

खानसामा ऐसे मौके पर वुरी तरह डर जाते । उनसे ठीक तरह आदर भी नहीं हो पाता । ये हरकतें वादशाहकी निगाहोंसे छिपानेमें उन्हें वहुत मुश्किल उठानी पडती । अब अकवरकी यह वच्चों जैसी हरकतें वरदाश्तसे वाहर हो चुकी थीं । आखिर इतनी वडी हकूमतके वादशाहको गुलामों और नौकरोंके मुँह लगनेकी क्या ज़रूरत है ? जहन्नुममें जाएँ मौलवी साहव और दीनेइलाही !

× × ×

"वडी अजीव-अजीव वातें देखनेमे आईं," अकवरने दीवानखासमे वैठे हुए अव्वुलफज़लसे कहा । "लोग जहाँ एक तरफ दीनेइलाहीसे नफरत

ज़ाहिर करते हैं, वहाँ प्रतिनिधि चुन-चुनकर मावदौलतके हुजूरमें भेजनेकी कोशिश भी करते हैं, ताकि वे इस नये मज़हबमें अपने-अपने मज़हबकी ज्यादा-से-ज्यादा बातें दाखिल करा सकें। हम मानते है कि हमे आपकी बातका पूरा सबूत नही मिला, फजल साहब, हालाँकि हमे इसका यकीन है।"

लौंडीने दौड़कर आते ही विनय की, "जहाँपनाह, खानसामा ज़हरसे हलाक हो गये है।"

बादशाह और दूसरे अमीरउमरा उधर लपके। तिदरीमे खानसामा एक कोनेमे उठँगे पड़े थे। आँखें भयसे खुली हुई थी। उनके पास एक चूर्ण की पुडिया थी, जो खुली हुई थी। पान बनानेके लिए शायद उन्होने मरते-मरते सोनेका शाही पानदान भी खोला था, लेकिन पान उसपर नही था। मोतियोके चूरेकी कुल्हियाँ खुली हुई थीं। पासमें पानीसे आधा भरा हुआ चाँदीका गिलास रखा हुआ था। सबसे आश्चर्यकी बात थी कि गजीफा चारो ओर इस तरह छितरा हुआ पडा था मानो खानसामाने अतिम समयमें उसमे भयकर द्वद्व किया हो।

उस पुडियाके चूर्णको दूधमें घोलकर एक कुत्तेको पिलाया गया, ताकि यह निश्चय हो सके कि खानसामाने खुदकशी तो नही की थी। कुत्ता सब दूध पीकर भी पूँछ हिलाता रहा।

बादशाहने तड़पकर कहा, "आखिर कौन है वह, जिसने मावदौलतके दो ज़ानगी ओहदेदारोकी जान ली?"

"मावदौलत नाचीजकी उस बात पर फिर एक बार गौर करें," दो पत्तोके ऊपरसे मृत खानसामाकी खुली हथेलीको हटाते हुए अब्बुलफजलने अर्ज़ की।

तुरुपके इक्केपर पानका गुलाम, मानो प्रतिशोधकी मुद्रामे, विजयकी प्रसन्नतासे मुसकरा रहा था।
